मृ ग या

लेखक
श्री श्रीनन्दन

भूमिका
राय कृष्णदास जी
निदेशक, भारतकला भवन
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

चौखम्भा ओरियन्टालिया
प्राच्यविद्या तथा दुर्लभ ग्रन्थों के प्रकाशक एवं विक्रेता
वाराणसी दिल्ली

प्रकाशक

चौखम्भा ओरियन्टालिया

पो० आ० चौखम्भा, पो० बाक्स नं० ३२
गोकुल भवन, के. ३७/१०९, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी–२२१००१ (भारत)
टेलीफोन : ६३०२२ टेलीग्राम : गोकुलोत्सव
शाखा—बंगलो रोड, ९ यू० बी० जवाहर नगर
दिल्ली–११०००७

प्रथम संस्करण १९७७
मूल्य रु० ४०–००

अन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्भा विश्वभारती

चौक (चित्रा सिनेमा के सामने)
वाराणसी
फोन : ६५४४४

मुद्रक—श्रीगोकुल मुद्रणालय, गोपाल मन्दिर लेन, वाराणसी

MṚGAYĀ

A monograph on art of hunting
Full of daring & interesting experiences

By

ŚRĪNANDAN

Introduction By

RAI KRISHNADAS
Director, Bharat Kala Bhavan
Banaras Hindu University, Varanasi

CHAUKHAMBHA ORIENTALIA
A House of Oriental and Antiquarian Books
VARANASI DELHI

Publishers

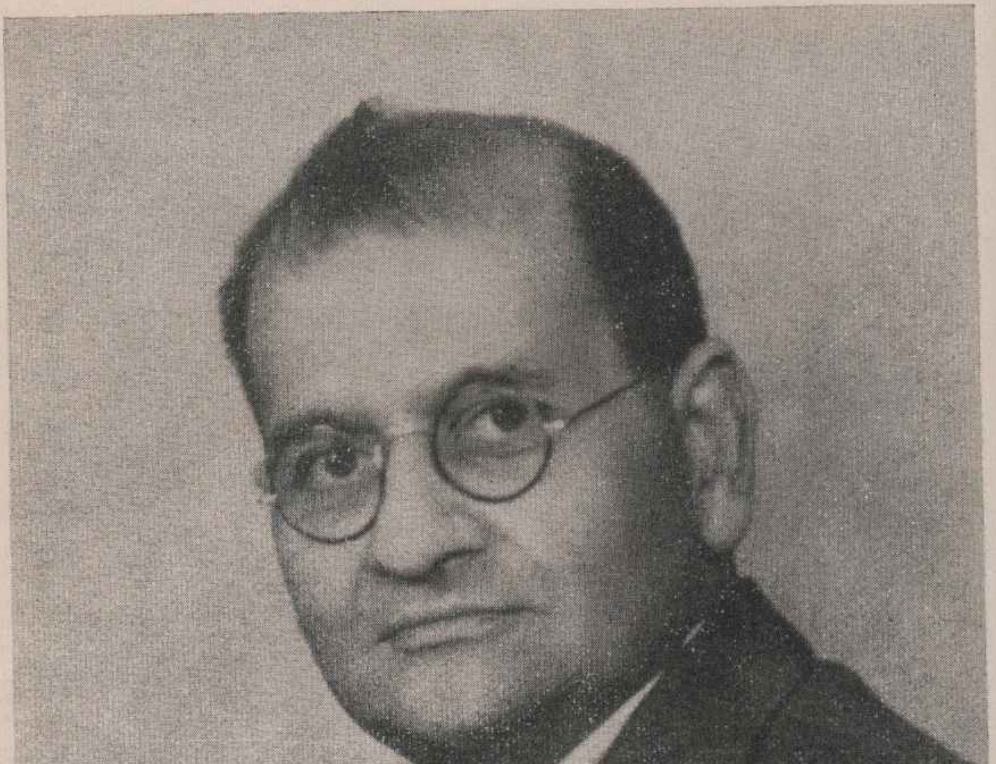
CHAUKHAMBHA ORIENTALIA

P. O. Chaukhambha, Post Box No. 32
Gokul Bhawan, K. 37/109, Gopal Mandir Lane
VARANASI–221001 (India)
Telephone : 63022 Telegram : Gokulotsav

Branch—Bungalow Road, 9 U. B. Jawahar Nagar
DELHI–110007

First Edition 1977

Price Rs. 40-00



मृगया के लेखक
स्वर्गीय श्री श्रीनन्दन शाह

समर्पण

देव,

तुम्हारी यह प्रिय कृति तुमको ही अर्पित।
'नन्दन'-वन के सुमन सजीले सुन्दर सुरभित।
अथक परिश्रम से तुमने सींचा पनपाया।
किन्तु आह ! अतिशीघ्र दैव ने तुम्हें बुलाया।
इनका विकसित रूप स्वयं तुम देख न पाए।
चले गए सब छोड़ सुमन सहसा कुम्हलाए।
मैंने इनको स्नेह अश्रु से कुछ विकसाया।
किन्तु न मुझमें शक्ति, न वह रँग इनमें आया।
तव अतिशय प्रिय वस्तु तुम्हीं को करती अर्पित।
अपनी निधि को स्वयं सम्हालो कर अंगीकृत ॥

चिरमिलन की प्रतीक्षा में

तुम्हारे ही शब्दों में तुम्हारी–

—प्रिय चिरसंगिनी

प्रकाशकीय

प्रस्तुत पुस्तक में वर्णित घटनाओं से मेरा कितना व्यक्तिगत सम्बन्ध है, यह कहने की आवश्यकता नहीं है। मेरे दिवंगत पति, इस पुस्तक के लेखक व सम्बन्धित सारी घटनाओं के नायक उनको अपने जीवनकाल में ही लिपिबद्ध कर चुके थे, किन्तु इसके प्रकाशन में किसी न किसी कारण विलम्ब होता ही रहा और इसकी विपुल सामग्री नष्ट हो गई, किन्तु जो अवशिष्ट है वह भी उपयोगी है।

इस पुस्तक में न केवल आखेट सम्बन्धी सच्ची घटनाएँ हैं वरन् अन्यत्र नितान्त अनुपलब्ध अनेक स्वानुभूत मनोवैज्ञानिक व मृगयोपयोगी तकनीकी तथ्यों का विश्लेषण भी किया गया है। इस पुस्तक की योजना इसी आशा से की गई कि यह सारा वृत्तान्त इस विषय में रुचि रखने वाले पाठकों का मनोरंजन एवम् ज्ञानवर्धन करेगा।

पाठकों से विदा लेने के पूर्व मैं काशी हिन्दूविश्वविद्यालय में भारतकलाभवन के मानद निदेशक, विश्वविख्यात कलाविद्, द्विवेदीयुगीन प्रसिद्ध साहित्यकार तथा आदरणीय भाई साहब डाक्टर श्रीराय कृष्णदास जी के प्रति आभार प्रकट करना चाहती हूँ, जिन्होंने अत्यन्त वृद्धावस्था में भी अपने बहुमूल्य 'दो शब्द' लिखकर इस ग्रन्थ को आशीर्वाद दिया है।

इस ग्रन्थ के मुद्रण का सम्पूर्ण कार्य काशी हिन्दूविश्वविद्यालय के संस्कृतसाहित्यविभागाध्यक्ष डाक्टर रेवाप्रसाद द्विवेदी की देखरेख में संपन्न हुआ है। आरंभिक वक्तव्य में उन्होंने ग्रन्थ और हमारे कुटुम्ब का परिचय भी दिया है। एतदर्थ मैं प्रभु से उनके लिए अपनी संतति के ही समान साभार मंगलकामना करती हूँ।

दिनांक ३०–८–७७. **—श्रीमती श्रीनन्दन**

श्री

दो शब्द

बनारस के सुप्रसिद्ध शाह घराने से मेरे कुल का बहुत पुराना सम्बन्ध रहा है। मेरे कुल की, अधिक नहीं तो बारह कन्याओं का विवाह उस घराने में हुआ।

इस रोचक पुस्तक के लेखक स्वर्गीय श्रीनन्दन जी के अग्रज स्व० श्रीविलास जी से मेरी छोटी बहन ब्याही थीं।

अब न वे दिन रहे, न वे लोग।। 'नन्दन' जी की यह रचना बहुत मनोरंजन है। हिन्दी वाङ्मय में आखेट-विषयक पुस्तकें बहुत कम हैं। इस अभाव की पूर्ति में इस रचना का प्रशंस्य योगदान है। यदि इसे वे अपने सामने प्रकाशित कर जाते तो कितना हर्ष होता! किन्तु - हरेरिच्छा बलीयसी!

अब उनकी पत्नी और उनके सुपुत्रों द्वारा इसे प्रकाशनार्थ हार्दिक साधुवाद। मुझे निश्चय है कि पाठक इसे उठाकर पूरा पढ़े बिना साँस न लेंगे॥

श्रावणी पूर्णिमा, २०३४ वि.

कृष्णदास

प्रास्ताविक

'मृगया' के लेखक श्रीयुत श्रीनन्दन जी शाह काशी की विभूति डॉ० भगवान् दास जी के बड़े भाई श्रीयुत बाबू गोविन्ददास जी शाह के तृतीय पुत्र थे। इनसे बड़े थे बाबू श्रीविलास जी तथा बाबू श्री श्रीनिवास जी और इनसे छोटे थे प्रयाग तथा आगरा विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति श्री श्रीरञ्जन जी। इस प्रकार ये चार भाई थे। संयोग से मृगया के प्रकाशन के समय इनमें से किसी का शरीर शेष नहीं है।

श्री श्रीनन्दन शाह की चार सन्ततियाँ हैं दो पुत्रियाँ तथा उनके बाद के दो पुत्र। बड़ी पुत्री हैं सौभाग्यवती प्रतिभा तायल तथा द्वितीय हैं सौभाग्यवती उर्मिला कानोडिया। पुत्रों में बड़े श्रीप्रतापवर्धनदेव हैं जो 'देवा जी' के नाम से पुकारे जाते हैं तथा छोटे हैं श्री राज्यवर्धनदेव जिन्हें प्यार की भाषा में 'कोकीजी' कहा जाता है। बड़े दामाद हैं श्री प्रेमनाथ जी तायल और छोटे दामाद हैं श्रीयुत तुलसीदास जी कानोडिया। ६५ वर्ष की माता जी के साथ चारों संपन्न और सुखी हैं।

शाह वंश उत्तरप्रदेश के दो तीन सर्वाधिक प्रतिष्ठित वंशों में से है। शिष्टता, सुरुचि, संयत आधुनिकता और प्राचीन परम्पराओं का मर्यादापूर्वक पालन इस वंश के मोहक गुण हैं। आश्चर्य की बात है कि इस विशाल वंश के प्रत्येक सदस्य में ये सभी गुण अभी भी हैं। पहले यह वंश काशी में झक्कड़ खानदान के नाम प्रसिद्ध था और इसमें भगवती लक्ष्मी की इतनी बड़ी कृपा थी कि सिक्कों को अनाज के समान तौल तौल कर धूप दिखलाई जाती थी। दूसरी पीढ़ी को सरस्वती को तौलने की झक सवार हुई और इस झकने इस वंश के द्वारा प्राचीन तथा नवीन भारतीय साहित्य, विशेषतः संस्कृतसाहित्य का पर्याप्त उपकार किया। प्रशासन तथा शिक्षा के उच्चतम पदों पर प्रतिष्ठित स्वर्गीय डॉ० भगवान् दास जी तो अपने वैदुष्य और लेखन के लिए प्रसिद्ध ही थे, मृगया के लेखक के पिता स्वर्गीय बाबू गोविन्ददास जी भी उच्चकोटि के विद्वान् थे। सन्ततियों में स्वर्गीय भगवान्दास जी के ज्येष्ठ पुत्र स्वर्गीय श्री श्रीप्रकाश जी प्रौढ लेखक और प्रसिद्ध स्वतन्त्रता-सेनानी थे। विभाजन के बाद उन्हें पश्चिमी पाकिस्तान का उच्चायुक्त

नियुक्त किया गया और उन्होंने उस समय के अत्यन्त उत्तेजनापूर्ण वातावरण में अपने गुरुतर भार को सफलतापूर्वक निबाहा। बाद में वे आसाम, मद्रास और महाराष्ट्र के राज्यपाल रहे। लेखक के छोटे भाई श्री श्रीरञ्जन जी इलाहाबाद विश्वविद्यालय में वर्षों तक प्रोफेसर रहे और अन्त में कुलपति, जैसा कि बतलाया जा चुका है।

श्री श्रीनन्दन जी स्वयं और उनकी परम कुशल तथा विदुषी धर्मपत्नी भी आरम्भिक जीवन से ही विद्वानों का संपर्क रखते रहे। महामहोपाध्याय डॉ० गङ्गनाथ जी और उनके परिवार से इनकी अत्यन्त घनिष्ठता थी। स्व० डॉ० अमरनाथ झा तथा डॉ० आदित्यनाथ झा को बिठाकर यह दम्पती उस समय भी उनसे श्लोक सुना करते थे, जब वे वयस्क और महाप्रतिष्ठ हो चुके थे। डॉ० आदित्यनाथ झा को तो १९५९ तक, जब वे उत्तरप्रदेश के मुख्य-सचिव पद से संस्कृतविश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति पद पर आए थे इनके आमन्त्रण पर घर आकर श्लोक सुनाना पड़ता था। उन्हें ये पण्डित नाम से पुकारते थे।

मैं श्री श्रीनन्दन जी शाह के संपर्क में १९५७ में आया। उस समय मैं काशीहिन्दूविश्वविद्यालय से आचार्य (साहित्य) कर एम्० ए० (संस्कृत) कर रहा था। मैं अपने माता-पिता से लगभग ७-८ वर्ष की आस्था से ही वंचित था। कुछ ऐसी आत्मीयता बढ़ी कि एक प्रकार से मुझे पुनः माता पिता मिल गए।

२. 'मृगया' के विषय में यह लिखते हुए दुःख हो रहा है कि इसकी काफी बड़ी सामग्री नष्ट हो चुकी है। जिस रूप में यह प्रस्तुत है वह मूलरूप की आभामात्र है। यह वर्षों पूर्व लिखी जा चुकी थी, किन्तु प्रकाशित अब हो रही है। लगता है यह सत्य है कि सभी काम अपना समय आने पर होते हैं।

३. मृगया के लेखक अंग्रेजी के विद्वान् थे और उनका मूल चिन्तन अंग्रेजी का था। अतः उनकी हिन्दी अंग्रेजी ही थी। उस पर बनारसी बोली का भी प्रभाव था और संस्कृत का भी।
हिन्दी पर और साहित्यिक हिन्दी पर उतना ही अधिकार है जितना अंग्रेजी पर, फलतः उन्होंने मृगया का संपादन किया और अन्त के कुछ अंश उन्होंने स्वयं लिखे, जिनमें काव्यछटा और ललितता है। "बनारसी बोली

की छाया की कुछ महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ रहने दी गई हैं, जिनसे हिन्दी भाषा की क्षेत्रीय प्रकृति इस ग्रन्थ में सुरक्षित है।

४. इस ग्रन्थ में आखेट के जो विविध विवरण हैं उनसे मुझे कालिदास आदि प्राचीन कवियों का साहित्य समझने में सहायता मिली है। मैं जिसे कविकल्पना समझता था वह वस्तुतः सत्य था। वराह के प्रसंग से यह तथ्य स्पष्ट है।

कालिदास ने रघुवंश के नवम सर्ग में दशरथ की मृगया का वर्णन किया है और मृग के तुरन्त बाद वराह के आखेट का चित्र प्रस्तुत किया है। तदनुसार आहत वराह अपने शिकारी पर प्रहार करने की चेष्टा करते हैं। 'मृगया' के वराहप्रकरण से स्पष्ट है कि यह वराह का स्वभाव ही है।

वराह को हम नगरवासी घृणित पशु समझते हैं, किन्तु 'मृगया' से विदित होता है कि जंगली वराह अर्थात् वनवराह एक प्रशंसनीय और सिंह को भी तृणवत् तुच्छ समझने वाला बलवान् प्राणी होता है।

जाम्बवान् ऋक्षराज थे। लंका के युद्ध से भी उनकी युद्धपिपासा शान्त नहीं हुई, क्योंकि उन्हें उन जैसे बल का धनी वीर नहीं मिला और अन्त में स्वयं भगवान् राम को ही कृष्णावतार में जाम्बवती-परिणय के प्रसङ्ग से उनकी यह पिपासा शान्त करनी पड़ी। लगता है यह अत्युक्ति है। किन्तु 'मृगया' के 'भालू'-प्रकरण से स्पष्ट होता है कि सचमुच इस चतुष्पद में भी बल की मात्रा असामान्य और कल्पनातीत होती है।

जलचरों में मगर आयुर्वेदवेत्ताओं की दृष्टि से सर्वाधिक शक्तिशाली प्राणी होता है। गजेन्द्रमोक्ष आख्यान से भी यह स्पष्ट है। हम समझते हैं यह एक प्राकृतिक देन है। परन्तु मृगया के पढ़ने से समझ में आता है कि इसका रहस्य प्राणायाम है। प्राणों का आयाम अर्थात् निरोध (न कि विस्तार) है प्राणायाम का अर्थ। 'मृगया' से विदित होता है कि मगर या घड़ियाल २, ३ घण्टे सांस रोककर तलहटी में पानी के भीतर बैठा रहता है।

'मृगया' से यह भी ज्ञात होता है कि मगर के जीवाणुकोश इतने शक्तिशाली होते हैं कि वे अवसर मिलने पर शरीर को बहुत ही बड़ा आकार दे सकते हैं। तब यह रहस्य स्पष्ट होता है कि मकर के अण्डकोश के रस के रक्त में अनुप्रवेश (इञ्जेक्शन) से मनुष्य का वृद्ध शरीर पुनः तरुण कैसे हो जाता जैसा आयुर्विज्ञान के प्राचीन ग्रन्थों से स्पष्ट है।

मगर को संस्कृत में कुम्भी कहा जाता है। क्यों? उत्तर इस ग्रन्थ से मिलता है—उसके लम्बे जबड़े के ऊपर एक तूमड़ी बनी रहती है। जैसा कि चित्र से स्पष्ट है।

कालिदास ने लिखा है दिलीप धनुष लिए हुए थे, परन्तु उन्हें देखकर हिरन जैसा कातर प्राणी भी निश्शंक खड़ा रहता था, कारण कि दिलीप उस समय मृगया के उद्देश्य से नहीं, अपितु गुरु की धेनु नन्दिनी को चराने के लिए निकले थे। इससे स्पष्ट होता है कि मानस तरंगों का आघात पशुओं की अन्तश्चेतना पर भी राडार यन्त्र के समान ही होता है। 'मृगया' के हरिण प्रकरण से यह तथ्य बहुत अधिक स्पष्ट हो जाता है। शिकारी यदि किसी अन्य शिकार का उद्देश्य लिए हो तो अन्य प्राणी उससे डरते नहीं। कितना उत्तम है प्रकृति-वितान जिसमें प्रीति और द्वेष के स्पर्श तिर्यक् सृष्टि तक समान गति से प्रसारित हैं। इसी भूमिका पर विश्वात्मभाव बहुत ही अधिक स्पष्टता लेकर सामने आता है।

५. मृगया के लेखक ने मगर और भालू के आखेट में अत्यन्त विषम परिस्थितियाँ झेलीं जो लेखक की शौर्य-कथा के प्रमाण हैं। मगर को मारकर प्राप्त कर लेना कितना कठिन है यह इस ग्रन्थ को पढ़ने में ही विदित होता है।

सिंह के आखेट में लेखक ने जो विवरण दिया है उससे लगता है कि यह एक अभियान है और उससे भी अधिक एक प्रकार से फौजी कार्य है। किन्तु आक्रमण के बिलकुल पास आ पहुँची बाघिन को बहुत ही पास से मारने में लेखक ने कितनी निर्भीकता से कार्य लिया है यह 'कालदंष्ट्रा के पास' प्रकरण से स्पष्ट है। विशेषता यह है कि कभी-कभी तो माता जी ने भी गोली चलाकर लक्ष्यवेध किया है। एक ओर सिद्ध लेखनी, पूजा में भगवान् के लिए अगरबत्ती और दूसरी ओर शिकार के समय बन्दूक से सिद्ध है कि माता जी का व्यक्तित्व बहुमुखी रहा है। श्री सरस्वती, अन्नपूर्णा और कात्यायनी अन्ततोगत्वा एक ही पराम्बा के स्वरूप हैं।

६. यह ग्रन्थ शिक्षा भी देता और शिकार की विविध विधियों पर प्रकाश भी डालता है, जिनसे शिकारी लाभ उठा सकते हैं। अनेक पारिभाषिक शब्दों को भी इस ग्रन्थ से समझा जा सकता है जैसे—ठोंक, पतवा, मरी, दोहराना।

७. इस ग्रन्थ से उत्तरप्रदेश के कुछ क्षेत्रों की भौगोलिक स्थितियों का स्पष्टीकरण भी होता है। अनेक क्षेत्र ऐसे हैं जिनका स्वरूप अब बदल चुका है। फलतः यह ग्रन्थ उन क्षेत्रों का ५० वर्ष प्राचीन इतिहास प्रस्तुत करता है।

८. यह ग्रन्थ उपन्यासोचित शैली में लिखा गया है जिसमें आकर्षण और उत्सुकता आरम्भ से अन्त तक बनी रहती है। भाषा भी परिष्कृत और लचीली है। इस प्रकार हिन्दी साहित्य को यह ग्रन्थ अपने ढङ्ग की निराली देन है।

९. लेखक ने और अधिक चित्रों का संग्रह किया था, किन्तु दुर्भाग्यवश वे सुरक्षित नहीं रहे। उनसे न जाने कितने प्राणियों की आकृतियों का परिचय प्राप्त होता। उनका गुमना एक बड़ी हानि है।

१०. आखेट मृगया के लेखक का मुख्य कार्य नहीं था। वे यह कार्य वन्य प्रकृति की झाँकियाँ देखने और स्वास्थ्य सुधार के लिए करते थे। इसका लाभ भी समाज को मिलता था, क्योंकि हिंसक जन्तुओं के वध से जनजीवन को राहत मिलती थी। हिरन जैसे पशुओं की संख्या बढ़ने से कृषि की हानि होती है और फसल की रक्षा के लिए किसानों को अधिक परिश्रम करना पड़ता है। मृगया द्वारा उनको भी निश्चिन्तता का लाभ मिल जाता है। जो आमिष भोजी हैं उनके लिए तो शिकार उत्सव है। सुअर-प्रकरण से स्पष्ट है कि किस प्रकार ऐसे लोग पशुओं की चमड़ी तक चट कर जाते हैं। यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि स्वयं श्रीनन्दन जी शाह शाकाहारी वैष्णव थे और उनका परिवार अभी तक इस मर्यादा का पालन करता आ रहा है। पशुओं के वध के लिये अपेक्षित निष्ठुरता के साथ उनके चित्त में दया भी थी और इस ग्रन्थ से स्पष्ट है कि वे एक से अधिक गोली भी चलाते थे यदि समझते थे कि शिकार का पशु मरा नहीं है। पक्षियों का शिकार उन्होंने नहीं किया। क्यों? कदाचित् इसलिए कि वे निरर्थक प्राणिवध के पक्ष में नहीं थे। चाणक्य और कालिदास ने मृगया के औचित्य पर भी प्रकाश डाला है।

११. इस ग्रन्थ का प्राक्कथन लिखकर स्वयं लेखक ने आखेट के अनेक पक्ष स्पष्ट कर दिए हैं। उनके जीते जी यह पुस्तक नहीं छप सकी इसका खेद है। आज यदि वे होते तो कितने प्रसन्न होते।

विश्वविख्यात कलाविद् श्रीयुत राय कृष्णदास जी ने 'दो शब्द' लिखकर इस पुस्तक का महत्त्व स्पष्ट कर दिया है। तदनुसार शिकार पर अंग्रेजी में अनेक पुस्तकें हैं। उनकी छपाई, सफाई, साजसज्जा भी अद्वितीय हैं। विविध पशुओं के अनेक चित्र भी उनमें दिए रहते हैं जो अति आकर्षक होते और ग्रन्थ की महत्त्ववृद्धि करते हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ को भी उसी स्तर पर छपवाने की इच्छा थी, परन्तु अनेक कारणों से ऐसा संभव नहीं हुआ। इतने पर भी पाठकों की सुविधा का पूरा ध्यान रखा गया है।

पुस्तक के प्रूफ मैंने स्वयं देखे हैं किन्तु संभव है कहीं त्रुटि रह गई हो क्योंकि ग्रन्थ में कुतूहल-जनकता इतनी अधिक है कि पढ़ते समय अन्य कुछ सूझता ही नहीं और पाठक स्वयं भी मानों शिकारी बन जाता है, ग्रन्थकार के साथ समरस हो जाता है।

१२. मैं ग्रन्थकार और उनके ग्रन्थ के प्रकाशकों का स्वयं आभारी हूँ, क्योंकि इस ग्रन्थ से मुझे कालिदास आदि को समझने में पर्याप्त सहायता मिली है।

इस ग्रन्थ का यथार्थ मूल्यांकन शिकार के विशेषज्ञ ही कर सकेंगे। मैं तो इसके प्रकाशन से धन्यता का अनुभव कर रहा हूँ।

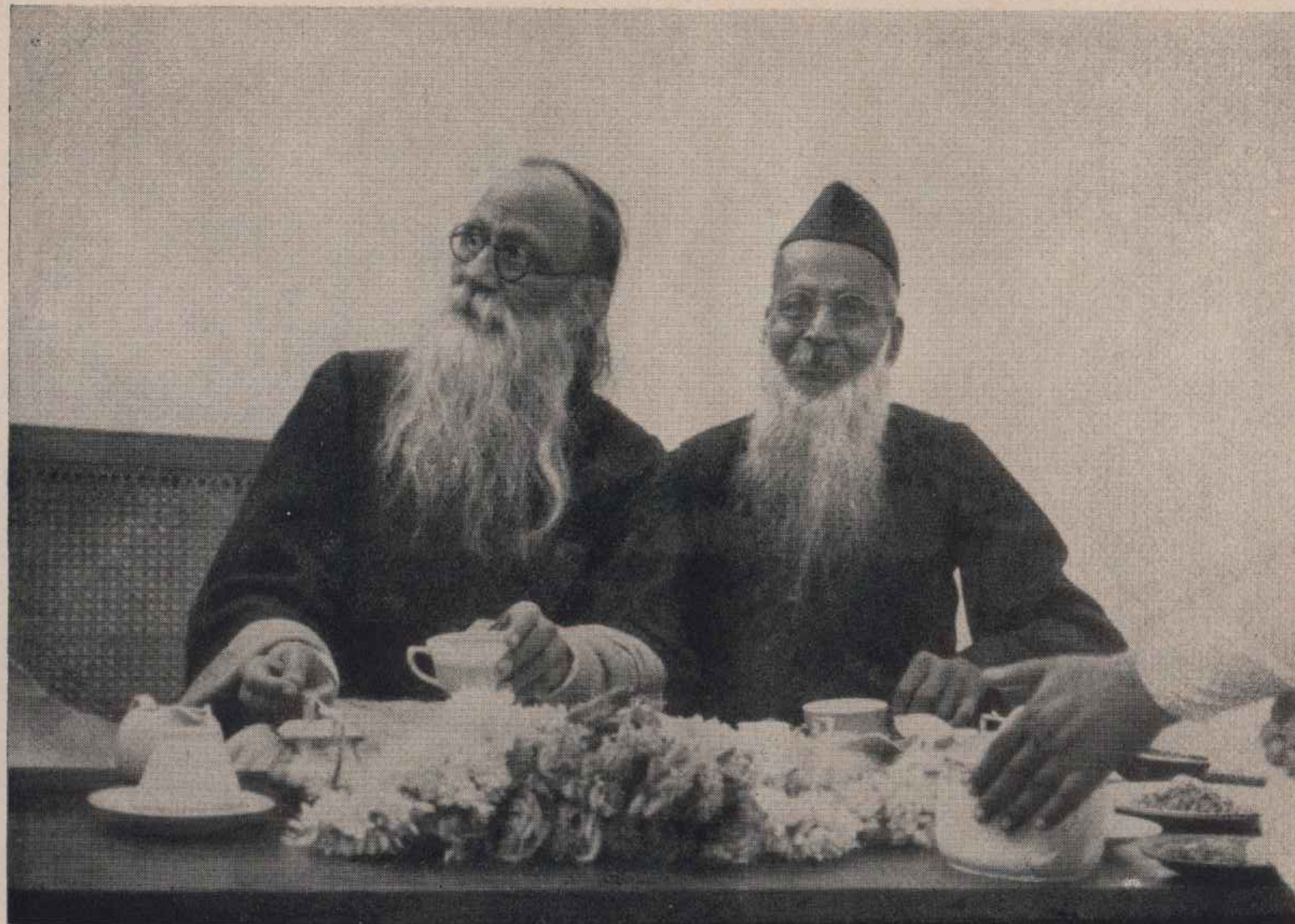
वाराणसी
श्रावण कृष्णा ११, बुधवार
२०३४ वि० (१०-८-७७)

रेवाप्रसाद द्विवेदी
अध्यक्षः संस्कृतसाहित्यविभाग
काशीहिन्दू विश्वविद्यालय

विषय-सूची

---

१. लेखक ने प्रत्येक जानवर के डीलडौल, स्वभाव अंग्रेजी और संस्कृत नाम, निवासस्थान आदि का वर्णन प्रत्येक परिच्छेद में किया है।



लेखक के बड़े चाचा भारतरत्न
डॉ० भगवानदास

छोटे चाचा एवं शिकार गुरु
श्री सीताराम साह

प्राक्कथन

हिन्दीसाहित्यमें मृगया तथा वन्य-पशुओंके विषयमें बहुत कम पुस्तकें होनेसे सर्वप्रथम हिन्दीमें लिखनेका आग्रह मुझसे बम्बई स्थित मेरे स्नेही भाँजा डॉक्टर मोतीचन्द्र, पी-एच० डी० ने किया। वे उस समय वहाँके "म्यूजिअम"-"संग्रहालय"-"अजायबघर"के "क्यूरेटर" संग्रहाध्यक्ष थे जो इस समय वहाँ "डायरेक्टर" हो गये हैं। उनसे मेरी भेंट सन् १९४३ की मई में हुई थी जबकि मैं वहाँ सेंट्रल गवर्मेण्टके किसी कार्यसे गया हुआ था। उनके संग्रहालयमें लाखों पुस्तकें हैं, परन्तु हिन्दीमें आखेट-विषयक पुस्तकोंकी संख्या अत्यन्त सीमित थीं, जिनसे भारतवर्षके वन्य-पशुओंका ज्ञान तथा उनके आखेटका विवरण पूर्ण-रूपसे प्राप्त नहीं हो पाता।

डॉ० मोतीचन्द्रजीके आग्रह पर मैंने केवल उन्हीं कतिपय वन्य-पशुओं पर जिनका मैंने आखेट किया है कुछ लिखने तथा प्रकाश डालनेका प्रयत्न करनेका आश्वासन दिया। सब पशुओं पर तो लिखनेके लिये बहुत समय चाहिए तथा विषय भी बहुत बृहत् हो जायगा।

परन्तु उसके बाद दो वर्षों तक गवर्मेण्ट तथा गृह कार्योंमें व्यस्त रहनेके कारण मुझे तनिक भी समय नहीं मिला कि इस ओर कुछ प्रयास भी करूँ।

गृह कारज नाना जंजाला। जे अति दुर्गम शैल बिशाला॥

(रा० च० मा०—बालकाण्ड)

सहसा एक दिन मेरे शिकार गुरु आदरणीय परम स्नेही छोटे पितृव्य श्री सीतारामजी साह मुझसे मिलने आये और मुझे मृगया पर अपने अनुभव लिखनेका आदेश दिया। चाचाजीके पूज्य चरण कमलोंमें बैठकर ही मैंने कुछ थोड़ा सा आखेटका ज्ञान प्राप्त किया है। उनके साथ-साथ गहन वनोंमें तथा नदीके ऊपर कितने ही आनन्दके दिन व्यतीत किये। जब दिन भरके पर्यटनसे अत्यन्त श्रमित हो हम लोग सायंकाल अपने डेरेके सामने हेमन्त अथवा शिशिर

ऋतुमें, अग्निके सम्मुख बैठते थे, तब उनके मुखारविन्दसे कितनी-कितनी मनोरंजक कहानियाँ सुननेमें आती थीं। अथवा जब बसन्त या ग्रीष्ममें जानवर न मिलनेसे निराश हो रिक्त हस्त लौटते थे, तब वही मार्ग जो जानवर मिल जानेसे कठिन और दूर नहीं लगता था, उस समय जब अत्यन्त दूरस्थ और दुर्गम प्रतीत होने लगता था, तब चाचाजी हमें अनेक मनो-मुग्धकारी, विनोद भरी, रसीली कहानियाँ सुनाते हुए श्रम तथा खेदका आभास भी नहीं होने देते थे। अब वे बातें स्वप्नवत् हो गयीं, कारण वृद्धावस्था तथा अन्य कारणोंवश उन्होंने शिकार खेलना बन्द कर दिया था।

उनकी आज्ञा पाकर मैं एक बार पुनः कुछ असमंजसमें पड़ गया, क्योंकि इसके पूर्व पुस्तक लेखन कार्य मैंने कभी नहीं किया था। परन्तु उनकी आज्ञा शिरोधार्य कर और अपने आत्मजोंके विशेष अनुरोध पर उनके मनोरंजनार्थ तथा शिक्षणार्थ लेखन आरम्भ कर दिया। मेरे छोटे भाई डॉ० श्री श्रीरंजनजीने भी इस पुस्तकके लिखनेमें मुझे बहुत प्रोत्साहन दिया। शिकारमें उनका भी कई बार साथ रहा और उनके साथसे भी बहुत आनन्द उठाया।

मुझे अत्यन्त खेद है कि मेरे पूज्य अग्रज प्रिय "राजा भैया" श्री श्रीविलास-जी तथा मेरे फुफेरे छोटे भाई श्री अमरनाथजी इस पुस्तकारम्भके अनेक वर्ष पूर्व ही स्वर्गवासी हो गये। आखेट-यात्राओंमें इन दोनों प्रिय भ्राताओंका बहुत साथ रहा। इन लोगोंके साथ आखेटमें बहुत आनन्द आता था। राजा भैयाका मुझ पर बहुत भरोसा था तथा मैं भी उनके धीर, गम्भीर, शान्त स्वभाव एवं सुलझे परामर्शों और उनके उत्तम निशानेके कारण, उन पर बहुत श्रद्धा रखता था। इस पुस्तकमें अनेकों घटनायें उनके साथकी हैं जिन्हें पढ़कर वे कितने प्रसन्न होते।

आखेटमें मेरा सबसे अधिक साथ तो मेरे पूज्य प्रिय स्व० श्री नरोत्तमदास मामाजीका था। विरला ही ऐसा कोई शिकार-पर्यटन रहा हो जिसमें किसी कारणवश उनका साथ न रहा हो, वरन् उनका साथ सदैव रहा। वह शिकारके एक अविच्छिन्न अंग थे। उनके बिना तो शिकारमें कहीं भी जाना हम लोग



श्रद्धेय मामाजी

सोच भी नहीं सकते थे और न इच्छा ही होती थी। छोटे चाचाजीका व उनका पुराना साथ होनेसे वे भी एक कुशल शिकारी थे। उनसे भी मुझे अनेक शिक्षा सदा ही मिलती रही। उनके हस्तलाघवका एक विशेष गुण यह था कि हम लोग कोई भी जब किसी जानवर पर गोली चलाते थे तो वे उस पर तुरन्त दोहरा देते थे जिसमें जानवरके भाग जानेकी आशंका बहुत कम हो जाती थी। गोलीका इस प्रकार दोहराना आसान नहीं। कई बार मुझसे ही दोबारा निशाना लगानेमें चूक हो गयी है। व्यग्रता अथवा अति शीघ्रताके कारण दूसरी बारका निशाना प्रायः चूक जाता है। परन्तु उनसे कभी नहीं चूका। अतएव उनसे सदा सहायता ही मिलती रहती थी। मामाजीको कवि पद्माकरके अनेक छन्द, कवित्त, सवैया आदि, बिहारीकी सतसई व रामायणके दोहे, चौपाई आदि-आदि बहुत कण्ठस्थ थे, जिससे उस जंगलमें भी हम लोग साहित्यका आनन्द उठाते थे।

चाचाजीका साथ हमारे पूज्य प्रिय बड़े भैया श्री श्रीनिवासजीका भी बहुत था। हम लोगोंके आखेट अभियानके प्रधान तो चाचाजी ही रहते थे। अतः उनको 'जेनरल'' "सेनापति''की पदवी दी गयी थी। उनके बाद द्वितीय स्थान (Second in command) बड़े भैयाका ही था, जिनका नामकरण चाचाजीने ''कर्नल फिन फिनी'' किया था ? क्योंकि उनके कार्याधीशत्वमें सम्पूर्ण कार्य सुव्यवस्थित होने चाहिए। नियमकी पाबन्दीके वे बहुत कायल हैं। उनकी विशेषता है कि जब तक सारे कार्य बहुत न्यून तूनसे उनके मन लायक सही-सही न हो, तब तक वह न तो किसीको विश्राम लेने देते थे, न स्वयं ही विश्राम करते थे। वह भी अत्यन्त विनोद प्रिय हैं तथा इनका निशाना भी बहुत अच्छा है।

मेरा नाम चाचाजीने "मेजर श्रीनन्दन'', "लार्ड श्रीनन्दन'' अथवा "नबाब श्रीनन्दन'' रक्खा था। क्योंकि अधिकतर मैं बहुत आलसी था, और शिबिरके किसी भी कार्यमें मेरी अरुचि रहती थी। मुझे तो केवल स्वादिष्ट भोजन तथा शिकारसे प्रयोजन था। चाचाजी और बड़े भैयाके निरीक्षणमें ये दोनों ही मुझे मिल जाते थे।

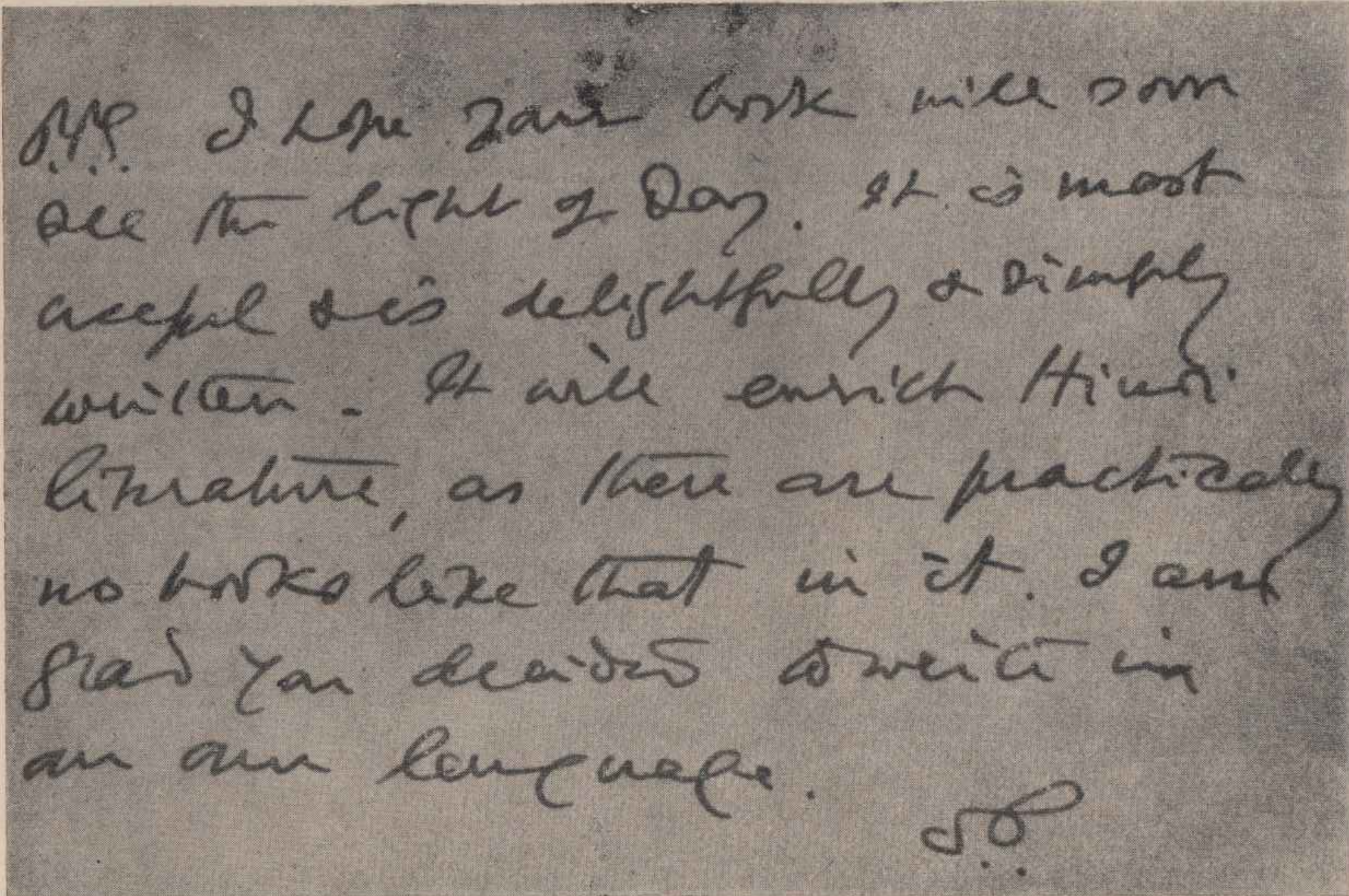
यद्यपि मैंने इस पुस्तकको शीघ्र लिखनेका बहुत प्रयास किया तथापि कई वर्ष लग गये जबकि मैं इसका कुछ ढांचा निर्माण कर सका। हर्षकी बात है कि मामाजी अपने अन्तकालके पूर्व इसको कुछ देख पाये और उतना ही देखकर बहुत प्रसन्न हुए। यदि वे जीवित रहते तो इसके लेखन कार्यमें भी उनसे बहुत सहायता मिलती।

मुझे अत्यन्त प्रसन्नता तथा सन्तोष है कि जब मैंने एक बार पुस्तक पूरी लिख डाली, केवल आवृत्ति और परिमार्जन रह गया तो इसे छोटे चाचाजी को दिखा पाया। यद्यपि वे उस समय मृत्यु शय्या पर पड़े थे, परन्तु फिर भा इसे देख और पढ़ सके जिससे उनको बड़ी प्रसन्नता हुई।

मेरे आश्चर्य और आनन्दकी सीमा न थी जब मैंने सुना कि मेरे परम आदरणीय बड़े पितृव्य भारतरत्न डा० भगवानदासजीने भी उनसे मेरी पुस्तक लेकर पढ़ डाली और मुझे बुलाकर इसकी बहुत प्रशंसाकी तथा यहाँ तक कहा कि यदि मैं एक-एक लेखको परिष्कृत करके उनको देता जाऊँ, तो वे उसे और शोधकर छपवाते चलें। परन्तु दुर्भाग्यवश मैं अस्वस्थ हो गया, तथा उन्होंने रुग्ण होकर शैय्या पकड़ली और महाप्रस्थान भी कर दिया। अतः यह कार्य स्थगित ही रह गया।

अन्ततोगत्वा यथासाध्य मैं अपनेसे ही और अपनी पत्नीकी सहायतासे थोड़ा बहुत शोध पाया। यदि त्रुटियाँ रह गयी हों तो पाठकगण सहिष्णुतासे काम लेंगे तथा मुझे क्षमा करेंगे।

आरम्भमें तो आखेटमें पुरुषोंका ही साथ रहता था, किन्तु पीछेसे मेरी प्रिय चिरसंगिनी धर्मपत्नीने भी शिकारमें सदा मेरा साथ दिया। यहाँ तक कि शेरके शिकारमें भी वे निर्भीकता पूर्वक मेरे साथ मचानपर बैठी रहती थीं और चीतेके शिकारमें तो जमीनपर ही साथ-साथ रहती थीं। एक बार तो चीतेपर उन्होंने ही गोली दोहरायी। बड़े-बड़े दुर्गम स्थानोंमें विकट परिस्थितियों-में भी उन्होंने अपूर्व साहस तथा धैर्य दिखाकर मेरा साथ दिया। शिकारसे अधिक इनके साथ-साथ गहन वनके अथवा नदी-नालोंके विहरणमें अत्यन्त


P.S. I hope your book will soon see the light of day. It is most useful & is delightfully & simply written. It will enrich Hindi literature, as there are practically no books like that in it. I am glad you decided to write in our own language.

S.P.

बाबू श्री श्रीप्रकाश जी

आनन्द आता था। वस्तुतः हम लोग प्राकृतिक सुषमावलोकनके आनन्दके लिए ही विशेषतया भ्रमण करते थे। मेरे शिकारके व्यसनसे इनको भी प्रकृतिकी पूर्ण पुजारिन बना दिया।

पत्नीके साथ-साथ हमारे बच्चे भी रहते थे। प्रारम्भमें तो मेरी दोनों पुत्रियाँ ही साथ रहती थीं। उसके बाद मेरे दोनों पुत्रोंने भी अपने जन्मके पूर्व ही माँके गर्भसे ही शिकार यात्रा आरम्भ कर दी।

मेरा छोटा पुत्र तो जब उसे बोलना भी नहीं आता था उसी अवस्थासे आखेट भ्रमणके समय नौकरके कन्धेपर बैठा हुआ किसीके कुछ बोलनेपर उँगली नाकपर रखकर चुप रहनेका संकेत करता था, कारण सब बच्चोंको मेरी शिक्षा थी कि आखेटमें बोलना एकदम वर्जित है। उसी अवस्थामें एक बार शामके झुटपुटे समयमें जब कि कठिनतासे दूर देखा जा सकता था, उसने हम लोगोंको चुप कराते हुए उँगलीसे शूकरोंका एक बड़ा झुण्ड दिखाया था। एक बार सब बच्चोंके साथ ही चूनादरी चीतेके शिकारके लिए गये थे। बच्चोंको एक ओर बैठाकर मैं शिकारीके साथ दस-पाँच कदम आगे बढ़कर देख रहा था। इतनेमें अन्य बच्चोंने बालस्वभावसे आपसमें फुसफुसाना आरम्भ किया तो छोटे साहेबने झट अत्यन्त गम्भीर मुद्रामें वही नाक पर उँगली रखकर संकेतसे उनको चुप रहनेका आदेश दिया। उसकी वह आकर्षक गम्भीर मुद्रा देखकर बड़े बच्चे हँसी न रोक पानेके कारण हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये।

वनोंमें विचरण करती हुई नन्हीं-नन्हीं परियोंके सदृश दोनों पुत्रियाँ तथा उनके नन्हें सखाओंके समान मेरे दोनों पुत्र नदियों झरनोंपर नहाते, जलसे खेलते, एक पत्थरपरसे दूसरे पत्थरपर कूदते, फांदते, चिड़ियोंकी तरह चहकते अत्यन्त सुन्दर मनमोहक दृश्य उपस्थित कर देते थे। इनकी हँसी, खिलखिलाहट तथा मधुर गायनसे जंगल गूँज उठता था। कहीं-कहीं तो झरनोंके पास छायादार वृक्षोंके नीचे हम दाल बाटी बनाते, खाते पीते पूरा दिन ही व्यतीत कर देते थे। साथमें बन्दूकें भी रहती थीं। कभी-कभी तो

स्नान, भोजनके समय भी कोई पशु देख पड़ जानेपर वैसे ही निशाना भी लगा देते थे।

यह प्रकृति सौन्दर्यावलोकन मन तथा नेत्रोंको सुखदायी होनेके अतिरिक्त मेरे लिये तो मेरे इस आखेट-स्थल विन्ध्य पर्वतके मनोरम वनोंका परिभ्रमण एक अमूल्य बलवर्द्धक एवं पौष्टिक पदार्थ (Tonic) टानिकका कार्य करता था, जहाँ अनेकों प्रकारके अर्जुन आदि जैसे औषधियोंके वृक्ष, लतायें प्रचुर मात्रामें हैं, जिनकी (Oxygen) ऑक्सिजनपूर्ण सुखद समीर स्वास्थ्यके लिए गुणकारी होता है। अनेकों बार मुझे इसका अनुभव हुआ है। प्रायः घरमें काफी अस्वस्थ तथा अशक्त हालतमें पड़े रहने पर भी यदि जंगलमें जानेका कभी अवसर मिल जाता था, तो वहाँ पहुँचनेके दूसरे ही दिनसे रुग्णावस्था दूर होकर शरीरमें बलका संचार होने लगता था। अतः यदि इसका व्यसन रूप न होने दिया जाय तो बीच-बीचमें इस प्रकारके पर्यटन अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होते हैं।

इस पुस्तकमें मैंने केवल अपने उन्हीं कतिपय वन्य पशुओंके विषयमें लिखनेका प्रयास किया है, जिनका आखेट मैंने स्वयं किया है, अतः बहुत सम्भव है कि मेरे प्रिय पाठकोंको बहुत-सी घटनायें अतिरंजित न होनेसे नीरस प्रतीत हों, कारण इसमें सारी कथायें अक्षरशः सत्य हैं। मैंने केवल मनोरंजनार्थ असत्य, रोमाञ्चकारी कहानियाँ एक भी नहीं दी हैं। फिर भी आशा करता हूँ कि शिकार-प्रेमियोंको इसमें शिकारके ऐसे उपाख्यान अनेकों मिलेंगे जिससे उनको भी कुछ-न-कुछ रोचकता अवश्य मिल जायगी, साथ ही बहुत-सी नयी बातोंका भी ज्ञान हो जायगा।

नामकरण :

इस पुस्तकका नाम 'मृगया' महाकवि कालिदास आदिके साहित्यमें 'मृगया' शब्दका अधिक प्रयोग मिलनेके कारण रखा गया है। शाकुन्तलमें कहा गया है–

मेदश्छेद - कृशोदरं लघु भवत्युत्थान - योग्यं वपुः
सत्त्वानामपि लक्ष्यते विकृतिमच्चित्तं भयक्रोधयोः।

उत्कर्षः स च धन्विनां यदिषवः सिध्यन्ति लक्ष्ये चले
मिथ्यैव व्यसनं वदन्ति मृगयामीदृग्विनोदः कुतः ॥
(अभिज्ञानशाकुन्तल, द्वितीयोऽकः—श्लोक ५)

कछु मेद कटे अरु तुन्दि घटे छटिके तन धावन जोग बने,
चित वृत्ति पशूनकि जानि परे भय क्रोध मे लेत पलेट घने।
अति कीरति है धनु धारिन की चलती यदि बानते बेधो हने,
मृगया तें भलो न विनोद कोई तहि दोषन माहिं वृथाहि गने ॥
(राजा लक्ष्मण सिंहका अनुवाद)

परिचयं चल-लक्ष्य-निपातने भयरुषोश्च तदिंगित-बोधनम्।
श्रमजयात् प्रगुणां च करोत्यसौ तनुमतोऽनुमतः सचिवैर्ययौ ॥
(रघुवंश : नवम सर्ग श्लोक ४९)

"कविश्रेष्ठानुसार आखेटके अनेक लाभ हैं। सर्वप्रथम चलते हुए लक्ष्यको मारनेका अभ्यास हो जाता है, तत्पश्चात् जीवोंके भय और क्रोध आदि भावोंका ज्ञान होता है और परिश्रमके फलस्वरूप शरीर भी गठीला हो जाता है। इसलिए मन्त्रियोंसे अनुमति लेकर महाराज दशरथ आखेटके लिए निकल पड़े।"

मृगका अर्थ :

सब प्रकारके पशुओंके आखेटको "मृगया" कहते हैं। "मृग" शब्द केवल हरिणोंके ही लिये नहीं अपितु सभी प्रकारके वन्य पशुओंके लिए प्रयोग कर सकते हैं। "कुमारसम्भव" में महाकवि कालिदासने इसका उल्लेख किया है—

मूकाण्डजं शान्त-मृगप्रचारम्। (तृतीय सर्ग ४२)

अर्थात् तपोवनमें सब जीव जन्तु चुप हो गये और सब पशु भी जहाँके तहाँ खड़े रह गये।

इससे स्पष्ट है कि कोई भी चतुष्पद-चौपाये-जंगली जन्तुको "मृग" कह सकते हैं। "मृगाधिप" अथवा "मृगाधिराज" सिंह अथवा केसरीको कहते हैं जिसका अर्थ है सब पशुओंका राजा।

"मृग" धातुका अर्थ ढूँढ़ना और अनुधावन अर्थात् पीछा करना भी है।

प्राचीन कालसे राजा महाराज जंगली पशुओंका आखेट करते चले आये हैं। महाराज दशरथको भी इससे अत्यधिक अनुराग था। वे एक बहुत बड़े दक्ष और अनुभवी अहेरी थे। रघुवंशके नवम सर्गमें इसका विस्तृत वर्णन है कि उन्होंने किस प्रकार और किन-किन प्रकारोंके पशुओंका आखेट किया है।

इसी प्रकार श्री रामचन्द्रजी भी किशोरावस्थामें बहुधा आखेट करते थे। श्री तुलसीदासजी "रामचरितमानस"में लिखते हैं :

बन्धु सखा संग लेहिं बुलाई। बन मृगया नित खेलहिं जाई।
पावन मृग मारहिं जिय जानी। दिन प्रति नृपहिं देखावहिं आनी ॥

(बालकाण्ड)

यहाँ भी "मृग" शब्दका अर्थ केवल हरिनके ही लिये नहीं अपितु हर प्रकारके वन्य पशुओंके लिए ले सकते हैं।

यहाँ "पावन" शब्दके भी अर्थ पर विशेष ध्यान देनेकी आवश्यकता है। अर्थात् वे केवल मारने योग्य ही पशुओंका वध करते थे हरिणी, बच्चे तथा तरुणावस्था वाले अवध्य पशुओंको नहीं मारते थे।

इस प्रकार 'मृगया' शब्द आखेटकी पवित्रताकी ओर भी संकेत करता है और उसके अर्थकी व्यापकताकी ओर भी।

दुर्गाकुण्ड, वाराणसी
विजया दशमी, २०१७

— श्रीनन्दन

हरिन

हरिन

हरिनसे ही मेरे आखेट जीवनका आरम्भ हुआ अतः सर्व-प्रथम इनके ही वर्णनसे ग्रन्थका प्रारम्भ करता हूँ।

बहुविध :

अन्य जातिके पशुओंकी अपेक्षा हरिन जातिमें सबसे अधिक विविध प्रकारकी जातियाँ पायी जाती हैं। मृगाधिप, व्याघ्र दो-दो तीन-तीन प्रकारके, भालू पांच-सात प्रकारके, मगर घड़ियाल चार-पांच प्रकारके तथा चीते कुछ अधिक लगभग आठ-दस प्रकारके होते हैं, किन्तु विश्व-भरमें कुल मिलाकर लगभग ढाई सौ प्रकारके ऊपर ही भिन्न-भिन्न जातिवाले हरिन पाये जाते हैं।

अन्य सभी पशुओंके भिन्न-भिन्न प्रकारोंमें भी बहुत सूक्ष्म अन्तर होता है। किन्तु हरिन जातिमें सैकड़ों भिन्न-भिन्न अन्तर्जाति तथा विविध प्रकार होते है। एक अन्तर्जाति दूसरी अन्तर्जातिसे बहुत भिन्न होती है। रंगमें, रूपमें, आकारमें, सींगोंकी बनावटमें तथा उनकी लम्बाई, मोटाई और नोकों टाइन्स (Tines) की संख्यामें अनेक प्रकारके अन्तर हैं।

दो मुख्य जाति :

हरिनोंकी जातियोंमें दो विशिष्ट जाति हैं। शेष सब इन्हीं दोनोंके अन्तर्गत है। हिन्दीमें दोनोंका भेद बताने योग्य कोई पार्थक्यसूचक शब्द नहीं है। अंग्रेजीमें इन दोनों जातियोंके लिए दो पृथक् नाम दिये गये हैं। एकको (Deer) डियर तथा दूसरेको एण्टलोप (Antelope) कहते हैं। इनकी भिन्नता आगे दी है।

"डियर" जातिके अन्तर्गत साँभर, चीतल अथवा बारहसिंघा आदिके नरोंको अंग्रेजीमें स्टाग (Stag) कहते हैं।

केवल नरोंकी सींग :

यहाँ एक बात स्मरणीय है कि इन पशुओंमें केवल नरोंको ही सींग होती हैं। "एण्टलोप" जातिमें केवल "चिकारों" की अन्तर्जातिमें कोई-कोई माददाओंको भी सींग होती हैं, परन्तु ये सींगें बहुत ही छोटी लगभग तीनसे चार इंच लम्बी, बहुत पतली और चिकनी होती हैं।

"डियर" और "एण्टलोप"में सींगोंका भेद :

"डियर" जातिके हरिनोंके सींग घन अथवा ठोस होते हैं और "एण्टलोप" जातिके पोपले होते हैं।

१. डियर

"डियर"के सींगोंका गिरना :

"डियर" के सींग दूसरे अथवा तीसरे वर्षमें जड़से गिर जाते हैं। फिर कालान्तरमें नई सींग निकलना आरम्भ हो जाता है। ये नई सींगें आरम्भमें पूर्णतया अकठोर और मखमलके सदृश कोमल होती हैं।

अंग्रेजीमें इनकी इस समयकी अवस्थाको (Stag in velvet) कहते हैं। Velvet शब्दका अर्थ मखमल है। उस अवस्थाको प्राप्त हरिनोंको मारना सर्वथा निषिद्ध है। इस समय ये बहुत ही भयभीत भी रहते हैं। उस समय इन्हें अपनी प्रौढ़ कठोर सींगोंका बल नहीं रहता, वरन् उन अति सुकुमार, छोटी, नयी सींगोंको हर प्रकारकी ठेससे बचाये रखनेका सतत प्रयत्न करना होता है।

"डियर"की सींगकी रचना :

जिस प्रकार शरीरकी बनावटमें रुधिर और धमनियाँ-नाड़ी होती हैं, ठीक उसी प्रकार इन नई सींगोंमें भी नसें रहती हैं और उनमें रुधिरका संचार रहता है, अपरञ्च अति कोमल त्वचासे ढके रहनेके कारण उनमें तनिक भी ठेस लगनेसे अति शीघ्र घाव हो जाता है और तत्काल उसमें-से रुधिर बहने लगता है। कुछ महीनोंके उपरान्त इन

सींगोंकी जड़में माथेके पास एक प्रकारकी गाँठ बनने लगती है जिसके कारण उनमें रुधिरका संचार शनैः-शनैः अवरुद्ध होता जाता है। और तब इन सींगोंका कठोर होना आरम्भ हो जाता है। यद्यपि कालान्तरमें भी इन नसोंकी लम्बी-लम्बी लकीरोंके चिह्न स्पष्ट बने रह जाते हैं।

"डियर" जातिके मुख्य पशु :

भारतवर्षमें मुख्यतः साँभर, चीतल और बारहसिंघे मिलते हैं। कतिपय भिन्न प्रकारोंके नाम :

१. सांभर, २. चीतल, ३. मारखोर, ४. बारहसिंगा, ५. गोंड (Swamr deer), ६. पाड़ा (Hog deer), ७. खाकर अथवा काक्कड़ (Barking deer), ८. कस्तूरी मृग (Musk-deer), ९. चौसिंगा (Four horned antelope) और १०. गुरल (Goral) एक प्रकारकी जंगली, पहाड़ी बकरी।

विदेशोंमें :

इंगलैण्ड, उत्तरी अमेरिका तथा रूस आदिके ध्रुव प्रदेशोंमें क्रमशः (Moose) मूस, (Caribou) कांरिबू और (Rein deer) रेन डियर आदि भिन्न-भिन्न नामके, भिन्न-भिन्न प्रकारके अभी भी पाये जाते हैं।

२. साँभर

नाम :

"साँभर" जिसको संस्कृतमें "शंबर" कहते हैं।

वास-स्थान :

साँभर हरिण-जातिमें सबसे बृहत् आकारके होते हैं। ये भारतवर्षके मध्य प्रदेशोंमें अधिक संख्यामें पाये जाते हैं। मिर्जापुर जिलेमें, जहाँ ये बहुतायतमें हैं वहाँ इनके नरोंको "ठठया" भी कहते हैं।

आकार और तौल :

एक बड़ा नर सांभर एक बड़े घोड़ेके समान होता है, जो लगभग ५ फुट ऊँचा और तौलमें दस मन तकका होता है।

रंग :

इनका रंग अधिकतर लाल अथवा कत्थई होता है। परन्तु कोई-कोई पुराने नरोंका रंग काला हो जाता है जो इतना गहरा काला हो जाता है कि एक बार तो भैंस का भ्रम हो जानेसे मैंने उसपर गोली ही नहीं चलाई।

सींग :

इनकी सींगें ६ नोककी होती हैं। प्रत्येक प्रमुख सींगकी नोंक फटकर चिमटेकी तरह दो हो जाती हैं। और माथेके पास जड़से एक अलग परन्तु मुख्य सींगसे जुड़ी रहती हैं। इस प्रकार छः नोक हो जाती हैं। इनकी सींगें ४८" से ५०" तककी पायी गयी हैं।

सुदृढ़ सींगका दृष्टांत :

इनकी सींगें इतनी सुदृढ़ और बलवती होती हैं कि इनकी दस मनकी विशाल कायाको भी सँभालनेका पूर्ण सामर्थ्य रखती हैं।

एक समय मिर्जापुरके सिलहटके जंगलमें पर्यटन करते हुए एक आश्चर्यजनक दृश्य देखनेमें आया, कि एक नर साँभर एक वृक्षकी शाखामें अपनी सींगोंको फँसाकर अपना पूर्ण भार उनपर देकर झूला झूल रहा है। यह ऐसा विस्मयात्मक दृश्य था कि मैं क्षण भर साश्चर्य देखता ही रह गया, तथा उसपर गोली चलानेका मन ही नहीं किया। परन्तु सहसा उसकी दृष्टि हमारे ऊपर पड़ते ही वह ऐसा भागा कि पल भरमें हमारी दृष्टिसे ओझल हो गया, मैंने पेड़के निकट जाकर देखा कि वृक्षके तनोंपर भी सींगोंके घर्षणके चिह्न थे, जिससे यह प्रतीत होता है कि अपनी सींगोंकी नोककी धारको तीक्ष्ण करनेके हेतु वे ऐसा करते हैं।

आँवलाकी पौष्टिकता और आहार :

जंगलोंमें जहाँ साँभरोंका वासस्थान होता है वहाँ प्रायः आमलकके भी अनेक वृक्ष होते हैं। शीतकालके आरम्भमें जब उनके फलनेका समय होता है। उस समय उन वृक्षोंसे अथवा नीचे गिरे हुए फलोंसे ये बड़े प्रेमसे भोजन करते हैं। कारण, उनको इन फलोंसे अत्यधिक बल मिलता है। "च्यवनप्राश" में आमलकका ही प्राधान्य होता है।

दो महीनेके आमलकके भोजनसे पर्याप्त बल प्राप्त कर लेनेके बाद जनवरी महीनोंमें ये अपनी सहचरीके हेतु प्रतिद्वन्द्विता भी करते हैं।

और भी जंगली फल जैसे बेर, महुआ आदि भी इनका आहार है। ये किसानोंके खेत भी चरते हैं। परन्तु उतना नष्ट नहीं करते जितना घोड़रोज अथवा नील गाय करते हैं।

प्रकृति-वैचित्र्य :

साँभरकी एक विचित्र प्रकृति होती है। ग्रीष्म ऋतुकी प्रचण्ड गरमीमें मध्याह्नके समय विन्ध्याचल पर्वतोंके शिखरोंपर जहाँ अति उष्ण लू वेगसे बहती है वहाँ ये बड़े सुखसे विचरते रहते हैं अथवा किसी वृक्षकी छायामें जिनमें उन दिनों प्रायः पत्ते भी नहीं होते किञ्चित् कालके लिए अपनी संगिनो तथा शावकके साथ दो एक घड़ी बड़े सुखसे विश्राम करते हैं।

इसके विपरीत शिशिर कालमें भी इन्हीं पर्वतोंकी तलहटीके नीचे घने स्थलोंमें, बड़े-बड़े वृक्षोंसे आच्छादित स्थानोंमें जहाँ भुवन भास्करकी रश्मियाँ भी पहुँच न पाती हों वहाँ ये आनन्दसे विचरण करते हैं। केवल इतना ही नहीं अपितु तुषार ऐसे शीतल जलमें अतिशय अनुरागसे घण्टों स्नान भी करते हैं। इस अर्थमें तो ये पूर्ण तपस्वी कहे जा सकते हैं। किन्तु कुछ विशेषज्ञोंका कथन है कि उन दिनों विशेषकर प्रातःकाल उन अरण्योंके मध्य छोटे-छोटे जलाशयोंका भी जल बाहरकी

शीतकी अपेक्षा किञ्चित् उष्ण रहता है। अतएव शीतसे बचनेके हेतु ये उसके अन्दर बैठे रहते हैं।

चर्मकी उपयोगिता :

इनके चर्म भी शोधन करने पर बहुत काममें आते हैं जो मोटे और सुदृढ़ होते हुए भी बहुत कोमल होते हैं, जिनसे छोटी पेटियोंसे लेकर बड़े-बड़े बक्स तक बनते हैं। इसके जूते भी बहुत बनते हैं। परन्तु इनके इस शोधे हुए चर्ममें एक दोष है कि यदि वह पानीमें भींग जाय तो इनकी कोमलता नष्ट होकर रूक्ष हो जाती है। किन्तु यदि पानीसे बचा कर रक्खा जा सके तो इन चर्मोंकी बनी हुई वस्तुएँ अनेक वर्षों तक चलती हैं।

आखेट निषेधका समय :

उत्तर प्रदेशके गवर्मेण्टके नियमानुसार इन्हें पहली अप्रैलसे १४ अक्टूबर तक मारना मना है। प्राय: उन दिनों इनकी सींगोंके गिरनेका भी समय रहता है।

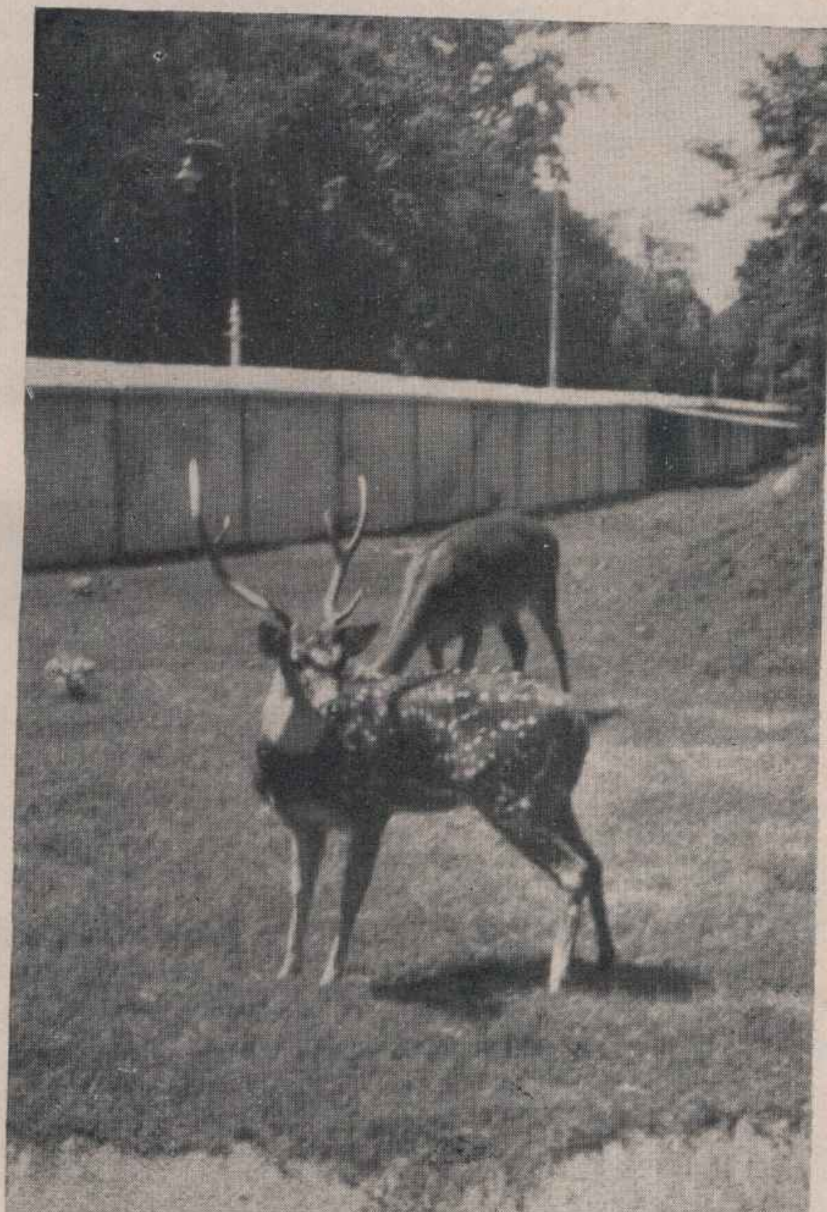
३. चीतल आदि

चीतल :

हरिन जातिमें चीतल सबसे सुन्दर मृग होते हैं।

नाम :

संस्कृतमें इन्हें "सारग", जिसका अर्थ बहुरंगा है, "चित्र मृग", "बिन्दु-चित्रक", "बिन्दु-लांछित मृग" आदि शब्दोंसे सम्बोधित करते हैं। इन्हें "पृषत" भी कहते हैं। आगे चलकर "एण्टलोप" लेखमें इस शब्दका पुन: उल्लेख करूँगा। इन सभी नामोंसे स्पष्ट बोध होता है कि इनके सम्पूर्ण अंगों पर गोल-गोल श्वेत चित्र अथवा चिह्न होते हैं।



चीतल मृग

इनका एक नाम "कर्बुरित गात्र" भी है। "कर्बुर" शब्दका अर्थ है चित्र अथवा बहुरंगा।

उनके कनक ऐसे अंग पर ये धवल चिह्न इनके सौंदर्यको द्विगुणित कर देते हैं। हम मनुष्योंकी क्या गणना जब जगज्जननी सीताजी भी इनके सौन्दर्य पर मुग्ध होकर श्रीराघवेन्द्रसे इनका चर्म लानेके लिये अनुनय विनय करती हैं :

अति विचित्र कछु बरनि न जाई। कनक देह मणि रचित बनाई।
सीता परम रुचिर मृग देखा। अंग-अंग सुमनोहर वेखा॥
सुनहु देव रघुवीर कृपाला। एहि मृगकर अति सुन्दर छाला।
सत्य-संध प्रभु बधकर एही। आनहु चर्म कहति वैदेही॥

(रामचरितमानस : अरण्यकाण्ड)

मिर्जापुरके जंगलोंमें वहाँके लोग इनके नरको "झांक" कहते हैं।

सींग :

इनकी भी सींगें सांभरकी सींगोंके सदृश छः नोक वाली और काफी लम्बी होती है। अच्छी बड़ी सींग ३८ इंच तककी पायी जाती हैं। परन्तु सांभरकी सींगोंकी अपेक्षा ये पतली होती हैं। ये पशु भी उनसे छोटे होते हैं। ये लगभग ३६ इंच ऊँचे और तौलमें दो मन या कुछ अधिक होते हैं। इनकी सींगें प्रत्येक अथवा दूसरे तीसरे वर्ष गिर जाती हैं और पुनः नवीन निकलती हैं। और उसी प्रकार इनको भी उस समय (Stag in velvet) कहते हैं।

आखेटनिषेधका समय :

इनको १५ सितम्बरसे ३१ जनवरी तक मारना मना है। इन्हीं दिनों इनकी सींगें भी गिर जाती हैं।

मारखोर और कस्तूरी मृग :

मारखोर और कस्तूरी मृग अथवा "मृगपालिका" हिमांचलके हिम-आच्छादित स्थानों पर पाये जाते हैं। जहाँ पेड़ पल्लवोंका अन्त होना आरम्भ होता है वहीं इनका वास है।

इनके शरीरमें ताप इतना अधिक होता है कि उन हिम प्रदेशोंमें ही वे रह सकते हैं। उष्ण प्रदेशोंमें तो इनका जीवित रहना कठिन है।

वास-स्थान :

कश्मीरके पीर पंजालके लगभग बारह हजार फुटके उत्तुंग शिखरों पर ये मिलते हैं। किन्तु इनको पानेके लिये अत्यन्त कठोर परिश्रम करना पड़ता है।

काक्कड़ और गुरल :

हिमालयके नीचे पर्वतों पर मसूरी आदि स्थानोंमें काक्कड़ और गुरल मिलते हैं।

बारहसिंगा और गोंड :

बारहसिंगे अधिकतर कश्मीरमें और गोंड नेपालकी तराईमें पाये जाते हैं। गोंड भी बारहसिंगे कहलाते है।

४. एण्टलोप : सादे हरिन

"एण्टलोप" जातिके हरिन :

हरिनोंकी दूसरी मुख्य जाति "एण्टलोप" होती हैं। इस वर्गके अन्तर्गत लगभग दो सौ प्रकारके भिन्न-भिन्न जातिके हरिन पाये जाते हैं।

अफ्रिकामें १७० प्रकार :

केवल अफ्रिकामें इसके भिन्न-भिन्न जातिके लगभग १७० (एक सौ सत्तर) प्रकार हैं।

सींगोंकी विशेषता :

वहाँ विशेषकर अनेक प्रकारकी सीगें होती हैं। कोई एकदम सीधी और बहुत लम्बी होती है। किसीकी नोक झुकी रहती है। और किसी-किसीकी विचित्र-विचित्र ढंगकी टेढ़ी-मेढ़ी होती है।

इनकी सींगें सांभरके ऐसी ठस नहीं अपितु पोपली और गण्डेदार होती हैं ? ये कभी नहीं ? जैसे-जैसे ये बड़े होते जाते हैं, वैसे-वैसे इनकी सींगें भी शरीर और जातिके अनुसार लम्बी होती जाती हैं और उनमें गण्डोंकी संख्या भी बढ़ती जाती हैं। प्रायः एक सालमें एक गण्डा बढ़ता है।

इन सींगोंके अन्दर एक प्रकारकी हड्डी ऐसा ठोस पदार्थ होता है जो ४ इंच से ९ इंच तक लम्बा होता है। इसीके ऊपर सींगें खोलके समान पहनाई रहती हैं। जीवित अवस्थामें ये परस्पर सम्बन्धित होनेसे बहुत सुदृढ़ होती हैं। और किसी प्रकार विलग नहीं हो सकतीं। मरनेके उपरान्त ही अन्दरका मांस गलाकर इनको पृथक् कर सकते हैं।

संस्कृत नाम :

संस्कृतके अमरकोशमें हरिणके पांच पर्यायवाची शब्द दिये हैं :

मृगे कुरङ्ग-वातायु-हरिणाऽजिनयोनयः।

१. मृग, २. कुरंग, ३. वातायु, ४. हरिन और ५. अजिनयोनि।

१. मृग :

यों तो सभी प्रकारके पशुओंको "मृग" कहते हैं। परन्तु यहाँ केवल काले और सुवर्ण रङ्गके ही हरिनोंके अर्थमें इसका प्रयोग किया गया है।

२. कुरंग :

सुवर्ण रङ्गके अथवा हलके ताम्र रङ्गके अथवा बदामी रङ्गके हरिनोंके लिए "कुरङ्ग" शब्दका विशेषकर प्रयोग किया जाता है। "कुरङ्ग ईषत्ताम्रः स्याद्धरिणाकृतिको महान्।"

३. वातायु :

"वातायु" अथवा "वात-मृग" अथवा "वातप्रमी" शब्दोंसे स्पष्ट बोध होता है कि मृग पवनके समान तीव्र गतिसे चलते हैं।

४. हरिण :

"हरिण" शब्द भी "मृग" शब्दके तुल्य केवल दो प्रकारके काले और सुवर्ण रङ्गके हरिनोंके लिए प्रयुक्त होता है।

५. अनिजयोनि :

"अजिन" विशेषकर उस मृगचर्मको कहते हैं जो बालोंसे युक्त हो। व्याघ्र और सिंहकी भी छाल जो बालोंसे युक्त हो उसके लिए भी "अजिन" शब्द प्रयोग किया जा सकता है। इन्हीं मृगचर्मपर सन्ध्या, पूजाकी जाती है। काले मृगचर्मको "एणाजिन" कहते हैं। "एण" काले मृगको कहते हैं जो आगे दिया है।

प्रकार :

आप्टेके संस्कृत कोशमें और कात्यायन-स्मृतिमें तीन प्रकारके हरिनोंका उल्लेख मिलता है :

एणः[१] कृष्णमृगः स्मृतः।

रुरु[२] गौंरमुखमृगः प्रोक्तः शम्बरः[३] शोण उच्यते[१] ॥

(आप्टेका कोश एणशब्द)

---

१. स्मृतिसन्दर्भ। तीसरा भाग। २७ खण्ड। श्लोक ११। पेज १३८१
Published Calcutta 1952

१. "एण:" अथवा "एणक:" काले मृगको कहते हैं। २. जिसका श्वेत मुख अथवा श्वेत चर्म हो उसे "रुरु" कहते हैं। ३. "शम्बर" जो लाल हो, उसे कहते हैं। "शम्बर" शब्द "सांभर" के ही लिये प्रयोग किया गया होगा। सांभरका रङ्ग प्रायः गहरा कत्थई होता है। कोई-कोई बहुत पुराने नर सांभरका रङ्ग काले भैंसेके समान भी होता है।

आप्टेके कोशमें लिखा है कि कालिकापुराणमें पांच प्रकारके हरिनोंका उल्लेख है :

हरिणश्चापि विज्ञेयः पञ्चभेदोऽत्र भैरव।
ऋष्यः(१) खड्गो(२), रुरुश्चैव(३) पृषतश्च(४) मृगस्तथा(५)॥

("आप्टे कोश" हरिणशब्दमें)

१. ऋष्य :

"ऋष्य" अथवा "ऋश्य" अथवा "ऋष्यक" एक प्रकारके नर हरिनको कहते हैं जिसके पैर श्वेत हों।

२. खड्ग :

"खड्ग" अथवा "खड्गिन्, "गंड:" अथवा "गंडक:, गैंड़ा" (Rhinoceros) को कहते हैं। इसके नामके ऊपर किसी-किसीको एक किसी-किसीको दो छोटी किन्तु मोटी और अत्यधिक बलवती सींग होती है। जो बारह इंचसे लेकर चौबीस इंच तक लम्बी होती हैं।

सींग होनेके कारण ही कदाचित् इन्हें भी हरिनोंकी जातिमें सम्मिलित कर लिया है, यद्यपि इनकी जाति भिन्न है। इनकी विशाल काया एक छोटे गजके सदृश होती है। देखनेसे प्रतीत होता है कि ये जैसे कोई पुराकालके जन्तु हों। इनकी त्वचा बहुत ही मोटी होती है तथा उसकी ढाल बनती है।

पितरोंका तर्पण :

किंवदन्ती चली आ रही है कि—

अपने यहाँके क्षत्रिय राजे महराजे, गोरखे, नैपाली, अथवा उत्तम जातिके हिन्दू इनका आखेट कर इसके अँतड़ियाँ निकाले हुए पेटके अन्दर खड़े होकर इनके रुधिरसे अपने पितरोंको अञ्जलि देते हैं। और यह उत्तम प्रकारका तर्पण समझा जाता है। इनके सींगके बने हुए कटोरेसे श्राद्धमें जल और दूधसे तर्पण करते हैं।

वासस्थान :

इनसे सम्बन्धित इसी प्रकार और बहुतसे टोटके हैं। ये आसामके जंगलोंमें, नेपालकी तराईमें और बर्मा तथा अफ्रिकामें पाये जाते हैं।

३. रुरु :

"रुरु" श्वेत मुखवाले हरिनको कहते हैं जैसा कि लिखा जा चुका है—

'विरुरुचे रुरुचेष्टितभूमिषु' तथा **'अथ जातु रुरोर्गृहीतवर्त्मा।'**

(रघुवंश। नवमसर्ग ५१.७२)

४. पृषत :

"पृषत" चीतल हरिन हो कहते हैं। जिनके समस्त अंगमें गोल-गोल श्वेत चिह्न हो। इनका वर्णन पूर्वमें "डियर" जातिमें दे चुका हूँ।

५. मृग :

"मृग" शब्दसे साधारणतया काले और लाल हरिनोंको सम्बोधित करते हैं।

"ऋश्य" और "रुरु" जातिके हरिन मैंने नहीं देखे। सम्भवतः अर्वाचीन कालमें संहारके कारण लुप्त हो गये हों।

कृष्णशार : काले हरिन :

भारतवर्षमें "एण्टलोप" जातिके अन्तर्गत सबसे प्रमुख काले हिरन हैं।

संस्कृत नाम :

इनके संस्कृत नाम—"कृष्णसार", "कृष्णशार", "कृष्णमृग" और "एण" हैं। अंग्रेजीमें ये (Black buck) नामसे प्रसिद्ध हैं।

आकार : सींग :

ये ३० इञ्चसे ३५ इञ्च तक ऊँचे होते हैं और इनकी सींगे १६ इञ्चसे २८ इञ्च तक लम्बी होती हैं।

काले होनेका कारण :

प्राचीनकालसे एक जनोक्ति चली आ रही है कि शरद् ऋतुमें भगवान् भास्करकी प्रचण्ड उष्ण रश्मिसे आतप्त होकर ये काले हो जाते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि ग्रीष्म ऋतुकी श्रीसूर्यदेवकी वैशाख और ज्येष्ठ महीनोंकी प्रचण्ड किरणें भी भादों और आश्विन महीनोंकी उष्णताको नहीं पातीं। रामायणके बालकाण्डमें भी एक स्थानपर लिखा है—"शरदातप भारी।" (११९। दो०) अतः शरद्में ये काले पड़ जाते हैं।

परन्तु यदाकदा एक साथ एक ही गर्भसे लाल-काले दोनों ही प्रकारके शावक जन्म लेते पाये गये हैं।

कुरंग : लाल हरिन :

अधिकतर इनमें लाल अथवा सुवर्ण रङ्गके मृग होते हैं। गाँववाले

इनके नरको "मैंहदिया" नामसे सम्बोधित करते हैं। संस्कृतमें इनको "कुरङ्ग" कहते हैं।

झुण्डोंमें रहना :

साधारणतया ये यूथचारिन् होते हैं। ये झुण्डमें रहना पसन्द करते हैं। आजकल इनकी संख्या बहुत कम हो जानेसे झुण्ड छोटे हो गये हैं। परन्तु ४०–५० वर्ष पूर्व दो-दो सौकी एक-एक टोली होती थी। जिसमें नर-मादा, काले-लाल सभी होते थे।

यदा-कदा, विशेषकर काले मृग विलग होकर स्वतन्त्र जीवन बिताते हैं। कभी-कभी पांच-छः नर मिलकर अपना एक पृथक् यूथ बना लेते हैं।

चरनका स्थान :

अधिकतर ये मैदानोंमें चरते रहते हैं। और इनमें-से कोई-कोई विशेषकर मादीनें[१] रक्षकका काम करती हैं। किसी प्रकारके भयकी आशंका होते ही ये तुरन्त सबको सूचना देती हैं और पलक मारते सब तितर-बितर हो जाते हैं।

मृग-शावक :

सम्पूर्ण जीव जगत्में केवल हरिनोंके ही शिशु, जन्मके दो ही घड़ी उपरान्त अपनी माँके साथ-साथ तीव्र गतिसे भाग सकते हैं। विधिकी सृष्टिमें यदि इनको इतनी विशेषता न मिली होती तो बहुतोंके भोज्य पदार्थ होनेके कारण कालके मुखसे इनका बचना कठिन ही होता।

वेग :

जैसा पहले लिख आया हूँ, संसारके सभी पशुओंमें ये सर्वाधिक

१. रघुवंश ९.५७ लक्ष्यीकृत०।

द्रुतगामी होते हैं। ये पवनके वेगके समान उड़ते जाते हैं मानों धरतीपर इनके पाँव पड़ते ही नहीं।[1] इसीलिए इन्हें "वातायु" भी कहते है।

केवल शिकारी ही, चीता, जिसे "चित्रक" अथवा अंग्रेजीमें (Hunting leopard) कहते हैं, एक ऐसा पशु है जिसे यदा-कदा पकड़ पाता है। इस विशिष्ट चीतेका विस्तृत वर्णन चीतोंके प्रकरणमें करूँगा।

छलांग :

इनकी छलांगोंका दृश्य अति अद्भुत एवं सुमनोहर होता है। एक बार एक मित्रने इनके एक झुण्डमें किसी एकपर गोली चला दी। फिर क्या था, सैकड़ों हिरन एक साथ भाग खड़े हुए। मार्गमें छः-छः आठ-आठ फुटकी जो झाड़ियाँ पड़ती थीं, उनको ये किस आसानीसे उछल डांकते थे मानों उड़ते जाते हों। वह अनुपम दृश्य अवर्णनीय है। उनके सुन्दर श्वेत अधोभाग, अगले दोनों पैर मुड़े हुए और पिछले दोनों लम्बे तने हुए अत्यन्त शोभायमान लगते थे।

एक बार मैंने एक हरिनके पदचिह्न द्वारा उसके लम्बें कुलांचकी दूरीको नापा था। एक पैरसे दूसरे पैर तकका अन्तर पूरे ३२ बत्तीस फुट था। (विवरण—"आगरेके हिरनमें")

ग्रीवा परांमुख करना :

अहेरियों द्वारा पीछा करने पर भागते हरिनोंका ग्रीवा मोड़-मोड़ कर पीछे देखनेका एक स्वभाव होता है, जिससे इनकी गति मन्द पड़ जाती है। इसीलिए ये पकड़में आ जाते हैं। फिर भी ये देखते-देखते पल भरमें ओझल हो हो जाते हैं।

---

१. शाकुन्तल १।७।

इस प्रकार भागते हुए तथा पीछे मुड़-मुड़ कर देखते हुए हिरनका वर्णन महाकवि कालिदासने अपने "अभिज्ञानशाकुंतल"में पूर्णतया सत्य तथा अत्यन्त सुन्दर शब्दोंमें इस प्रकार किया है—

ग्रीवाभंगाभिरामं मुहुरनुपतति स्यन्दने बद्धदृष्टिः,
पश्चार्धेन प्रविष्टः शरपतनभयाद् भूयसा पूर्वकायम् ।
दर्भैरर्धावलीढैः श्रमविवृतमुखभ्रंशिभिः कीर्णवर्त्मा,
पश्योदग्रप्लुतत्वाद्वियति बहुतरं स्तोकमुर्व्यां प्रयाति ॥ १.७ ॥

इसीका राजा लक्ष्मण सिंहका भाषानुवाद है—

फिर-फिर सुन्दर ग्रीवा मोरत, देखन रथ पाछे जो घोरत ।
कबहुँक डरपि बान मति लागे, पिछलो गात समेटत आगे ॥
अधरों ते मग दाम गिरावत, थकित खुले मुखते बिखरावत ।
लेत कुलांच लखो तुम अबही, धरत पांव धरती जब तबही ॥

"बार-बार पीछे मुड़कर इस रथको एक टक देखता हुआ, बाण लगनेके भयसे अधिकतर अपने पिछले आधे शरीरको सिमटा कर आगेके हिस्सेसे मिलाता हुआ, कैसा भागा जा रहा है। थके हुए मृगके मुखसे आधी चबाई हुई घास मार्गमें गिरती जा रही है। और देखो यह इतनी लम्बा छलांगे ले रहा है कि पृथिवी पर इसके पांव ही नहीं पड़ रहे हैं, मानों आकाशमें उड़ता जा रहा हो।"

श्री तुलसीदासजीने अरण्यकाण्डमें भक्तिसे ओतप्रोत स्वयं मारीचके मुखसे इसी दृश्यका कैसा सुन्दर उल्लेख किया है :

मम पाछे धर धावत, धरे सरासन बान।
फिरि-फिरि प्रभुहिं बिलोकिहौं, धन्य न मो समआन॥

(२६ अरण्यकाण्ड, रामायण)

सौन्दर्य :

इनकी गणना संसारके सबसे सुन्दर पशुओंमें है। सर्वाधिक सुन्दर

तो इनके नयन होते हैं जो बड़े-बड़े और मृदुता-युक्त बड़े भोले लगते हैं। भीरु स्वभाव होनेसे ये अति चञ्चल भी होते हैं। बड़े-बड़े कवियोंने इसीलिए सुन्दर नेत्रवाली रमणियोंका सम्बोधन "मृगनयनी" अथवा "मृग-शावक-नैनी" आदि शब्दोंसे किया है। जो अविवाहित तरुणी है उनके लिये "मृग-शावक-नैनी" प्रयोग किया है। जैसे तुलसीदासजी फुलवाड़ी लीलामें बालकाण्डमें सीताजीके लिये लिखते है :

जँह विलोकि मृगशावक नैनी। जनु तँह वरस कमल सित स्रेनी॥

उपयोगिता :

इनके भी चर्म बहुत काममें आते हैं। ब्रह्मचारियोंको तो इन्हीं अथवा "चीतल"के मृगचर्म पर सन्ध्या करना विहित है।

मारनेसे लाभ :

हरिनोंको मारनेसे एक लाभ होता है कि "राइफल"का निशाना और हाथ प्रवीण हो जाता है, हस्तलाघव और स्फूर्ति आ जाती है। इनके आखेटमें निपुण हो जाने पर व्याघ्र आदि बड़े-बड़े और हिंसक जन्तुओंके मारनेमें सुविधा हो जाती है, कारण तब निशाना लगानेमें किसी प्रकारसे चूकनेका भय नहीं रह जाता।

मारनेके निषेधका समय :

उत्तर प्रदेशमें गवर्मेण्टके आदेशानुसार इनको वर्षा ऋतुमें १५ जूनसे १५ सितम्बर तक मारनेका निषेध है।

इन सब जातिके हरिनोंकी मादीनें व बच्चे मारना सर्वथा निषेध है।

चिंकारा :

"एण्टलोप" हरिन जातिके अन्तर्गत एक छोटी जातिका अति कोमल, सुन्दर, सुकुमार हरिन होता है जिसे हिन्दीमें "चिकारा" अथवा

"चिंकारा" कहते हैं। आजकल तो अंग्रेजीमें भी इन्हें (Chinkara) चिंकारा अथवा (Chink) चिंकके लघुनामसे सम्बोधित करते हैं। वस्तुत: यह शब्द "छींक"का अपभ्रंश है। ये प्राय: छींकते रहते हैं। अत: मुखसे "छिंक" ऐसा शब्द निकलते रहनेके कारण इनका नाम करण "छिंक" हो गया।

आकार-सींग :

इनकी ऊँचाई प्राय: २६ इंच तककी होती है और सींगें १४ इंच तककी होती है।

मादीनोंको सींग :

इन्हींकी कतिपय मादीनोंको सींगें होती हैं। परन्तु ये सींगें अत्यन्त छोटी, चिकनी और अंगुलीसे भी पतली लगभग ४ इंचकी होती है।

झुण्ड :

अन्य हरिनोंके समान इनके बड़े झुण्ड नहीं होते। अधिकसे अधिक ये आठ दसकी टोलीमें रहते हैं।

इनकी ६ इंचकी श्वेत पुच्छ सदा हिलती रहती है।

चरनेका स्थान :

जहाँ छोटे-छोटे वृक्ष अथवा झाड़ियाँ हों, पर्याप्त दूर्वा हो वैसे स्थानों पर अथवा छोटी-छोटी पहाड़ियों पर चरते हुए ये पाये जाते हैं।

आहार :

सम्पूर्ण हरिन जाति सर्वथा शाकाहारी होती है। ये झरबैरिया, चिरौंजी, महुआ, आंवला आदिके फल बड़े चावके साथ खाते हैं।

उपयोगिता :

इनके भी चर्म काममें आते है। परन्तु कोमल होनेके कारण इनसे केवल छोटी वस्तुयें बन सकती हैं।

मारनेका निषेधका समय :

इनके भी मारनेका निषेध १५ जूनसे १५ सितम्बर तक रहता है।

घोड़रोज :

"घोड़ रोज" या "नील गाय" भी एक प्रकारसे हरिन जातिमें माने जाते हैं। इनको केवल "रोज"के लघुनामसे भी सम्बोधित करते हैं।

संस्कृत नाम :

इनको संस्कृतमें "गवय" अथवा "गवालूक" भी कहते हैं।

तत्राविध्यच्छरैर्व्याघ्रान् सूकरान् महिषान् रुरून्।
शरभान् गवयान् खड्गान् हरिणाञ्छश-शल्लकान्॥
(भागवत १० स्कन्ध उत्तरार्ध, अध्याय ५८.१५ श्लोक)

तुषारसंघातशिलाः खुराग्रैः समुल्लिखन् दर्पकलः ककुद्मान्।
दृष्टः कथंचिद् गवयैर्विविग्नैरसोढ-सिंह-ध्वनिरुन्ननाद॥
(कुमारसम्भवम् प्रथमसर्ग, ५६)

भ्रमति गवययूथः। (ऋतुसंहार, प्रथमसर्ग २३)

डील डौलमें ये सांभरके बराबर होते है। परन्तु इनका स्वरूप घोड़ेसे कुछ मिलता है और शरीर सांभरसे भी बड़ा और भारी होता है।

चाल :

इनकी चाल सुन्दर नहीं होती। इसका कारण है कि अगला स्कन्ध-भाग पिछले पुट्ठेसे अधिक ऊँचा होता है। इसलिए इनकी चाल और दौड़में भचक होती है। किन्तु असमतल ऊबड़-खाबड़ भूमि पर भी पर्याप्त वेगसे दौड़ लेनेके कारण एक अच्छे घोड़े द्वारा भी इन्हें पकड़ना कठिन है। इनके टापोंसे भी, दौड़में, घोड़ोंके टापों सा ही टपाटप शब्द निकलता है। सांभरकी दौड़में भी शब्द होता है, किन्तु धीमा होता है।

गायसे तुलना :

गाय बैलके सदृश इन्हें भी लम्बी पूंछ होती है। इनका रंग नीला होता है इसलिए इन्हें "नील गाय" भी कहते हैं। और कदाचित् इसी कारण हिन्दू लोग इसे मारना पसन्द नहीं करते। परन्तु पुराने नरोंका ही रंग नीला होता है। मादीनें और छोटे नरोंका रंग पिंगल अथवा भूरा होता है।

नरोंके गलेमें काले बालोंका एक झुब्बा लटकता रहता है।

सींग :

नरोंको बहुत छोटी सींगें होती है। सामान्यतः ८ इंच तककी होती है। कोई-कोई ११ इंचसे कुछ लम्बी मिली है। इनके भी मादनोंको सींग नहीं होती। अत एव ये गायसे सर्वथा भिन्न हैं।

वास :

ये घने जंगलोंमें नहीं रहते। अपितु गाँवके निकट ही इनका वास होता है। छोटे-छोटे पेड़ अथवा झाड़ियोंसे युक्त छोटी पहाड़ियों पर अथवा छोटे-छोटे पेड़ तथा दूर्वा-युक्त मैदानोंमें ये रहते हैं।

आहार :

जंगली बेर और पत्ते तथा महुआ आदि इनका आहार है। ये खेती-के सबसे बड़े शत्रु होते हैं। रात भरमें खेतके खेत चर जाते हैं।

विशिष्ट गुण :

इनमें एक विशिष्ट गुण है कि बहुत काल तक ये बिना पानीके भी रह सकते हैं।

झुण्ड :

ये भी झुण्डमें रहना पसन्द करते हैं। परन्तु इनकी टोली बहुत छोटी होती है। साधारणतया ये चारसे दस तक एक साथ रहते हैं। एक बार एक टोलीमें अट्ठाईसकी संख्या मैंने गिनी थी। परन्तु पुराने नर प्रायः अकेले रहते हैं।

उपयोगिता :

इनके भी चर्म सांभरके चर्मकी भाँति काममें आते हैं, परन्तु उतने अच्छे और कोमल नहीं होते।

शेरपुरका हिरन :

बहुत दिनोंकी बात है सन् १९१९ में चाचाजी, मामाजी, एक मित्र तथा चाचाजीके एक मुस्लिम शिकारी मित्र सुग्गन मियाँके साथ नाव पर घूमने निकले।

हेमन्त ऋतु थी, "क्रिसमस"का दिन था, चहुँओर विशेष कर गंगाजी पर प्रबल शीतका आधिपत्य था, हम लोग प्रचुर मात्रामें कपड़े पहन-ओढ़कर प्रातःकाल नौकारूढ़ हुए।

गंगाजीके ऊपरकी ओर बढ़े। ऊपर जानेमें दो सुविधायें रहती हैं। एक तो जल निर्मल मिलता है जो नीचे जानेसे सब नगरों और गावोंसे

निकली मलिनताके कारण मलिन होता जाता है। दूसरे, धाराके साथ-साथ नीचे लौटनेमें सुगमता और शीघ्रता दोनों ही होती है।

गंगाके एक ओर, फैले हुए लहलहाते हरे भरे खेतों तथा दूसरी ओर ऊँचे नीचे टीलों, करारों तथा उनके ऊपर विभिन्न प्रकारके वृक्षोंसे युक्त सुन्दर दृश्यावलोकन करते हुए, मध्याह्न तक हम लोग ऊपर ही बढते गये।

लगभग सात मील जानेके उपरान्त उस पार "शेरपुर" नामका एक छोटा सा गाँव है। वहीं पहुँच कर हम लोगोंने नाव लगादी। और करारेके ऊपर चढ़कर गाँवमें गये तथा वहाँसे दो चार ग्रामीणोंको लेकर हरिनोंकी खोजमें चले।

हम लोग घण्टों घूमे किन्तु कई मीलका चक्कर लगानेके उपरान्त भी कोई हरिन हाथ न आया। पहले तो वे देख ही बहुत कम पड़े। दूसरे जो देख भी पड़े वे बहुत दूर थे और चौकन्ने थे, इसलिए पास नहीं पहुँचने देते थे। अन्तमें थककर हम लोग लौटे और अपनी-अपनी बन्दूकोंमें से कारतूसोंको निकाल कर उन्हीं पथ प्रदर्शकोंके हाथमें दे दिया।

अब चलनेमें कुछ सुविधा हुई। मार्गमें मटर और चनेके खेत मिलते जाते थे। अतः हम लोग बीच-बीचमें चनेके साग तथा मटर तोड़-तोड़ कर चर्बन करते व हँसते बोलते लौटे आ रहे थे।

इतनेमें खेतके उस पार तीन चार जांघिल पक्षी बैठे हुए देख पड़े। सब लोगोंकी यह राय हुई कि खाली हाथ लौटनेसे इनमें से एकको भी ले चलना अच्छा होगा। सब लोग चना व मटर खानेमें ऐसे तल्लीन थे कि यह भी कार्य मुझे ही सौंपा गया।

मैंने ग्रामीणसे अपनी बन्दूक ली और उसमें नम्बर १ का छर्रा भरा। अन्य साथी वहीं खड़े होकर खाते-खाते तमाशा देखने लगे।

मैं बन्दूक भरकर खेतकी मेड़से मटरके खेतमें जैसे ही उतरा कि ठीक पावोंके नीचे ही से दस बारह हरिनोंका झुण्ड भरभराकर भाग खड़ा हुआ। चना मटर खाकर वे आरामसे दुबके पड़े थे जो मेरे उतरते ही खड़बड़ा कर उठे और जिधर समझमें आया उधर ही भाग चले।

मुझे कारतूस बदलनेका अवसर मिला ही नहीं और जल्दीमें उसी कारतूसको भागते हुए एक हरिन पर चला दिया। वह हरिन मुझसे उस समय केवल तीन गजकी दूरी पर रहा होगा। इस कारण कुछ छर्रे गोलीकी तरह उसके पुष्ट भागमें पिछले पैरोंके ऊपर एक ही स्थान पर लगे। एक तो छोटे छर्रे दूसरे मर्म-स्थान पर न लगनेसे जानवर वहाँ गिरा तो नहीं, किन्तु एक बार लड़खड़ाया अवश्य. जिससे मुझे भान हो गया कि उसको चोट गहरी ही लगी है। परन्तु फिर भो वह भागता ही गया। यद्यपि अब उसकी दौड़में तेजी न थी। अतः मैं भो उसके पीछे-पीछे चला।

इधर मेरे साथी हाथके मटर व चनेको फेंक, ग्रामीणोंसे अपनी-अपनी बन्दूकें छीन-छीन कर जेबसे जल्दी-जल्दी कारतूसें निकाल लगातार चानमारी करने लगे। उन्होंने दस बाहर कारतूसें चलाई होंगी परन्तु शीघ्रता और व्यग्रताके कारण किसी भी हिरनको एक भी छर्रा नहीं लगा।

उधर मैं अकेला अपने उस हरिनके पीछे भागता जाता था। अब उसके कूल्हे पर छः इंच गोलाकार दाग जहाँ छर्रे लगे थे स्पष्ट नजर आने लगा। थोड़ी दूर और जाने पर तो उसकी गति बहुत ही धीमी पड़ गयी। परन्तु तब तक भी वह इतना दूर था और कभी-कभी खेतोंमें इस प्रकार छिप जाता था कि दूसरी बार उसके ऊपर बड़े छर्रेका कारतूस चला ही नहीं पाता था।

हरिन कभी भी नंबर एकके छोटे छर्रेसे मारा नहीं जाता और इसी

कारण मनमें आशंका थी कि कहीं वह भाग न जाय। परन्तु अत्यन्त निकटसे छर्रे लगनेसे उसको क्षति काफी पहुँची थी। अतः उसको बहुत वेगसे भागनेकी शक्ति नहीं रह गयी थी।

इसी बीचमें हमारे साथी लोग मुझे बुलाने लगे। वे पुकार-पुकार कर कहने लगे कि किसी जानवरको गोली नहीं लगी, लौट आओ। परन्तु मैंने उच्च स्वरसे उत्तर दिया कि मेरे हिरनको गोली लग गयी है और वह कहीं निकटमें ही गिरने वाला है। यह सुन मेरे मुस्लिम साथी अपने धर्मानुसार उसकों जबह करनेकी नियतसे दौड़े। पर जब तक वे वहाँ पहुँचे-पहुँचे तब तक तो वह एक दम ही निष्प्राण हो चुका था।

जहाँसे गोली लगी थी वहाँसे पूरे ४०० गज जाकर तब वह गिरा और गिरते ही समाप्त हो गया था। पीछेसे पता चला कि छर्रे काफी दूर तक उसके शरीरमें प्रवेश कर गये थे। कुल छर्रे केवल पाँच इंचकी परिधिमें लगे थे। उस हिरनके अति निकट होनेके ही कारण छर्रे बिलकुल फैल न पाये। अत एव उन्होंने एक बड़ी गोलीका काम किया। पर छर्रे छोटे होनेके कारण उनमें धक्केकी शक्ति बहुत कम थी। इसलिए वह पशु वहीं नहीं गिरा।

जिस समयकी यह घटना है उस समय याने आजसे लगभग चालीस वर्ष पूर्व तक शिकारी अधिकतर दो नाली अथवा एक नाली छर्रेकी ही बन्दूकोंसे शिकार खेलते थे और प्रायः हरिनों ही का शिकार करते थे। उसके बाद हरिन भी बन्दूककी मारकी दूरी समझ गये और एक सौ गजके भीतर शिकारीको आने ही नहीं देते थे। तब छोटे राइफलका समय आ गया। और अब तो हरिन पाँच सौ गजकी दूरीसे ही भागने लगे तथा प्रायः लोपसे होने लगे, कारण अब लोग इनको अन्धाधुन्द मारने लगे हैं।

हरिनोंके आखेटने हम लोगोंको बहुत-सी बातें सिखायीं कि कब कैसे दुबक-दुबककर प्रत्येक झाड़ी व पेड़का आड़ लेते, किस प्रकार पशुओंके निकट पहुँचना चाहिए और इतना ही नहीं, हवाका भी रुख देखना चाहिए। यदि हम लोगोंकी ओरसे पशुओंकी ओर हवा बहती हो तो वे तुरन्त भाग खड़े होंगे, नहीं, चौकन्ने तो अवश्य ही हो जायँगे।

हमारे एक सिक्ख मित्र एक हाथमें पत्तोंका एक बड़ा-सा टट्टर लेकर उसकी आड़में धीरे-धीरे हरिनोंके काफी पास पहुँच जाते थे। परन्तु उतना भारी टट्टर लिए-लिए शिकार करना एक बहुत बलवान तथा हृष्ट-पुष्ट पुरुषका ही काम है।

आगरेके एक शिकारीने एक बहुत सरल-सी युक्ति निकाली।

जब ऐसे खेतमें उतरे कि हरिनोंके आगे किसी चीजकी ओट न मिले तो धीरे-धीरे बगली होकर उनकी ओर बढ़ता जावे और उनकी ओर देखे नहीं बल्कि बीच-बीचमें रुक-रुककर चना व मटर व जिस चीजका खेत हो उसे तोड़नेका अभिनय करे। ऐसा करनेसे वे काफी पास आ जाने देते हैं, क्योंकि उनको यही समझमें आता है कि ये सादे ग्रामीण हैं।

किन्तु यदि बन्दूक उठाने और निशाना लगानेमें वे देख लें और भाग खड़े हों तो एक बार मुँहसे सीटीकी आवाज करे। बहुत सम्भव है वे एक क्षणके लिए अवश्य खड़े हो जायँगे। शिकारीके लिए इतना समय पर्याप्त हो जाना चाहिए।

यद्यपि सच पूछिये तो यह युक्ति उचित नहीं प्रतीत होती। यह उनके साथ अन्याय अथवा छल करना है। असली आखेटमें तो उनको भी अवसर देना चाहिए।

आगरेका हिरन

आगरेके विषयमें, जहाँ मैंने सन् १९२६ से १९२८ तक तीन वर्ष

व्यतीत किये, यह कहना ही पड़ेगा कि अन्ततोगत्वा यह राजस्थान मरुभूमिका ही तो प्रवेश-द्वार है। अतएव आस-पास वहाँ घने जंगल हैं ही नहीं, जहाँ अधिक संख्यामें बड़े-बड़े वन्य पशु तथा उनके कारण हिंसक जन्तु भी रह सकें।

लगभग साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व मुगल सम्राट् बाबरके समय तक अवश्य फतेहपुर सीकरीके पास सिंह मिल जाते थे। सिंहोंके लिए घने जंगलोंकी आवश्यकता नहीं होती। बड़ी-बड़ी घासोंके मैदान ही पर्याप्त हैं जो वहाँ बहुतायतसे हैं।

कुछ ऊँचे-नीचे टीले भी हैं, लम्बी-लम्बी दूर्वाओंसे युक्त करारे भी हैं। जहाँ अल्प संख्यामें हरिन अवश्य चरते रहते हैं। ये कोई बड़े-बड़े झुण्डमें तो नहीं रहते पर पाँच-सातकी टोलियाँ प्रायः देख पड़ जाती हैं।

आगरेसे भिन्न-भिन्न नगरोंकी ओर कई सड़कें, जैसे एक ग्वालियरको, दूसरी फतेहपुर सीकरी, तीसरी मथुरा और देहली, चौथी अलीगढ़ आदिको जाती हैं—इनमेंसे किसी भी सड़क पर पन्द्रह-बीस मील जाने पर किसी भी एक ओर विशेष कर टीले और करारोंकी ओर, खेतों व घासोंके मैदानोंमें केवल दो-तीन मील भीतर जाने पर हरिन प्रायः देख पड़ जाते हैं।

आगरेमें मुझे एक शिकारी मिल गया जो प्रति रविवार या हर पन्द्रहवें दिन आ जाता था। उसके साथ किसी एक सड़क पर चला जाता था और पाँच-छः घण्टे बाद एक या दो हरिन लेता आता था।

एक बार मोटरसे देहलीसे आगरे आ रहा था। मार्गमें सौ दो सौ हरिनोंका एक बड़ा भारी झुण्ड देखनेमें आया। वहाँ इनके भागनेका वेग तथा लम्बी-लम्बी और ऊँची-ऊँची कुलाँचोंके मनोहर तथा चमत्कारी दृश्य भी देखे।

सायंकाल हो चला था और आगरा पहुँचनेमें लगभग बीस मील शेष रह गया था। इतनेमें देखता हूँ कि बाईं ओर दूरसे एक बहुत बड़ा हरिनोंका झुण्ड भागता हुआ चला आ रहा है। उनके सड़क लांघनेके पहले ही उनके निकट पहुँच जानेके निमित्त मैंने मोटरकी गति तेज बढ़ा दी। वे हिरन भी अत्यन्त वेगसे भागते हुए और मार्गकी झाड़ियोंको जो कि पाँच-पाँच छः-छः फुट ऊँची और उतनी ही चौड़ी थी, आसानीसे लांघते तथा कूदते हुये चलते चले आ रहे थे।

मोटर पहुँचनेके पहले कुछ हरिन तो राजपथ लांघ चुके थे और शेष लांघनेकी तैयारीमें थे। उनको अति निकटसे देखनेके अभिप्रायसे मैंने मोटरकी गति तीव्र कर दी और पहुँच भी गया। परन्तु वे कुछ तो मोटरके आगे ही से अत्यन्त वेगसे निकल भागे और कुछ मोटरके ऊपर छलांग मारते निकल गये। कुशल हुई कि एक भी पहियेके नीचे नहीं आये और मोटरके आगेके शीशेसे नहीं टकराये नहीं तो मुझे भी और मोटरको भी गहरी क्षति पहुँचती। इनके वेग तथा छलांगोंका दृश्य अति अद्भुत, अपूर्व और सुन्दर था।

एक दिन ऐसे ही शिकारीके साथ मोटरपर बैठकर मैं ग्वालियर रोड पर घूमने निकला। बीस-पचीस मील जाने तथा पाँच-छः मील खेतोंमें पैदल चक्कर काटनेके उपरान्त भी जब कोई हरिन देख नहीं पड़ा तो खाली हाथ लौटनेकी सम्भावनाके कारण मनमें कुछ उदासी छाना स्वाभाविक था।

इतनेमें दूर पर चार-पाँच हरिनोंका एक छोटा-सा झुण्ड देख पड़ा। उनको देखते ही उदासी तो तुरन्त विलीन हो गयी और उसके स्थान पर शरीरमें एक स्फूर्ति आ गयी।

मैंने तत्काल अपने ड्राइवर और शिकारीसे कहा कि तुम लोग मेरे विपरीत दिशामें जाकर हरिनोंको धीरे-धीरे मेरी ओर हाँकते आओ कि जिसमें वे मेरी ओर बढ़ते आवें तथा मेरी राइफलके निशानेमें भी आ जावें।

वे लोग कुछ ही दूर गये होगे कि एकाएक वे हरिन मेरी ही ओर भागते हुए आते देख पड़े। कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि सम्भव है चीता आदि कोई हिंसक पशु देखकर वे भागे हों, अथवा कोई अन्य शिकारी द्वारा पीछा किये गये हों या गांव वालोंके ही द्वारा भगाये गये हों। जो भी हो, इसका पता तो चला नहीं, पर मेरे पक्षमें तो अच्छा ही रहा. क्योंकि वे मेरी ही ओर भागते आ रहे थे।

जब वे लगभग सौ गज समीप आगये होंगे तो उन्होंने मुझे देख लिया। मुझे देखते ही वे एकदम मुड़कर बगली होकर छलांग मारते हुए भागने लगे। सामने जो झाड़ियाँ पड़ती उनको आसानीसे लाँघते हुए वे भागे जा रहे थे और बीच-बीचमें बड़ी लम्बी-लम्बी कुदानें ले रहे थे। पश्चात् पैरोंके निशान मापनेपर अट्ठाईस-अट्ठाईस फुटकी लम्बी छलांगें निकलीं। एक छलांग तो जो उसने मेरी दूसरी गोली चलनेके बाद ली थी वह तो पूरे ३२ फुटकी थी। वह गोली उसके ठीक पेटके नीचे दोनों पैरोंके बीच गिरी थी।

इनको जब इतने पाससे अपने सामनेसे होकर भागते देखा तो वहीं खड़े होकर एक अच्छे सबसे बड़े सींगवाले कृष्णमृग पर गोली चलायी थी। किन्तु वह इतनी वेगसे भागा जा रहा था कि गोली पूरे एक गज पीछे गिरी। बन्दूककी आवाज होते ही उसने एक लम्बी कुदान ली और उससे भी तेज भागने लगा। मैंने जल्दीसे दूसरी गोली चलायी जो ठीक उसके पेटके नीचे गिरी। इसपर उसने एक और बहुत लम्बी छलांग ली और फिर अनेकों छलांगोंके साथ अति वेगसे भागने लगा। इतनेमें मैंने कुछ और अधिक आगे निशाना साधकर तीसरी गोली चलायी जो संयोगवश छलांग लेते समय उसके गरदन पर लगी और वह हवा ही में कलैया खाकर वहीं गिर पड़ा!

लिखने कहनेमें तो काफी समय लगता है पर ये सारी घटनाएँ

क्षण भरमें घटित हो गयी। उसे गिरा हुआ देखकर बड़ी ही प्रसन्नता हुई कि खड़े ही खड़े भागते हुए हरिनपर निशाना लगा सका।

इसमें कोई संदेह नहीं कि लक्ष्यवेधमें प्रवीणता पानेके लिए भागते हुए हरिन अथवा उड़ती हुई चिड़ियोंको निशाना बनानेसे बढ़कर कोई अन्य साधन नहीं। इससे राइफल भी "हाथ पर चढ़ी" रहती है।

उसके पास पहुँचकर जब सींग नापी तो पूरे २४ इञ्च लम्बी निकली। जहाँतक मुझे ज्ञात है इतनी लम्बी सींग इधर "उत्तर-प्रदेश" में तो नहीं मिलती।

फतेहपुर सीकरीका हिरन

उन्हीं दिनों एक बार मेरे आखेट गुरु मेरे परम स्नेही पितृव्य श्री सीतारामजी साह अपने बड़े पुत्र श्री सत्यप्रतापजीके साथ आगरे घूमने आये थे। उनको देखकर मेरी प्रसन्नताका पारावार न था।

आगरेके सभी दर्शनीय स्थल दिखलानेके उपरान्त एक दिन उन्होंने हरिनोंके आखेटकी चर्चा चलायी। कारण, वे अपने पुत्र द्वारा हरिनका शिकार करवाना चाहते थे जिससे उसे भी इस दिशामें कुछ अनुभव प्राप्त हो।

अतः मैंने अपने उसी पुराने शिकारीको बुलवा भेजा और उससे परामर्श कर अपनी मोटर निकाली और सबको साथ ले फतेहपुर सीकरीकी ओर चल पड़ा। आगरेसे यह जगह लगभग चौबीस मील है।

हम लोग चौदह-पन्द्रह मील गये होंगे कि सड़कसे दाहिनी ओर कुछ दूर एक हिरन देख पड़ा। मोटरको सड़कके एक किनारे रोक हम लोग उतर पड़े। फिर आपसमें विचार-विमर्श कर यह तय किया कि हम लोग पृथक्-पृथक् दो तीन ओरसे आगे बढ़ें, ताकि जानवरको घेर लें जिसमें उसके निकल भागनेकी सम्भावना कम रहे और सत्यप्रतापजी बीचसे धीरे-धीरे बढ़ते आवें।

थोड़ी दूर आगे जानेके बाद एक लम्बा टीला मिला। उसके दूसरी ओर एक छोटी पतली नदी बह रही थी। टीलेकी आड़ ले हमलोग शीघ्रतासे आगे बढ़े।

हरिन बीच-बीचमें हमलोगोंकी ओर एक बार देख लेता था और फिर चरने लगता था। तब तक उसको किसी बातका संशय नहीं था, क्योंकि हमलोग उसकी ओर सीधे जा नहीं रहे थे और न उसकी ओर देख ही रहे थे, अपितु उसकी दृष्टि बचा कर तिरछे होकर बढ़ते थे और उसके समीप होते जाते थे।

तब तक सत्यप्रतापजी भी निकट आ गये। हरिन अब अपनेको घिरता देख भागनेकी राह ढूँढ़ने लगा। कभी एक ओर भागता तो कभी दूसरी ओर सहसा मुड़ जाता। कारण यह कि हम लोगोंने तीन ओरसे तो उसे घेर ही लिया था और चौथी ओर उसके सम्मुख नदी थी।

यदि बड़ा पशु होता जैसे सांभर आदि तो बिना कोई शंकाके सीधे पानीमें कूदकर निकल भागनेका प्रयत्न करता। परन्तु उसको आशा थी कि हम लोगोंके बीचसे कदाचित् निकल जा सके, क्योंकि हम लोगोंमें उसको घेरनेके निमित्त आपसमें काफी अन्तर था। इस अभिप्रायसे वह इधर उधर दौड़ लगा रहा था।

इतनेमें सत्यप्रतापजीने उस पर गोली चला ही दी। वह घायल होकर सीधे नदीकी ओर भागा और टीलेके कारण तुरन्त दृष्टिसे ओझल हो गया।

हम लोग दौड़कर टीले पर चढ़े और बहुत दृष्टि दौड़ायी परन्तु वह कहीं भी दृष्टिगोचर न हुआ। उस पार भी मैंदान होनेसे मीलों स्पष्ट देख पड़ता था, परन्तु उधर भी दूर तक कहीं नहीं देख पड़ा।

उसके इस प्रकार सहसा अन्तर्हित हो जानेसे हमलोग आश्चर्य-चकित हो गये कि अन्ततोगत्वा वह गया तो गया कहाँ?

जब कुछ समझमें नहीं आया तो उसके पदचिह्नको देखते-देखते आगे बढ़े। पानीके किनारे पहुँचकर चिह्न भी लोप हो गये। इससे यही अनुमान लगाया गया कि हो न हो पार जानेके हेतु वह पानीमें अवश्य कूद गया होगा और घायल होनेके कारण उसकी शक्ति क्षीण हो गयी होगी अतएव बहुत सम्भव है वह पानीमें ही डूब गया हो।

छोटी नदी गहरी न थी। एक नौकरको पानीमें ढूँढ़नेके लिए उतारा। लगभग पन्द्रह-बीस मिनट ढूँढ़नेके उपरान्त उसकी सींगें उसके हाथमें आयीं। फिर क्या था, दूसरे आदमीको भी भेज उसको निकलवाया।

उसके मिल जानेसे हमलोग सभीको प्रसन्नता हुई। चाचाजीने कहा कि इसकी दो प्रकारसे मृत्यु हुई, एक गोलीसे दूसरे पानीसे।

मुझे इस बातसे सन्तोष था कि उनकी आज्ञाका पालन करनेमें मैं समर्थ हुआ। हम लोग सानन्द घर लौटे।

कोटवाका चिंकारा

विन्ध्य गिरिके मिर्जापुर नगरसे लगभग नौ मील दूर पहाड़ी पर स्थित कोटवा नामक एक ग्राम है। जहाँ हरे भरे जंगल, छोटे-छोटे जल-प्रपात, खजुरी नामक एक लहराती हुई छोटी नदीसे युक्त सुरम्य स्थानमें मिर्जापुर नगर-पालिकाने एक सुन्दर बंगलेका निर्माण किया है। स्वास्थ्यके लिए वहाँका जलवायु अत्यन्त लाभप्रद है। वहाँके जंगलोंमें चीते, शूकर, सांभर तथा चिकारे आदि पशु भी बहुधा पाये जाते हैं।

वर्षाऋतुके तीन-चार मास वहाँकी शोभाको द्विगुणित कर देते हैं। अतः सितम्बर सन् १९२८ के आरम्भमें मामाजीके साथ, सकुटुम्ब पर्यटनार्थ निकले।

यद्यपि नियमानुसार १५ सितम्बर तक अधिकतर पशुओंके आखेटका तो निषेध है तथापि मैंने वहाँके रमणीय दृश्योंका, नदी तथा झरनोंमें

स्नान और जलकेलिका तथा वन-विहरण और वनभोजन (पिकनिक) का पत्नी तथा बच्चों सहित पूर्ण आनन्द उठाया। एक ही सप्ताहमें शरीरमें बल और स्फूर्तिका संचार होने लगा।

प्रतिदिन प्रात: सायं बच्चोंको भी साथ लेकर हम लोग मोटरमें घूमने निकलते थे। कभी पन्द्रह मील, कभी बीस मील चक्कर काटकर लौटते थे।

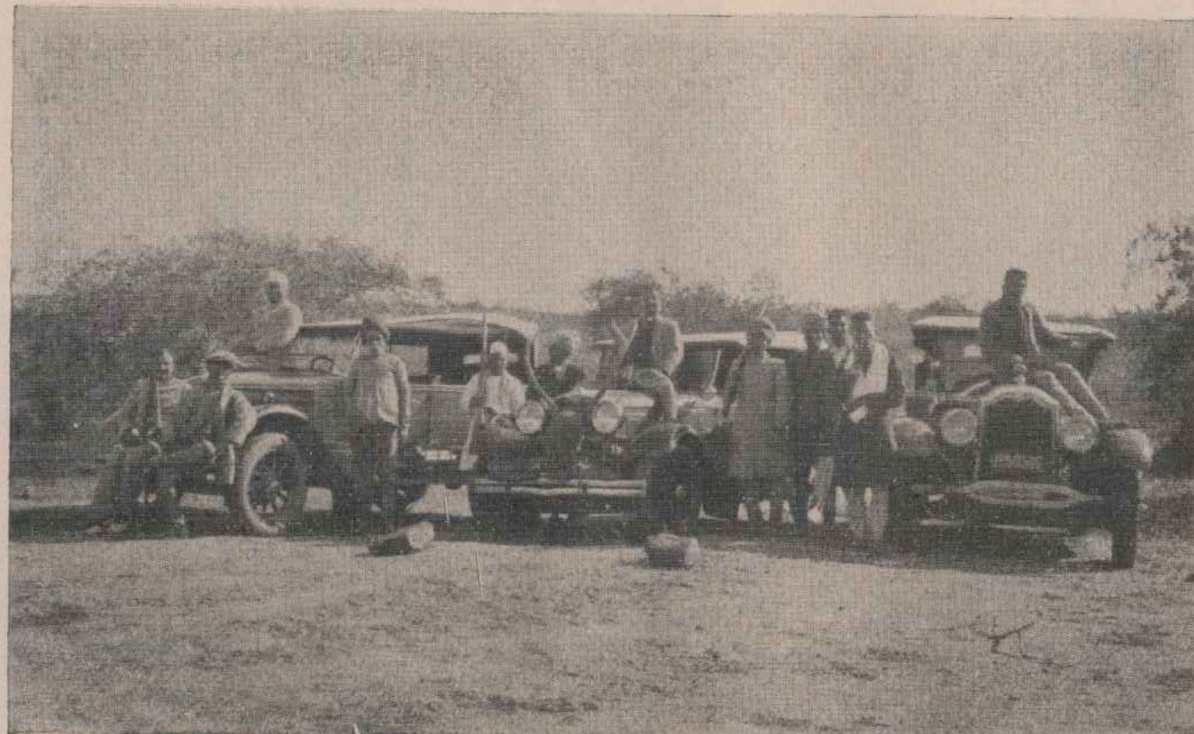
नित्यकी भाँति १५ सितम्बरको भी सायंकाल मोटरमें बैठ हमलोग घूमने निकले पर यों ही उस दिन "२२ बोर" की H. V. राइफल साथ रख ली, क्योंकि इस दिनसे शिकार खेलनेकी अनुमति थी।

संयोगकी बात है कि मोटर चलाता हुआ मैं कोटवाके बंगलेसे "राबर्ट्सगंज" की ओर दस पन्द्रह मील जानेके उपरान्त लौटा आ रहा था कि बाईं ओर एक छोटी-सी पहाड़ी पर एक अच्छे सींगका चिकारा चरता हुआ दिखायी पड़ा। मैंने तुरन्त मोटर रोकी और इंजनको चलता छोड़ जल्दीसे राइफल चला ही तो दी।

निशाना ठीक लगनेकी आशा तो बहुत कम थी, कारण सायंकाल हो गया था, राइफलकी "मक्खी" (Front sight) कठिनतासे देख पड़ती थी, तथा इंजन चलनेसे मोटर कुछ-न-कुछ हिल ही रही थी। तीसरे चिकारा क्षणभरके लिए भी एक स्थान पर स्थिर ही नहीं रहता था। परन्तु भाग्यवश गोली सटीक गरदन पर लगी और वह वहीं उलट गया। यदि इतनी शीघ्रता न करता तो वह अवश्य भाग जाता।

यह इसलिए संभव हुआ कि कुछ दिन पहले ही मैं आगरेसे लोटकर आया था। अत: राइफल हाथ पर चढ़ी थी, क्योंकि वहाँ हिरनों तथा चिंकारोंके आखेटका बहुत अभ्यास हो गया था।

चिंकारेकी सींग बहुत बड़ी तो नहीं फिर भी ११ इंच की थी।



सांभर की सिंग के साथ लेखक अपने छोटे चाचाजी, भाइयों और मित्रों के साथ

सिलहटका सांभर

हमारे वासस्थान वाराणसीसे लगभग नब्बे मीलपर मिर्जापुर प्रान्तमें कर्मनासा नदीके ऊपर "सिलहट" नामक बाँधपर नहरका एक सुन्दर बँगला है।

सिलहटका बँगला पहाड़के ठीक नीचे, बहुत ही रमणीक, ऊँचे तथा सुन्दर स्थानपर बना हुआ है बंगलेके सामने लगभग पचास फुट नीचे घूमती हुई कर्मनासा नदी बहती है। दो पहाड़ोंके बीच उस नदीके ऊपर इन्जीनियरोंने एक सुदृढ़ बाँध बनाया है।

बँगलेके एक ओर जंगल, पीछे पहाड़, नीचे दोनों ओर जंगलके बीच बहती हुई नदी, उसके उस पार घने पेढ़ोंसे भरा हुआ एक बड़ा टापू और उसके ऊपर एक बड़ा चौड़ा पर्वत, सब मिलकर अत्यन्त मनोहर दृश्य उपस्थित करते है।

स्थान रमणीक होते हुए भी यहाँका जलवायु स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अनुकूल नहीं है। कर्मनासा नदीका जल तो "यथा नाम तथा गुण:" की उक्तिके अनुसार एकदम ही स्वास्थ्यनाशक है। दूसरे अधिक गरमीमें उसका जल प्राय: सूख जाता है। केवल कहीं-कहीं गड्ढोंमें कुछ थोड़ा-सा रह जाता है, जिनमें कभी-कभी कुछ छोटे मगर देख पड़ जाते हैं। गँदले जल तथा घने जंगलोंके कारण यहाँ मच्छर भी बहुत हैं। पीने योग्य जल तो केवल एक छोटे कूपमें है जो बँगलेसे लगभग चार सौ गज दूर चौकीदारके आवासके पास है। और यह भी जल अच्छा नहीं, अत: इसे भी उबाल कर ही पीना उचित है।

सन् १९३० के मार्चमें वसन्त ऋतुमें होलीके अवसर पर बच्चोंके स्कूलकी छुट्टी होनेके कारण मैंने सकुटुम्ब सिलहटके लिए प्रस्थान किया।

वहाँ पहुँच कर दूसरे दिन प्रात: काल सूर्योदयके पूर्व ही हमलोग मामाजी तथा बच्चोंके साथ घूमने निकले तथा बाँधके ऊपर होते हुए उस पार पहाड़ोके नीचे जंगलके किनारे पहुँचे।

ऊषाकी सुन्दर वेलामें शीतल मन्द सुगन्धित समीरका आनन्द लेते हुए तथा वन-सुषमासे मुग्ध होते हुए हम लोग अत्यन्त प्रसन्न मनसे वनकी ओर पगडण्डी पर चलते चले जा रहे थे। इतनेमें एक ओर पगडंडी घूमी तो एकाएक तीन चार सांभर सामने खड़े देख पड़े। वे एक सूखे पेड़के नीचे खड़े थे और इतने शान्त खड़े थे कि उनमेंसे किसीकी भी सींगें नहीं देख पड़ती थीं। वे सूखे वृक्षकी टहनियोंमें मिलकर एकदम ही एकाकार हो गयी थीं। सूर्योदयमें बिलम्ब था, पूर्ण प्रकाश न होनेके कारण सभी चीजें धुँधली तथा अस्पष्ट थीं। अतएव सींगें न देखकर पीछे शान्त खड़े सभी साथियोंसे मैंने धीरेसे पूछा कि सबसे बड़ेवालेको सींग है कि वह "मुड़ियारी" है। जिस सांभरकी सींग गिर जाती है उसे मुड़ियारी कहते हैं। मेरा शब्द अत्यन्त धीमा होनेसे और मुझसे कुछ अधिक पीछे होनेके कारण ये लोग मेरी बात तो सुन न सके, केवल मेरी गोलीकी प्रतीक्षामें चुपचाप खड़े थे। सबके शान्त रहनेके कारण सांभर भागे नहीं। कुछ उत्तर न पाकर तथा बिलम्ब होते देख जैसे ही मैंने पुनः पूछनेके लिए धीरेसे अपना सर पीछे घुमाया कि मेरे हिलते ही वे सबके सब भागे। तब मुझे देख पड़ा कि उनमेंसे एकको बहुत लम्बी सींग थी।

सभी सांभर झाड़ियोंकी ओट लेकर भागे जा रहे थे। शीघ्रतासे मैंने उस बड़े सांभर पर गोली चलायी। परन्तु जल्दी और झाड़ियोंके कारण निशाना ठीक नहीं लग पाया। केवल कुछ हलकी चोट लगी।

बच्चोंको तो मैंने मामाजीके साथ बँगले वापस कर दिया तथा मैंने अपनी पत्नी सहित उसके रुधिरका निशान देखते हुए पाँच छः मील तक उसका पीछा किया।

मध्याह्न होनेको आया, प्यासके मारे हम दोनों ही व्याकुल हो गये, चलते-चलते हमारे पैरोंमें छाले पड़ गये। परन्तु सांभरका पता ही नहीं चला। अतः हम अत्यन्त श्रांत, क्लान्त अवस्थामें बँगले लौट आये।

उतनी अच्छी सींगों वाला सांभर न मिलनेके कारण बहुत ही निराशा हुई परन्तु लाचारी थी।

भलदरियाका सांभर

मिर्जापुर प्रान्तके ही अहरौरा स्थित छातो गाँवके ऊपर पहाड़ पर "भलदरिया" नामक एक सुन्दर स्थान है। घने जंगल तथा छोटे पहाड़ी झरनेसे युक्त होनेसे और दरीके दोनों ओर पहाड़में माँदके लिए पर्याप्त गुफायें होनेसे, शेर, चीता, भालू आदि पशुओंके लिए वह सुखकर तथा उपयुक्त स्थान है। यहाँ सांभर चिकारे आदि भी मिलते हैं।

एक बार मार्च सन् १९३५ के वसंत ऋतुमें मैंने अपनी पत्नी बच्चों सहित तथा अपने एक मित्र श्रीयुत नागेन्द्रभूषण बीड उर्फ कालो बाबू और उनकी पत्नीके साथ पर्यटनार्थ डोंगियाके लिए प्रस्थान किया जहाँसे भलदरिया पाँच-छः मील पहले ही पड़ती है।

तीन दिन तक हम लोग डोंगियाके जंगलोंमें घूमते रहे पर आखेट योग्य पशु एक भी न देख पड़ा। मेरी इच्छा थी कि मित्रके लिए आहार योग्य किसी जीवका आखेट कर पाता, किन्तु ऐसे कोई भी जीव जन्तु न देख पड़े जिसको मैं मित्रको उपहारमें दे सकता। तीतर पक्षी जो वहाँ प्रायः बँगलेके समीप भी देख पड़ जाते थे, उन दिनों वे भी न देख पड़े। अतः उधरसे ध्यान हटाकर भालूके आखेटके निमित्त तीसरे पहर हम लोगोंने भलदरियाके लिए प्रस्थान किया।

उस कड़ी धूपमें लगभग एक घण्टेके ऊपर हम लोग "दरी" के ऊपर बैठे तपस्या कर रहे थे कि अब भालू निकले तब भालू निकले। पर भालू जब वहाँ हो तब तो निकले। भालूकी प्रतीक्षामें तपस्याके साथ-साथ वहाँके मनोहर दृश्यका भी आनन्द ले रहे थे। "दरी" का विस्तार काफी होनेसे दृष्टि दूर तक फैलती थी। इस प्रकार बैठे-बैठे

जब पाँचका समय आया तो दरीके उस पार पहाड़ीके ऊपर चरता हुआ एक सांभर देख पड़ा। इस पारसे उस पार दरीका फैलाव पाँच सौ गजसे ऊपर ही रहा होगा। इस दूरीके कारण घोड़ेके बराबर वह सांभर एक हरिनके समान छोटा देख पड़ता था।

उस समय मेरे पास वही ४०५ बोर वाली पुरानी राइफल थी। यह राइफल सौ गजके लिए तो बहुत ही अच्छी होती है परन्तु चार सौ गजके ऊपरकी मारके लिए शक्ति भी कम हो जाती है और गोली भी नीचे अधिक लटक जाती है। फिर भी कौतूहल-वश उसके परीक्षणार्थ राइफलकी निशाने वाली पिछली Sighting जो चार सौ गजके लिए बनी थी सबसे ऊँची उठाकर निशाना लगानेका प्रयत्न किया। सांभर धीरे-धीरे चरता हुआ बराबर आगे बढ़ता जा रहा था। अतः उतनी लम्बी दूरीका निशाना लेनेमें बड़ी कठिनाई हो रही थी। कभी मेरा हाथ हिल जाता तो कभी वह निशानेसे आगे बढ़ जाता।

पासमें एक बड़ी-सी चट्टान देखकर उसपर लेटकर निशाना लगाया। निशाना उसके कंधेके पास गरदन पर लगाया था, पर गोलीके पहुँचते-पहुँचते वह एक दो पग आगे बढ़ गया। फलतः गोली कन्धेपर भी न लगकर उसके पिछले पुट्ठेपर लगी। दूरी होने पर भी गोलीमें इतनी शक्ति थी कि उसने उसको वहीं गिरा ही दिया। हम लोगोंको आशा न थी कि गोली इतनी दूरसे लग पायेगी। अतः उसके गिरते ही हर्षके साथ-साथ आश्चर्य भी अधिक हुआ।

दरीके ऊपर घूमकर उसके पास पहुँचनेमें पूरे आधे घण्टे लगे। वहाँ पहुँचकर देखा कि गोली उसके पिछले पैरोंके ऊपर लगी है, जो मर्म-स्थानमें न लगनेसे मारनेके लिए पर्याप्त न थी, अतः तुरन्त दूसरी गोली चलानी पड़ी।

निकट आनेपर देखा कि उसका आकार तो बहुत बड़ा था किन्तु सींगे छोटी थीं। वहाँके शिकारियोंने कहा, "यह दक्खिनी जातका सांभर

है। इस जातिवालोंकी सींगे ऐसी ही छोटी होती हैं।" कुछ विशेषज्ञोंका कहना है कि सांभर जब वृद्ध हो जाते हैं तो सींगे भी अधिक नहीं बढ़तीं।

मेरे मित्रको तो सींगोंसे कोई प्रयोजन न था, उन्हें तो प्रसन्नता इस बात की थी कि अब उनकी 'हंड़िया गरम" हो सकेगी, जो कि तीन दिनसे हमारे साथ शाकाहार करते-करते ऊब गये थे।

अमवा-का चिकारा और सांभर

बच्चों को अपने-अपने स्कूल कालेजसे ग्रीष्मावकाश मिल गया था। अतः अपनी नयी राइफल '३७५ बोर - High Velocity के परीक्षणार्थ ९ मई १९३५ को मैं सपरिवार डोंगिया घूमने निकला। साथमें मामाजी भी थे।

पहुँचनेके दो दिन पर्यन्त केवल विश्राम करते तथा वन-भ्रमणका आनन्द लेते रहे। मेरे आने की सूचना पाकर मेरा पुराना शिकारी "सुन्दर" भी आगया, तथा मेरी नई राइफलको देखकर उसने कहा कि पहले मुझको इसकी शक्ति और निशाना दिखला दीजिये जिससे मुझे भरोसा हो जाय, तब मैं कोई बड़े हिंसक जन्तुका शिकार करवाऊँगा।

उनका कहना उचित ही था, क्योंकि नयी राइफलके साथ-साथ दो चार बातोंका ज्ञान लेना परमावश्यक है।

सर्व प्रथम राइफलका कमसे कम पचाससे दो सौ गज तकका निशाना देख लेना चाहिए। दूसरी बात यह देखना है कि अपने कन्धे पर किस प्रकार शीघ्रतासे ठीक बैठती है तथा अपने देखनेके ढंगसे लक्ष पर ठीक निशाना मारती तो है और यदि कुछ भी अन्तर है तो उसको पहले ठीक करवा लेना चाहिए। तीसरे, गोलीमें कितनी शक्ति है कि जिसमें समय पर धोखा न हो।

नयी राइफलका परीक्षण सफल रहा, कारण संयोगवश एक ही दिन चिकारा तथा सांभर दोनों ही मिल गये, जिसमें शिकारी और मुझे दोनों ही को राइफल पर पूरा भरोसा हो गया।

दो दिनके बाद जब शिकारीके साथीने प्रातःकाल आकर सूचना दी कि चूनादरीमें उसने चीता जाते देखा है, तो उसी दिन अपराह्णमें हम-लोग मोटरपर बैठकर चूनादरी ही की ओर चल पड़े। (चूनादरीका वर्णन भालू और चीते दोनों हीके प्रकरणमें आगे आयेगा)।

छोटे पशुओंको मारनेकी इच्छा न होते हुए भी राइफलके परीक्षणार्थ बाध्य होकर मुझे गोली चलानी पड़ी।

हम लोग बँगलेसे तीन चार ही मील गये होंगे कि अमवा नामक स्थान पर पहुँचते ही शिकारीने घनी झाड़ियोंके बीच एक चिकारा दिखलाया और कहा कि इस पर ही पहले गोली चलाइये। मैंने २३५ ग्रेन-वाली सबसे हलकी गोली तुरन्त चढ़ाकर निशाना साधा। पर उस घनी झाड़ीमें विशेष कर चिकारेके ऊपर निशाना लगाना आसान नहीं था, कारण यह एक ऐसा चंचल पशु होता है कि कभी क्षण भर के लिए भी एक स्थान पर नहीं टिकता। प्रत्येक क्षण अपनी छोटी-सी दुम हिलाते हुए चलता ही रहता है और कुछ दूर्वा एक जगह खाता तो कुछ एक फुट हट कर दूसरी जगह। इनका शरीर भी इतना दुबला पतला होता है कि इन पर राइफलसे निशाना लगाना भी कठिन होता है। यहाँके अधिकांश शिकारी इन्हें दो नाली छर्रे वाली बन्दूकसे ही मारते हैं। अस्तु,

यद्यपि वह बहुत दूर तो नहीं था तथापि उपरोक्त कारणोंसे जल्दी निशाना लगा नहीं पा रहा था। दूसरे शीघ्रतामें ऐसी गोली नहीं चलाना चाहता था कि निशाना खाली जाय, कारण अपने शिकारियोंका विश्वास प्राप्त करनेके लिए उसीपर आगेका आखेट निर्भर था। साथ ही अधिक विलम्ब भी नहीं करना था नहीं तो एक ओर चिकारेके भाग

जानेकी पूरी आशंका थी दूसरे, सर्वोपरि अधिक विलम्ब होनेसे अपनी अपकीर्तिका भी भय था। अतः अवसर मिलते ही निशाना लेकर मैंने तुरन्त गोली चला दी।

गोली ठीक कन्धेपर बैठी और उसके धक्के से वह छोटा सा पशु एक गज फिक गया। और तब मैंने देखा कि इस राइफलकी सबसे छोटी गोली भी हरिन व चिकारेके लिये बहुत बड़ी पड़ती है।

इस निशानेपर शिकारियोंको कुछ सन्तोष हुआ तथा मुझे भा प्रसन्नता हुई कि नई राइफलका पहला लक्ष खाली नहीं गया।

चिकारा मारनेके उपरान्त हम लोग लगभग आधे ही मील आगे बढ़े होंगे कि उसी अमवाकी पहाड़ीके ऊपर एक साँभर चलता हुआ देख पड़ा।

शिकारीको दूसरा अवसर मिला। उसने तुरन्त कहा कि इसको पहले मारिये तब आगे बढ़िये। मुझे भी राइफल तथा गोलीकी शक्ति की भली भाँति परीक्षा लेनी थो।

अबकी २७० ग्रेन वाली बड़ी गोली नालमें भर कर उसपर निशाना लगानेकी चेष्टा की।

सांभर हम लोगोंसे लगभग सौ गज दूर घनी झाड़ियोंके बीच, एक झाड़ीसे दूसरी झाड़ी व पेड़ की आड़ लेता हुआ आगे बढ़ता चला जा रहा था।

एक जगह दो झाड़ियोंके बीच थोड़ी सी खुली जगह देख पड़ गई। सांभरके उस स्थानपर आते ही मैंने गोली चलाई। गोली सटीक 'बन्द' कन्धेपर लगी और वह वहीं लेट गया। एक गज भी आगे बढ़ नहीं पाया।

अब केवल शिकारीको ही नहीं, मुझे भी अपनी राइफलपर तथा अपने हाथोंपर पूरा भरोसा हो गया।

फिर आगे बढ़कर चीता और भालू मारा जो इनके पृथक्-पृथक् प्रकरणमें आयेगा।

कटलही का सांभर :

मार्चका महीना था। ऋतुराज वसन्तका साम्राज्य था। इस समयकी वनशोभा तो अनिर्वचनीय होती ही है। वनश्री अपने पूरे श्रृंगारके साथ समस्त वनप्रांतमें अपनी अनुपम सुषमा बिखेरती ही रहती है। आम्र, पलास तथा गुलमोहर आदिके वृक्ष बरबस मनको मोहित करते रहते हैं। साथ ही आखेटके लिये भी यह ऋतु अत्यन्त अनुकूल होती है। वृक्षोंके घने पत्तोंके झर जाने तथा उनमें कुछ नूतन, कोमल हरित किसलयके आ जानेसे, दृष्टि कहीं उलझती नहीं वरन् दूर तक फैल सकती है। अतः सदैवकी भाँति हमलोग सपरिवार डोंगिया घूमने गये।

कुछ गरमी हो चली थी, दिनमें श्री अंशुमालीने अपनी छटा तथा प्रभाव दिखलाना आरम्भ कर दिया था। अतः मध्याह्नमें जंगलों में निकलनेकी इच्छा नहीं करती थी। आलस्यके कारण कहीं घूमने भी नहीं जाते थे, जिससे हमारे शिकारीराम बहुत रुष्ट थे। किन्तु मैंने उससे स्पष्ट कह दिया कि इस गरमीमें मुझसे दिन भर पशुओंकी खोजमें दौड़ा नहीं जायगा। यदि वह स्वयं दौड़ धूप करके पता लगाकर आवे कि अमुक स्थान पर अमुक पशु है तो मैं उसके पीछे अवश्य चल सकता हूँ।

फालसे का शिकार :

उस शिकारीकी आदत थी कि पशुओंकी खोजमें अपने साथ-साथ मुझे भी मीलों दौड़ा देता था कि मार्गमें जो-जो पशु मिलते जायँ उनको मारते बढ़ते जायँ। इस प्रकारके आखेटको 'फालसे'का शिकार कहते हैं। शीत ऋतुमें तो इस प्रकार मीलों घूमना अच्छा लगता है।

परन्तु वसन्तके भी मध्याह्न में इस तरहकी दौड़ कष्टदायक हो जाती है। अतः मेरा निर्णय सुनकर शिकारीने भी विचारा कि यदि कुछ भोजन और इनाम लेने हैं तो स्वयं ही परिश्रम करना पड़ेगा।

मांसाहारी होनेके कारण उसको सांभर तथा शूकरके आखेट करानेका विशेष शौक था जिसमें सपरिवार उसके भोजनका भी प्रबन्ध हो सके। इस कारण वह इन्हीं पशुओंको खोजमें चला। दूसरे उस समय डोंगियां में कोई बड़े हिंसक पशु भी नहीं थे।

अच्छी तरह जंगल खोजकर वह दूसरे दिन ठीक मध्याह्नके समय आया जब मैं भोजन करके उठ ही रहा था। और कहने लगा कि कटलहीपर अमुक पेड़के नीचे सांभर बैठा है, सो "जल्दी चलीं।" मैंने सोचा कि उसने अच्छा बदला लिया। फिर भी उस दोपहरकी गरमीमें भोजनके उपरान्त तुरत भागे जानेसे बचनेके अभिप्रायसे मैंने कहा कि अभी तक वहाँ बैठा तो होगा नहीं, कबका चल दिया होगा। उसपर उसने उत्तर दिया कि सांभरने उसको देखा नहीं है तथा वृक्षके सायेमें विश्राम कर रहा है। इसलिये अभी दो एक घण्टे कहीं अन्यत्र नहीं जायगा। विवश होकर मुझको उसी समय उसके साथ जाना पड़ा। राइफल उसके हाथमें दिया तथा स्वयं कारतूस लेकर उसके साथ चल पड़ा।

बंगलेसे लगभग एक मील जाना था, भोजन करनेके बाद ही उस गरमीमें चलते-चलते चित्त व्याकुल हो गया। शिकारी राम तो आगे-आगे भागे चले जा रहे थे और मेरी दुर्गत थी।

कटलही पहुँच कर, नदी डांकने पर उसने राइफल यह कहते हुए मेरे हाथमें पकड़ा दी कि अब वह जगह निकट आ गई जहाँ उसने सांभर बैठा देखा था। मैंने राइफलमें गोली भरी और पूछा कि वह किस पेड़के नीचे है। इसी उद्देश्यसे वह भी चारों ओर दृष्टि दौड़ाता हुआ धीरे-धीरे आगे बढ़ता जा रहा था।

एक ही प्रकारकी झाड़ियोंसे जंगल भरा था। अत: मेरे तो समझमें नहीं आ रहा था कि उस झाड़ीमें क्या विशेषता होगी जिसके नीचे वह बैठा होगा और शिकारी उसे पँहचान सकेगा। थकित होनेके कारण उस समय मेरे ध्यानमें तो यही आया कि सम्भव है इसने मुझे जानबूझ कर दौड़ाया हो। किन्तु बात ऐसी न थी। उसने वस्तुत: सांभरको बैठा देखा था। मैं इन जंगली ग्रामीणोंकी प्रशंसा अवश्य करूँगा कि जंगलके प्रत्येक पेड़-पल्लवसे ये इतने परिचित रहते हैं कि निर्दिष्ट स्थान पहचाननेमें इनसे कभी भूल नहीं होती। मेरे इस शिकारी "सुन्दर"में भी यह शक्ति कुछ विशेष रूपसे थी क्योंकि वह ठीक उसी स्थानके निकट पहुँचा जहाँ वह सांभर बैठा हुआ था।

कुछ क्षणके लिये तो वह इधर उधर देखता रहा। क्योंकि सब झाड़ियाँ एक ही प्रकारकी होनेके कारण थोड़ी देरके लिये उसका भी उलझनमें पड़ जाना स्वाभाविक था। किन्तु शीघ्र ही उसने वह स्थान पँहचान लिया तथा शान्त मुद्रामें बैठा हम लोगोंको देख रहा था और आहट ले रहा था कि यदि इन लोगोंसे किसी प्रकारका भय हो तभी भागें अन्यथा विश्राम करते रहें। अतएव उसके न हिलनेसे हम लोग उसको देख नहीं पा रहे थे। पेड़ोंकी झुरमुटमें वह ऐसा मिल गया था कि तत्क्षण समझमें नहीं आता था।

उसको भी इस बातका अभी तक निश्चय नहीं था कि हम लोग उसीकी खोज में हैं या कोई राही हैं। हम लोग उसकी ओर देख भी नहीं रहे थे, नहीं तो वह अवश्य ही उठकर तुरंत भागता। पर अब वह चौकन्ना होकर अवश्य बैठा था।

शिकारी धीरे-धीरे भुनभुना रहा था कि "हिंअयीं तो देख गइल रहली।" इतनी देरमें सांभरने अपना कान हिलाया। शिकारीकी दृष्टि तुरत उसपर पड़ी और उसने बहुत उत्सुकतासे कहा कि "ऊ का बैठल बाय, जल्दी मारीं।"

उसका तो वह स्थान देखा हुआ था। इस कारण उसने सांभरको देख लिया। किन्तु बहुत दृष्टि दौड़ाने पर भी जल्दीमें मुझे देख नहीं पड़ रहा था। दूसरे अति शीघ्रताके कारण शिकारी मुझे ठीक स्थान भी नहीं बता पा रहा था। घबड़ाहट और उजलतमें उसने जो मारनेके लिये मुझसे जोरसे कहा सो पास होनेके कारण जानवरके कानमें भी शब्द पहुँच गये। मनुष्यकी बोलीसे भी पशु अत्यन्त शीघ्रता से भागते हैं। अतएव अब वह तुरत उठकर उलटे भागा। उसके उठते ही मेरी दृष्टि उसपर पड़ी। किन्तु मेरे राइफल उठानेके पूर्व ही वह झाड़ीकी ओट लेता हुआ बेतहाशा भागा।

जहाँ कहीं थोड़ा भी स्थान खुला मिलता वहीं मैं दौड़ कर कभी दाहिने तो कभी बांयेसे निशाना लेने का प्रयत्न करता। किन्तु उन झाड़ियोंके बीच भागते तथा दृष्टिसे ओझल होते हुए सांभरपर निशाना लगाना अत्यन्त कठिन हो रहा था। उधर, शीघ्र निशाना न लगा सकनेके कारण शिकारीराम अलग मेरे ऊपर बहुत भिन्ना रहे थे। इतनी ही देरमें सांभर बड़ी दूर लगभग ढाई सौ गज निकल ही गया। परन्तु अब जहाँ वह भागा जा रहा था वहाँ कुछ खुला स्थान देख पड़ा। मैंने विचारा कि अन्ततोगत्वा तों वह भागा जा ही रहा है, गोली चला दूँ लग गई तो बहुत अच्छा नहीं भाग तो गया ही है।

उसके वेगका ध्यान रखते हुए और भागनेकी दिशाका भी हिसाब लगा कर मैंने वहीं खड़े-खड़े गोली चला दी। संयोगसे गोली ठीक उसके गरदनपर लगी जिससे तत्काल उसका सिर लटक गया।

चौकड़ी भरकर भागते समय सहसा गरदन लटक जानेसे वह सींगोंके बल एकदम कलैया खा गया। जैसे किसी कुस्तीबाजने "कमर तेगे" अथवा "धोबिया पाट"का दाँव लगाया हो।

उस विशालकाय पशुका समस्त भार सींगोंपर होते ही दोनों सींगें पटाकसे जड़से ही टूट गयी। उनके टूटनेका शब्द हमलोगोंने स्पष्ट सुना।

भागते हुए सांभरपर उतनी दूरकी गोलीं लगनेसे जितनी प्रसन्नता हुई उससे अधिक खेद उसकी सींगें टूट जानेसे हुआ। सम्भव है उसकी सीगें गिरनेका भी समय निकट आ गया होगा।

ये ·२२ बोर High Velocity से भी मारे जा सकते हैं परन्तु ·३७५ बोरकी एच० वी० के २३६ ग्रेंन अथवा २७० ग्रेनकी गोलीसे मारना उचित है।

डोंगियाका चीतल

चीतल इतना सुन्दर हिरण होता है कि उसको मारनेकी इच्छा कभी भी न हुई। अतएव इस जातिके केवल दो-चार पशुओंपर ही गोली चलायी और वह भी परिस्थितियोंके कारण ही चलाना पड़ा।

एक बार हम लोग डोंगियामें ठहरे थे, तो किसी कार्यवश मुझे "राबर्ट्सगंज" जाना पड़ा। अतः प्रातःकाल उठकर अपने शिकारी 'सुन्दर'को साथ ले मोटरसे चल पड़े। राबर्ट्सगंज डोंगियासे लगभग तेरह मील दक्षिण है।

बंगलेसे लगभग तीन मील गये होंगे कि सुन्दरने मोटरके दाहिनी ओर चीतलका एक छोटा-सा झुण्ड दिखलाकर मारनेको कहा।

कोई भी पशु सहसा सामने देखकर एक नशा सा चढ़ जाता है। मारनेकी ओर मन न रहने पर भी देख पड़ जानेसे तथा दूसरेके उत्साह दिलानेसे गोली चलानेकी इच्छा हो ही जाती है।

फलतः जल्दीसे मैंने राइफल उठायी ओर मोटर रोकते-रोकते सम्मुख खड़े एक बड़े नरके ऊपर गोली चला दी। बन्दूककी आवाज होते ही सारे जानवर एकदम भाग खड़े हुए। यह चीतल भी तत्क्षण मुड़ा और तुरन्त झाड़ियोंमें ओझल हो गया।

सुन्दरने कहा कि वार खाली गया पर मुझे ऐसा भान हुआ कि मेरी गोंली उसे लगी अवश्य है। मेरा यह सिद्धान्त है कि घायल



डोंगिया के बंगले में शिकार पार्टी

जानवरको कभी छोड़ नहीं देना चाहिए। सर्वप्रथम तो निशाना ऐसा लगावे कि जानवर वहीं समाप्त हो जावे। पर यदि किसी कारण वह जीवित है तो यथाशक्ति उसका कष्ट और पीड़ा शीघ्र निवारण कर देना चाहिए। घायल पशुओंको तड़पनेके लिए छोड़ देना निर्दयता तथा क्रूरताकी पराकाष्ठा है।

मैंने शिकारीसे कहा कि एक बार तो उतरकर देखना चाहिए। जहां चीतलपर गोली चलायी थी, वहाँ पहुँचकर हमने बहुतेरा ढूँढ़ापर कहीं वह देख नहीं पड़ा। खुरोंके बहुतसे चिन्होंके कारण भ्रममें पड़कर दो एक मीलका चक्कर काट गये पर कहीं भी उसका पता न लगा। विवश हो शिकारीकी बातको सत्य मानकर मोटरकी ओर लौटे। पर मोटरके समीप पहुँचनेके पूर्व जब पुनः उसी स्थानपर आये तो वहाँ रक्त के दो-चार बूंद देख पड़े, जिससे यह तो निश्चय हो गया कि चीतलको गोली तो अवश्य लगी है, किन्तु मर्मभेदी अथवा हलकी यह निर्णय नहीं कर पाये।

ढूंढ़नेमें दो घण्टेका समय लग गया और जानवर तब भी नहीं ही मिला। अतः निराश होकर आगे बढ़े। कारण जल्दी ही लौटना था।

घण्टे डेढ़घण्टेके उपरान्त अपना कार्य समाप्तकर जब लौटे आरहे थे तो ठीक उसी स्थान पर कुछ गिद्ध मंडराते देख पड़े। उस समय मुझे पूर्ण विस्मरण हो गया था कि उसी स्थान पर दो घण्टे पहले मैंने चीतलपर गोली चलायी थी।

अतः मैं शिकारीसे केवल इतना ही कह रहा था कि आसपास कदाचित् कोई पशु मृत पड़ा होगा। परन्तु इतना कहते-कहते ही सहसा ध्यानमें आया कि हो न हो मेरा ही चीतल यहाँ पड़ा हो और तुरन्त मोटर रोककर उतर पड़े।

गिद्धोंको ही देखते-देखते उनके मंडरानेके स्थानपर पहुँचे। झाड़ीके पीछे पहुँचते ही देखा कि वहाँ ढेरों गिद्धोंका जमघट लगा है जो हम

लोगोंके पास आते ही उड़ गये और तब हमने देखा कि चीतल वहीं पड़ा हुआ है। वे चमड़ा विशेष खराब नहीं कर पाये थे यह देखकर प्रसन्नता हुई।

चीतलको गोली ठीक छातीमें लगी थी और जहाँ उसे मारा था वहाँसे केवल पचीस ही गज पीछे झाड़ीके आड़में गिरकर मर गया था। अतएव हमलोगोंको किसी प्रकारकी आहट ही नहीं लग पायी। दूसरे रक्तका कोई निशान न होनेसे तथा पास ही के झाड़ीके आड़में देख भी नहीं पड़ा और मैंने व्यर्थ हीमें मीलों चक्कर काटा। जिसको हमलोग ढूँढ़ न पाये वह गीधोंके कारण सहज हीमें मिल गया।

इनको मारनेके लिए ·२२ बोर H.V. की गोली पर्याप्त है।

गोरखपुर का घोड़रोज़ :

घोड़रोज़ अथवा नील गाय को बहुत कम शिकारी मारना पसंद करते हैं। न इनको बड़ी-बड़ी सींगें ही होती हैं जिसके कारण इनको मारने की लालसा हो, न इनके चमड़े सांभर के चमड़े की बराबरी कर सकते हैं और न मुसलमान व चर्मकार के अतिरिक्त अन्य जाति इनका मांस ही खाना पसंद करती है। किंतु ये खेती के सबसे बड़े नाशक होते हैं। अतः किसान इनके विनाश के विशेष इच्छुक होते हैं।

उपरोक्त कारणों से मैंने भी इनका शिकार अधिक संख्या में नहीं किया है।

सन् १९१७ के शीत ऋतु में सर्वप्रथम गोरखपुर जिले में मैंने घोड़रोज़ मारा था। उस समय मेरे बड़े भाई स्व० श्रीविलासजी वहाँ डिप्टी कलेक्टर थे। यहाँ के पर्यटन का विस्तृत विवरण "गोरखपुर के शूकर" के प्रकरण में आवेगा।

यद्यपि उस समय मेरी अवस्था केवल बीस ही वर्ष की थी और शिकार कभी खेला भी नहीं था फिर भी छोटी राइफल .२२ बोर चलाने

का बहुत अभ्यास था और उससे निशाना भी अच्छा लगा लेता था। साथ ही शिकार खेलनेकी लालसा भी बहुत थी। अतएव आखेटके लिये भाई साहेबका निमंत्रण सहर्ष स्वीकार कर बड़े दिनकी छुट्टियोंमें वहां पहुँचा और उनके साथ तराईके जंगलोंमें गया।

उन्होंने अपनी बड़ी राइफल ४०५ बोर चलाने के लिये मुझे दी, और एक जंगल के टुकड़े को हंकवाने का प्रबंध करवाया। प्रायः सभी तराई के जंगलों को अनेक टुकड़ों में विभक्त कर दिया जाता है। तथा एक से दूसरे के बीच काफी चौड़ा प्रशस्त मार्ग छूटा रहता है।

ऐसे हो दो टुकड़ोंके बीच हल्के झंखाड़ोंमें एक छोटा सा वृक्ष था जिसकी ओटमें मुझे बैठा दिया गया। जंगली पशुके ऊपर गोली चलानेका मेरा यह प्रथम अवसर था, मनमे उमंग और उत्साह भी बहुत था। फिर भी बहुत शान्ति और सावधानीसे बैठ कर किसी भी पशुके आनेकी राह देखने लगा।

थोड़ी ही देरमें कुछ आहट होनेसे जंगलकी ओर जो दृष्टि गई तो देखा कि एक घोड़रोज़ वृक्षोंकी ओटसे इस ध्येयसे चारों ओर निरीक्षण कर रहा है कि यदि आगेके मार्गमें किसी प्रकारका भय न हो तो जल्दीसे उस खेले मार्गको डाँक कर दूसरे जंगलमें प्रवेश कर जायँ तथा पीछेसे आते हुए हंकवोंसे बच जाय।

झंखाड़के बीचमें होनेसे उसने मुझे देखा नहीं और उस प्रशस्त मार्गको असंदिग्ध समझ कर फिर भी बड़े वेगसे दौड़ता हुआ दूसरे जंगलकी ओर भागा।

जैसे ही वह मार्गके बीच पहुँचा और मुझसे लगभग सत्तर गज़की दूरीसे भागा जा रहा था कि मैंने गोली चलाई। गोली ठीक कंधेपर लगी और दोनों ओरकी अस्थिको तोड़ती हुई बाहरके चर्ममें अटक गई। गोलीके धक्केसे उतना बड़ा पशु भी लड़खड़ा गया। बड़े वेगसे

भागते समय गोली लगने के कारण वह दस बारह गज़ आगे बढ़ कर गिरा। और गिरते ही उसकी मृत्यु हो गई।

उसके मिल जानेसे बहुत ही प्रसन्नता हुई तथा उत्साह और बढ़ा। तदुपरान्त आगे बढ़ कर किस प्रकार शूकर मारा सो उनके प्रकरणमें आवेगा।

छातो के घोड़रोज़ :

एक बार सन् १९२५ के अप्रैल के प्रारम्भ में मामाजी तथा अन्य दो मित्रों के साथ पहली बार डोंगिया जा रहा था। डोंगिया का विवरण भालू प्रकरण में आगे आयेगा।

डोंगियाके रास्तेमें अहरौरा बाज़ारसे पांच मीलपर छातो नामक स्थानके समीप पहुँचते ही घोड़रोज़का एक झुण्ड बहुत दूरसे आते हुए देखा। ये बहुत ही तेजीसे हम लोगोंकी ओर भागे आ रहे थे। जब पहली बार हमारी दृष्टि इनपर पड़ी तो ये लगभग आधी मील दूर एक पहाड़ी परसे भागे आ रहे थे। पहले तो हमने यह समझा कि थोड़ी दूर आने पर ये इधर-उधर निकल जायंगे। पर ये जब बराबर हमारी ही ओर भागते आये तब हमें संदेह हुआ कि कदाचित् शेर चीता आदि कोई बड़े हिंस्र पशुने इनका पीछा किया होगा, या इनके झुण्डमें से किसी को पकड़ भी लिया हो, इसी भयसे ये दूरतक भागते चले ही आ रहे थे। देखते-देखते वे हमारे अति निकट पहुँच गये। लगभग दस बारह पशुओंकी एक टोली थी जिनमें सभी नर थे। कारण यह सभी नीलवर्ण थे। इनकी मादीने भूरे रंगकी तथा बिना सींगकी होती हैं जो एक भी न थीं।

इन्हें अपने इतने समीप पाकर हम लोगोंने जल्दी-जल्दी बक्सोंमेंसे अपनी-अपनी बन्दूकें निकालना शुरू किया और जैसे ही हम गोली भर कर तैयार हुए कि सभी घोड़रोज उसी वेगसे सरपट भागते हुए हमारे

सिरपर आ पहुँचे तथा घोड़ोंकी टापोंकी-सी टपाटप आवाजें करते हुए हमारे टाँगेके आगेसे निकलने लगे।

हमलोगोंने भी वहीं खड़े-खड़े चांदमारी आरम्भ कर दी। तीन-तीन बन्दूकोंके कई बार एक साथ चलनेसे सारा वायुमण्डल गूंज उठा। तथा देखते-देखते प्रायः सभी पशु धराशायी हो गये। यद्यपि उनमें-से कुछ तो निकल भागे और कुछ घायल होनेपर भी भागनेकी चेष्टा कर रहे थे। किन्तु शीघ्र ही इनपर दुबारा गोली चलानेसे तुरन्त उनकी मृत्यु हो गयी। लगभग छः या सात हाथ आये।

पीछेसे ज्ञात हुआ कि जिधरसे ये भागे आ रहे थे, वहाँ से केवल दो मील ऊपर जंगलमें गुफाओंसे युक्त चूनादरी नामक एक सुरम्य जल प्रपात है वहाँ शेर, भालू, चीते प्रायः रहते हैं। इसका भी वर्णन अन्यत्र आयेगा। सम्भव है उन्हींमें से किसी पशुने इन्हें पकड़ा या भयभीत कर भगाया होगा।

इन्हें मारनेमें हमें दो घण्टे लग गये। संध्या हो रही थी, हमें अपने लक्ष डोंगिया तुरन्त पहुँचना था जो वहाँ से पूरे सात मील दूर पहाड़ पर स्थित है। वहाँ का मार्ग अत्यन्त बीहड़, हिंस्र पशुओंसे युक्त घने जंगलोंके मध्यसे जाता था, जिससे हम सर्वथा अनभिज्ञ थे। रात्रि हो जानेसे पथसे भटक जाने का भी पूरा भय था। उस समय मोटर भी न होनेसे हमें अपने एकमात्र थके हुए घोड़ेका सहारा था।

•

श्वान जाति

- लकड़बग्घा
- भेड़िया
- शृगाल
- लोमड़ी
- कुत्ते : वन्य : जंगली
  गृहमृग : पालतू

श्वान जाति

श्वान जाति में पांच प्रकार के पशु होते हैं :

(१) लकड़ बग्घा
(२) भेड़िया
(३) शृगाल
(४) लोमड़ी तथा
(५) कुत्ते

इनमेंसे कुत्ते दो प्रकारके होते हैं (१) वन्य अर्थात् जंगली और (२) गृहमृग अर्थात् पालतू ।

इनमें से एक एक का विवरण आगे दिया जा रहा है—

१. लकड़-बग्घा

संस्कृत नाम :

संस्कृतमें लकड़बग्घेको तरक्ष, तरक्षु अथवा तर्क्षु कहते हैं।

अंग्रेजी नाम :

अंग्रेजीमें इनको (Hyena) हैना कहते हैं। Laughing Hyenaसे भी सम्बोधित करते हैं क्योंकि इनकी बोली "हाहा-हाहा" इस प्रकार हंसती हुई प्रतीत होती है। परन्तु इनके हंसनेका शब्द बहुत ही बुरा, विकट और पैशाचिक होता है।

हिन्दी नाम :

हिन्दीमें कोई "लकड़बग्घा" कहता है तो कोई "हड़हा"।

फारसी नाम :

कहीं-कहीं "चरख" अथवा "चरग" कहते हैं। परन्तु शुद्ध फारसी नाम "चर्ख" अथवा "चरग" है।

जंगल में नाम :

जंगली कोल जाति इन्हें "बड़कवा" नाम से सम्बोधित करते हैं। जिसके कारण मुझे एक बार भ्रम हो गया। मैंने समझा कि यह नाम केवल बाघके ही लिये प्रयोग किया जाता है। परन्तु मेरी भूल थी।

कई लोग इसको भ्रमवश "हुँड़ार" कह देते हैं पर यह अयुक्त है। "हुँड़ार" भेड़ियेके ही लिये प्रयोग किया जाता है।

लकड़बग्घा :

बग्घा कहनेका तात्पर्य स्पष्ट है। इनका बाह्य रूप कुछ-कुल बाघसे मिलता है। इसीसे इनको "लकड़बग्घा" अथवा "बड़कवा" कहकर सम्बोधित करते हैं। बाघके सम्पूर्ण अंगपर काली-काली लम्बी लकीरें होती हैं। कुछ-कुछ उसी प्रकार इनको भी होती हैं। परन्तु इनके और व्याघ्र के शरीर के रंग में बहुत अन्तर है। इनका रंग स्याही मिश्रित भूरा अथवा राखी के ऐसा होता है और बाघका लाल मिश्रित पीला अथवा सोनहला होता है। इसी प्रकार और भी बहुत अन्तर है।

अफ्रिकावासी :

अफ्रिका देश के लकड़बग्घे को ये काली-काली लम्बी लकीरें नहीं होतीं। उनके स्थान पर चीते की भाँति काले-काले गोल धब्बे होते हैं। और भी हलका-हलका अन्तर होता है।

लकड़बग्घा नाम का कारण :

"बग्घा"के पहले जुड़ा "लकड़" शब्द "लंगड़" का रूपान्तर है। "लंगड़" इसलिये कि ये लंगड़ाकर चलते हैं। इनकी चाल-

में एक प्रकारकी भचक होती है। उसका कारण यह है कि इनका अगला स्कन्ध भाग पिछले भागकी अपेक्षा बहुत ऊँचा होता है। अतएव जब ये चलते, दौड़ते अथवा भागते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि ये पिछली टांगें घसीटकर चल अथवा भाग रहे हैं। पिछली टांगे छोटी होनेके नाते इनकी चालमें भचक होना स्वाभाविक है, जिसके कारण देखनेमें ये लंगड़ाते हुए लगते हैं। वस्तुतः इनकी अगली टांगोंकी अपेक्षा पिछली बहुत निर्बल होती हैं।

हड़हा :

"हड़हा" नाम इसलिये पड़ा है क्योंकि अधिकतर इनका भोजन "हाड़" अथवा "हड्डी" ही है।

माथा :

इनके माथे और मुखका आकार बहुत कुछ तेंदुआ-चीतासे मिलता है। परन्तु इनके दाढ़ चीतेसे कहीं अधिक मजबूत होते हैं। सम्भव है बाघके दाढ़की बराबरी न कर सकते हों, पर जिस हड्डीको बाघ भी छोड़ देता है, जो गृध्र और शृगालसे भी बच जाता है अथवा यों कहें कि जिसको वे खानेमें असमर्थ हैं उसको ये आसानीसे खा लेते हैं। निष्कर्ष यह कि मोटा मांस लगी हुई बड़ी और मोटी हड्डी जो अवशेष रह जाती है वही (मांसोच्छिष्ट) इनका आहार है। अतः दूसरोंसे बचा हुआ मृत पशुका अवशिष्ट मांस ही इनका भोजन है। किन्तु अवसर मिलनेपर यदाकदा स्वयं भी कुछ शिकार कर लेते हैं।

आकार :

ये तीन फुट ऊँचे और चार फुट लम्बे होते हैं। परन्तु इनके शरीरकी रचना अत्यन्त निर्बल होती है। जैसा ऊपर लिख आया हूँ इनका पिछला हिस्सा याने पिछली टांगे बहुत क्षीण होती हैं, जिससे ये तेजीसे दौड़ नहीं सकते। अतः किसी भी पशुको ये दौड़कर नहीं पकड़ सकते।

इनकी दृक्शक्ति तथा श्रवणेन्द्रिय दोनों ही अति-क्षीण होती हैं। इनका भोजन देखते हुए इन इन्द्रियोंकी तीक्ष्णताकी इनको आवश्यकता भी नहीं। केवल इनकी घ्राण-शक्ति प्रबल होती है जिससे इनका काम चलता है।

जाति :

इनकी जातिमें कुछ मत-भेद है। कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि इनकी गणना शेरकी जातिमें होनी चाहिये, क्योंकि इनके माथेका आकार तथा दांत आदिकी बनावट शेरकी जातिसे मिलती है।

परन्तु इसके अतिरिक्त इनके पांव व पंजे बिलकुल कुत्तोंकी भाँति होते हैं। इनके नख छोटे और कुंठित-अतीक्ष्ण होते हैं और शेरोंकी भाँति भीतर निवृत्त नहीं हो जाते। अतएव बहुतोंका कहना है कि इनकी गणना श्वान जातिमें ही करनी चाहिये।

वासस्थान :

दिनमें ये मांदोंमें रहते हैं और सायंकाल होते-होते भोजनकी खोजमें निकलते हैं। इनकी मांदोंमें बड़ी-बड़ी हड्डीके टुकड़े बहुत मिलते हैं।

अधिकतर ये एकाकी ही जीवन पसन्द करते हैं। परन्तु यदाकदा चारसे छः तक की संख्यामें साथ रह जाते हैं। इनकी संख्या चार पांच होनेपर तथा जंगलमें कोई एकाकी निःशस्त्र मनुष्य मिल जानेपर ये उसपर हमला भी कर देनेसे नहीं चूकते और अवसर मिलनेपर लड़कोंको भी उठा ले जाते हैं।

बांध-पारका लकड़बग्घा :

शिकारीने बंगले पर आकर सूचना दी कि "बंधा पार तेंदुयेका पंजा देखा है और वहीं पहाड़ीमें तेंदुयेकी मांद भी है। सो संझाके पहले ही उस पहाड़ीके ऊपर बैठल जाय।"

ग्रीष्मारंभका समय था, हमलोग जिनमें मामाजी, मेरी पत्नी व बच्चे भी सम्मिलित थे, दोपहरके भोजनके उपरान्त डोंगियाके बंगले में बैठे हुए, विचार-विमर्श कर रहे थे कि आज सायं कहाँ घूमने निकला जाय कि इतनेमें शिकारीने आकर उपरोक्त सूचना दी।

डोंगियाका बांध पूरा एक मील लम्बा है। गर्मीका दिन था, धीरे-धीरे टहलनेमें और उसपारकी पहाड़ीपर पहुँचनेमें एक घण्टा लग जायगा, ऐसा समझकर हमलोग अपराह्न तीन ही बजे चल पड़े कि कमसे कम चार बजते-बजते अपने निर्धारित स्थान पर बैठ जावें।

इससे विलम्ब करनेमें धोखा होनेकी सम्भावना है, क्योंकि सभी वन्य पशु प्रायः सायंकाल के बहुत पहले मांदके बाहर निकल आते हैं। कभी-कभी तो ये बाहर निकलकर कुछ देरतक बैठे रहते हैं और साथ ही सतर्क होकर जंगलकी आहट भी लेते रहते हैं, तथा सायंकाल होनेपर भोजनकी खोजमें प्रस्थान करते हैं, किन्तु कभी सायंकाल होनेके पूर्व ही मांदके बाहर निकलते ही पर्यटनपर चल पड़ते हैं। अतः इन दोनों ही अवस्थाओंमें यदि विलम्बसे पहुँचा जाए तो आखेट हाथसे निकल जानेकी पूरी आशंका रहती है।

पहली अवस्था में जब वे निकलकर कुछ विलम्ब तक बैठते हैं तो स्वभावतः अति सतर्क रहते हैं। मांदसे निकलनेके पूर्व भी यथासाध्य पूरा निरीक्षण करके ही बाहर आते हैं, तथा किसी वृक्षकी छायामें चट्टानके ऊपर बैठते हैं। उससे उनको दो लाभ हैं। एक तो उस ऊँचाई परसे उनका भक्ष्य आसानीसे दृष्टिगोचर हो जाता है, तो तत्काल उसका शिकार करनेमें उनको सुविधा मिल जाती है। दूसरे विशेष सतर्क और ऊँचे होनेके कारण हम शिकारियोंको वे पहले ही देख ले सकते हैं। अतएव दोनों ही कारणोंसे दिन-भरका भूखा जानवर इस सायं-कालकी वेलामें स्वभावतः विशेष सतर्क होकर ही बैठेगा।

दूसरी अवस्थामें विशेष भूख अथवा प्यासके कारण बिना ठहरे

तत्काल चल पड़ा हो तो या तो मार्गमें ही उससे भेंट हो जानेकी आशंका है और नहीं यदि किसी दूसरी ओर चला गया हो तो फिर उसका मिलना दुष्प्राप्य है।

अतः धूपकी प्रचण्डता होनेपर भी हमलोग तीन ही बजे निकल पड़े। यदि प्रातः अथवा सायंका समय होता तो इस बाँधके ऊपरकी टहलान बड़ी ही आनन्ददायक होती। परन्तु इस समय श्री सूर्यदेव अपनी प्रचण्ड किरणोंकी वर्षा ठीक हमारे मुखके ऊपर ही कर रहे थे। दूसरे बाँयीं ओर जलाशयके ऊपर उनके प्रतिबिम्ब उनसे भी अधिक प्रकाशमान होकर नेत्रोंको चकाचौंध कर रहे थे। ऐसी अवस्थामें चलनेमें काफी कष्टका अनुभव हो रहा था।

पूरे एक घण्टे बाद जब हम निर्दिष्ट स्थानपर पहुँचकर एक वृक्षकी छायाके नीचे शीतल चट्टानपर बैठे तो कुछ आराम मिला। उस ऊँचे टीलेपर चारों ओर हरे वृक्षोंसे टकराकर शीतल, मन्द, पवन क्लान्त शरीरमें पुनः स्फूर्तिका संचालन कर रहा था।

थोड़ी देर तक हमलोगोंने वहाँ बैठकर विश्राम किया। फिर धीरेसे उठकर चुपके-चुपके मांदका निरीक्षण किया कि उसमें कोई पशु है अथवा नहीं है। चारों ओर बहुत खोज करनेपर भी मांदके पास तेंदुयेके कोई पदचिह्न देख नहीं पड़े, तो इसी निर्णय पर आना पड़ा कि इस मांदमें तो इधर दो-चार दिनोंसे उसका वास नहीं है। सम्भव है आस-पास और कहीं उसके रहनेका स्थान होगा जहाँसे निकलकर वह बाँधके पास आया हो।

जब इस बातका निश्चय हो गया कि तेंदुआ यहाँ नहीं है तो अपनी भी सतर्कता स्वभावतः शिथिल पड़ गयी। परन्तु दृश्यका आनन्द लेनेके हेतु हम वहीं एक अच्छी चट्टान ढूँढ़कर जहाँसे दूर तक दृष्टि फैल सकती थी, कुछ कालके लिए सुखसे बैठ गये।

थोड़ी देर उपरान्त एक दूसरे स्थानपर बैठनेके निमित्त मैं दो गज

आगेकी ओर बढ़ा। इतनेमें क्या देखता हूँ कि पहाड़ीके ठीक नीचे और हमसे केवल दस गजपर एक लकड़बग्घा पहाड़ीके नीचेकी मांदसे निकलकर ऊपरकी ही ओर आ रहा है। परन्तु मुझे देखकर ठिठक गया।

मैंने शीघ्र हाथ पीछे करके मामाजीसे बन्दूक माँगनेका संकेत किया। उन्होंने जल्दीमें राइफल न देकर दोनाली बन्दूक थमा दी। यद्यपि इसके चलानेका अभ्यास मुझे कम था जिसके कारण किञ्चित् मात्र बिलम्ब और कठिनाई अवश्य हुई तथापि तुरन्त नाल सीधी कर गोली चला दी। चीते मारनेके ध्यानसे उसमें भी छर्रेकी जगह बड़ी गोली भरी थी। फलस्वरूप उस बड़ी गोलीके धक्केसे वह छोटा जानवर एक गज फेंका गया और वहीं लेट गया।

चीता न सही लकड़बग्घा ही मिल गया यह कोई कम बात नहीं थी। हमारा परिश्रम सफल हुआ तथा एक नया जानवर मिला इसकी प्रसन्नता थी।

२. भेड़िया

हिन्दी नाम :

हिन्दीमें इनके प्रचलित नाम दो ही हैं, एक "भेड़िया" और दूसरा "हुड़ार"।

संस्कृत नाम :

संस्कृतमें तीन पर्यायवाची शब्द मिलते हैं, "कोक", "ईहामृग" और "वृक"। वृक शब्द अधिक प्रचलित है।

अंग्रेजी :

अंग्रेजीमें इनको (wolf) वुल्फ कहते हैं।

आकार :

इनका आकार बिलकुल कुत्तेके ऐसा होता है। कभी-कभी तो इनको देखकर बड़े कुत्ते होनेका भ्रम हो जाता है। किन्तु अन्तर केवल इतना ही है कि इनकी आकृति बड़ी भयावनी होती है। इनके लाल-लाल तिरछे नेत्र एकबार भयभीत कर देते हैं।

दाढ़ :

साधारण कुत्तोंकी भाँति इनका भी मुख लम्बा होता है। इनको दाढ़ें शेर चीतोंकी दाढ़ोंसे अधिक होती हैं। क्योंकि मांसको चबानेकी आवश्यकता नहीं होती, अतएव शेर जातिके पशुओंको दाढ़ें कम होती हैं। शाकाहारी पशु जैसे हरिण, गाय, घोड़े आदिको शाक चबानेकी विशेष आवश्यकता होती है, अतएव इनकी दाढ़ अधिक होती है। कुत्ते और भेड़िये दोनों प्रकारका आहार करते हैं अतएव इनको दोनों प्रकारकी सुविधायें दी गई हैं।

अंग :

ये ढाई फुट ऊँचे होते हैं और इनका वजन पच्चीससे तीस सेर तकका होता है। इनके नरोंका माथा व समस्त अंग भी मादीनोंसे अधिक चौड़ा और बड़ा होता है। इनके सीने बहुत बड़े और कमर पतली होती है। इसी कारण जिस पुरुषका सीना चौड़ा और कमर पतली होती है उसे वृकोदर कहते हैं। इसीसे अपने यहाँ भीमका नाम वृकोदर भी था। आजकल भारतवर्षमें क्या सारे संसारमें ही भेड़ियोंकी संख्या कम हो गयी है।

रूस व कनाडामें झुण्ड :

परन्तु रूस तथा उत्तरी कनाडा, अमेरिका आदि स्थानोंमें अब भी ये काफी संख्यामें पाये जाते हैं। प्राचीन कालमें विशेषकर उपर्युक्त बर्फीले देशोंमें ये पचासोंके झुण्डमें चलते थे। उस समय इनका आक्रमण

बहुत ही भयंकर होता था। जब शीत ऋतुमें वहाँकी भूमि हिमसे आच्छादित हो जाती थी और भोजन मिलनेमें कठिनाई होती थी, उस समय ये विशेष रूपसे खूँखार, अतिक्रूर हो जाते थे। उस समय यदि अकेला आदमी मिल जाय तो बन्दूक रहने पर भी उसे ये नोंच खाते थे, क्योंकि दो-चारको मारते-मारते बाकी सब भेड़िये एक साथ उस पर टूट पड़ते थे।

कई वर्ष पूर्व रूसकी एक घटना है कि एक व्यक्तिको परम आवश्यक कार्यके हेतु एक गाँवसे दूसरे गाँव जाना था जो लगभग ५० मील दूर था। बीचमें थोड़े जंगलका हिस्सा भी पड़ता था। उसने अपने टांगेमें चार घोड़े जोते और यात्रा आरम्भ कर दी। आधा जंगल पार करते-करते भेड़ियोंका झुण्ड इनके पीछे लग ही गया। अपनी बन्दूकसे उसने एकको मारा। उस एक भेड़ियेके गिरते ही टिड्डी दल ऐसा उसपर सारा झुण्ड टूट पड़ा और क्षण भरमें उस मृत भेड़ियेको खाकर फिर तांगा-रोहीका पीछा किया। उस व्यक्तिने फिर दूसरेको मारा परन्तु अब भेड़ियोंका झुण्ड अति निकट आरहा था। तो उसको एक उपाय सूझा। उसने तीसरे भेड़ियेको मारा और फिर जल्दीसे एक घोड़ेको छोड़ दिया। वह घोड़ा अपना प्राण बचानेके हेतु बड़ी तेज एक ओर सरपट भागा। सारा झुण्ड उसका पीछा करनेमें लग गया। परन्तु इन भेड़ियोंमें दौड़नेकी भी बहुत शक्ति होती है, अतः अतिशीघ्र उसको भी पकड़कर खा गये और पुनः इनके पीछे लगे। उस व्यक्तिने इसी प्रकार अपने दो और घोड़े उन काल-मुखोंमें दे दिये और तबतक जंगलका भी अन्त हो गया तथा इसका गन्तव्य स्थान भी निकट आ गया। उन भेड़ियोंका भी पेट कुछ भर गया था अतः वे लौट गये और इनकी जान बच गयी।

शक्ति :

इनके शरीरमें बनावटकी विशेषताके कारण दौड़नेकी शक्ति बहुत

होती है। ये कमसे कम पन्द्रह-बीस मील तक अपने भोज्य पशुका अविरत वेगसे पीछा कर सकते हैं तथा अपने बचनेके हेतु उसी वेगसे दूर तक भाग भी सकते हैं। अतएव कोई भी छोटा-मोटा जानवर जैसे हरिन अथवा छोटा सांभर आदि इनसे भागकर बच नहीं सकते।

एक पत्नी :

किंवदन्ती है कि ये अपने जीवन कालमें केवल एक बार संगिनी करते हैं। दूसरी बात यह भी कुछ प्रचलित है कि इनकी कोई-कोई मादीनें, मनुष्यके दूध पीते नन्हें शिशुको जीवित उठा लाती हैं और अपना दूध पिला-पिलाकर उसका पालन-पोषण करती हैं। समाचार पत्रोंमें इस विषयपर प्रायः कोई न कोई घटनायें छपती रहती हैं जिससे उपर्युक्त कथनकी पुष्टि होती है।

वासस्थान :

भेड़िये अधिकतर जहाँ बड़े-बड़े पेड़ न हों ऐसे खुले हुए जंगलोंमें रहते हैं। जहाँ ऊँची पथरीली जमीन, छोटे-छोटे झरबेर आदिके वृक्ष हों वहीं इनका वासस्थान रहता है। ये मांदके अन्दर नहीं रहते, वरन् गर्मियोंमें भी दिनके समय किसी वृक्षकी छायामें बैठकर दिन बिता देते हैं। उस समय भी वहाँ इनको चिकारे आदि छोटे पशु चरते हुए मिल जाते हैं जिनको दौड़ाकर ये पकड़ लेते हैं।

शिकार समय :

अधिकतर ये दिनमें ही शिकार करते हैं।

लकड़बग्घेसे अतर :

लकड़बग्घे और इनमें कोई सामंजस्य नहीं, वरन् हर प्रकारकी भिन्नता है। इनके शरीर और माथेकी बनावटमें, रूपमें, रंगमें सब प्रकारसे भेद है। लकड़बग्घेकी केवल घ्राण शक्ति ही अति तीव्र होती है, क्योंकि मृत तथा बिगलित हुए पशु ही इनका भोजन है। इनको दौड़ाकर

पीछा करके किसी जानवरको पकड़नेकी आवश्यकता नहीं। किन्तु भेड़ियोंकी घ्राण, दृक् और श्रवणेन्द्रिय तीनों तीक्ष्ण रहतीं हैं। इनको इन तीनोंकी आवश्यकता होती है। इन्हीं तीनों शक्तियोंके आधारपर इनका आहार निर्भर है, क्योंकि तीनों शक्तियोंके द्वारा ही जीवित जानवरको पकड़नेमें ये सफलीभूत हो सकते हैं। ऐसे ही किसी संकट-कालमें जब इन्हें कोई जानवर अधिक कालतक नहीं मिलता और भूखसे ये तड़प उठते हैं तभी ये मृत पशुओंको खाते हैं। ऐसे समयमें तो मनुष्य पशुसे भी बढ़ जाता है। क्षुधाकी पीड़ा असह्य होनेपर घृणित कार्य भी कर बैठता है। कहा गया है—

बुभुक्षितः किं न करोति पापं
क्षीणा नरा निष्करुणा भवन्ति।" (हितोपदेश)

अतः उस समय उसके आचरण क्षम्य हैं।

तारके बाजेसे भयभीत :

भेड़ियोंके विषयमें यह भी सुननेमें आया है कि तारके बाजेके शब्दसे ये बहुत भयभीत हो जाते हैं।

इनके आकारसे मिलता-जुलता एक जर्मन पुलिस कुत्ता है जिसे (Alsatian) अलसेशियन कहते हैं। चोर वगैरहको पकड़नेमें इनसे बहुत मदद मिलती है।

कटलहोके ऊपर वाला भेड़िया :

एक दिनकी बात है कि ब्राह्म मुहूर्तमें मैंने अपनी पत्नीके साथ डोंगियाके बँगलेसे लगभग आधी मील दूर कटलहीकी ओर जाकर सड़कके किनारे एक ओर मोटर खड़ी कर दी और राइफल हाथमें लेकर उस पर आरामसे बैठ गया। झुटपुटेका समय था ऊषाकालकी लालिमा भी अभी आकाशमें न थी, अतः दूर तक कोई चीजें स्पष्ट देख नहीं पड़ती थीं, अतएव हम आरामसे बैठे थे।

उस प्रातः संध्याकी बेलामें वहाँ सड़कको लाँघते हुए कोई न कोई पशु प्रायः देख ही पड़ जाते हैं। वहाँका जंगल इस प्रकारका है कि यदि बँगलेसे मील दो मील किसी ओर भी जाकर सड़ककी एक ओर किसी झाड़ी अथवा पेड़की आड़में घण्टे आधे घण्टे चुपचाप खड़े हो जायँ तो जलाशयकी ओर पानी पीनेके हेतु अथवा पानी पीकर लौटते हुए कोई न कोई पशु देख ही पड़ जाते हैं। परन्तु वे भी हर जगहोंसे नहीं; केवल निर्धारित ही स्थानोंसे सड़क लांघते हैं, जिसकी जानकारी आवश्यक है। अन्य स्थानोंपर घना जंगल ही क्यों न हो तथा घण्टों खड़े भी क्यों न हों, परन्तु कोई भी पशु दृष्टिगोचर न होंगे।

सुखपूर्वक बैठे हुए हमलोग प्रकृतिकी उस रमणीयताके रसास्वादनमें इस प्रकार तल्लीन हो गये कि पशुओंकी ओरसे हमारा ध्यान ही हट गया।

उस बीचमें यदि कोई भी पशु आ गये हों तो उनको हमलोग देख न सके। सम्भव है हमलोग ठीक स्थान चुन न पाये हों अथवा वे अन्धेरेमें हमसे कुछ दूरसे निकल गये हों और हमलोगोंके सतर्क न होनेसे हमें पता न चला हो। जो भी कारण हो हमलोग एक घण्टे तक वहाँ खड़े थे, अरुणोदय बीत गया, सूर्योदय हो गया, परन्तु कोई भी जानवर देख न पड़ा।

हमलोग लौटनेका विचार कर ही रहे थे कि सहसा एक भेड़ियेपर दृष्टि पड़ी जो एक झाड़ीकी ओरसे होता हुआ आ रहा था। हमलोगोंको देखकर भी उसने न तो भागनेका ही प्रयत्न किया और न अपनी चाल हीमें कोई परिवर्तन किया। प्रत्युत बड़ी निर्भीकतासे वह चलता चला आ रहा था। इसका आकार एक साधारण कुत्तेसे बहुत बड़ा और ऊँचा था। आकृति भी भयंकर थी। रंग कुछ राखीके ऐसा था।

जिस जंगलमें ये चले जाते हैं वहाँके प्रायः सभी छोटे-बड़े पशुओंको समाप्त ही कर देते हैं। सांभर ऐसे विशालकाय पशुको भी दौड़ाकर और थकाकर ये पकड़ लेते हैं।

यह ध्यान आते ही और खाली हाथ लौटनेसे भेड़िया ही सही यह सोचकर झट निशाना लेकर गोली चला दी ओर वह वहीं गिर गया।

३. श्रृगाल

हिन्दी नाम :

अपने यहाँ इनके कई नाम हैं। कोई तो इनको "शिवराम पाड़े" कहते हैं, तों कोई "पाड़े जी" हीसे सम्बोधित करते हैं। इनको "गीदड़" भी कहते हैं, जिससे इनकी भीरुता साबित होती है। इस विषयकी एक कहानी इस प्रकरणके अन्तमें देंगे। सबसे प्रचलित शब्द "सियार" तो है ही। यह शब्द संस्कृतके "शृगाल" अथवा "सृगाल"से निकला है।

संस्कृत नाम :

संस्कृतमें कई पर्यायवाचक शब्द हैं। जैसे : "जम्बूक" "क्रोष्टु", "शिवा", "भूरिमाय", "गोमायु", "फेरु" आदि।

धूर्त :

इनकी धूर्तताके कारण कई नाम ऐसे हैं जिससे धूर्तपना स्पष्ट झलकता है। जैसे "फेरव", "मृगधूर्तक", "वंचुक" अथवा "वंचक"।

अंग्रेजी :

अंग्रेजीमें (Jackal) "जाकल" कहते हैं।

रूप-रंग :

यद्यपि इनका रूप-रंग भेड़ियोंसे कुछ मिलता-जुलता है तथापि इनमें उनमें कोई सामंजस्य नहीं। कहाँ भेड़ियेका उन्नत ललाट कहाँ इनका माथा नीचा और छोटा। कहाँ भेड़ियेकी आँखोंमें व चालमें तेजस् निर्भीकता, कहाँ इनकी आँखोंमें कपट और चालमें चोरोंके सदृश दबक होती है, परन्तु किसी-किसीके काले रंग पर सोनहला रंग बहुत अच्छा और सुन्दर लगता है।

अंग :

इनकी ऊँचाई लगभग १८-२० इंच ही और इनका वजन लगभग दस सेर होता है।

भोजन :

विधिकी सृष्टिमें मल पर आकर्षित ये मेहतर व डोमका काम करते हैं। पक्षियोंमें जैसे गृध्र वैसे पशुओंमें ये हैं। "हड़हा" भी यही काम करता है। परन्तु जो इनसे भी अवशिष्ट रह जाता है, जैसे अधिक मोटा मांस अथवा अधिक मोटी हड्डी उसे हड़हा आसानीसे भक्षण कर जाता है।

रहन-सहन :

ये भी प्रायः एक-एक जोड़े साथ ही रहते और विचरते हैं। परन्तु कभी-कभी सायंकालमें एक साथ निकलकर एक विचित्र प्रकारका महाराव अथवा उच्च स्वरसे आक्रन्दन करते हैं जो बहुत ही अप्रिय तथा बुरा लगता है। कभी-कभी ये दिनमें भी निकलकर घूमते हैं। शेरके सदृश इन्हें भी गरमी बहुत सताती है। गरमीके दिनोंमें ये घण्टों पानीमें बैठे रहते हैं।

पागल :

कभी-कभी ये पागल हो जाते हैं। उस समय उस जंगलके सभी पशु इनसे भयभीत रहते हैं। यहाँ तक कि शेर भी उस जंगलको छोड़कर भाग जाते हैं। इस अवस्थामें जिस किसी पशुको वे काट लें तो तुरन्त इनका विष उस प्राणीके शरीर भरमें व्याप्त होकर उसको भी पागल बना देता है। फिर वह कुछ ही दिनोंमें समाप्त हो जाता है। पागल कुत्तेमें भी यही दोष है।

अशुभ :

शिकारी इनको बहुत अशुभ मानते हैं। शिकारपर प्रस्थान करते

समय यदि इनका भूलसे भी नाम ले लिया जाय तो निश्चय ही उस दिन कोई भी शिकारका मिलना कठिन हो जायगा अथवा चलते समय इनका दर्शन हो जाय तो भी कुछ नहीं मिलेगा। परन्तु कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है कि यदि उस समय इन्हें मार दिया जाय तो जानवर प्रायः मिल गये हैं।

निकृष्ट :

कुणपभुज् अथवा शवभोजी होनेसे जैसे पक्षियोंमें गृध्र नहीं मारे जाते वैसे इन्हें भी मारना कोई पसन्द नहीं करता।

अपकारिन् :

ये कभी-कभी लोमड़ीके साथ अथवा पृथक्-पृथक् निवास-स्थानोंके निकट आकर बहुत क्षति कर बैठते हैं। मुर्गियोंके कटघरेमें किसी प्रकार प्रवेशकर उनका पूरा संहार कर डालते हैं। यह नहीं कि एकसे अपनी बुभुक्षा शान्त कर लें। तरबूजके खेतमें पहुँत गये तो सारे फल सत्यानाश कर डालते हैं और बहुत-सा तो खा भी जाते हैं।

Coyote :

उत्तरी अमेरिका व कनाडामें ठीक इसी प्रकारके पशु पाये जाते हैं परन्तु उनको वहाँवाले Coyote अथवा Prarie wolf कहते हैं। यद्यपि ये भेड़िये नहीं हैं किन्तु सियारकी ही जातिके, पर उनसे बहुत छोटे होते हैं। ये भी किसानोंकी मुर्गियों आदिका नाश कर डालते हैं।

किंवदन्ती चली आती है कि ये शेरोंको भोजन ढुढ़वानेमें सहायता पहुँचाते हैं। परन्तु वास्तवमें शेरोंके पीछे रहनेमें इन्हींको भोजन मिलनेमें सुविधा हो जाती है।

हितोपदेश आदिमें इनके चातुर्यकी अनेक कथाएँ हैं और भीरुताकी भी एक कथा बहुत रोचक है।

"एक शेरनीको आरम्भमें बहु कालतक निजमें कोई बच्चे नहीं हुए। एक दिन परिभ्रमण करते समय उसे एक स्थानपर सियारका बच्चा पड़ा हुआ देख पड़ा। उस समय उसकी माँ भयके कारण अथवा अन्य किसी कारणवश वहाँ उपस्थित नहीं थी। बच्चेको देखकर शेरनीके वात्सल्यप्रेमका स्रोत बह निकला और तत्काल वह उसे अपने घर उठा लाई तथा अपना दूध पिला-पिलाकर उसे खूब हृष्ट-पुष्ट बना दिया। एक वर्षमें शेरनीका दूध पी-पीकर साधारण श्रृगालोंकी अपेक्षा उसकी काया अत्यधिक बड़ी और बलवान हो गयी। संयोगवश दूसरे ही वर्ष शेरनीको अपने निजके दो शिशु पैदा हो गये। तब भी शेरनीका प्रेम उस श्रृगाल-शावक परसे हटा नहीं और उसे भी वह सदा अपने साथ ही रखती थी। उसके निजके बच्चे बड़े होने लगे। तीनों साथ ही खेलते रहते थे। यह बड़ा और बड़ा भाई होनेके नाते उनकी रखवाली भी करता था और बीच-बीचमें उन्हें डाँट भी देता था। छोटे होनेसे वे सहम जाते थे। होते-होते छः महीनेका समय बीता अब वे दोनों शिशु नहीं रह गये तथा बहुत बड़े हो गये। वे अपनी माँसे कुछ ही छोटे रह गये होंगे और स्वभावतः उनके शरीर और मन दोनोंमें अतुलित बल हो गया। एक दिनकी बात है जंगलमें खेलते-खेलते उनको एक हाथी देख पड़ा। उसको देखते ही ये दोनों उसको मारने दौड़े। श्रृगाल बेचारा बहुत घबड़ाया, डाँटा-डपटा, उनको वापिस बुलानेका बहुतेरा प्रयत्न किया, परन्तु कौन सुनता है। वे दोनों बढ़ते ही गये और यह भयभीत हुआ भागता-भागता सीधे शेरनीके पास पहुँचा। क्रोध और भय मिश्रित वाणीसे सारा वृत्तान्त कह सुनाया और सविलाप अभियोग लगाया कि हमारा छोटे भाइयोंने अनुशासन नहीं माना। शेरनीने इसे अपना दूध पिलाया था और इसके प्रति वात्सल्य प्रेम था ही अतएव उसे बहुत प्रेमसे समझाकर कहा—

शूरोऽसि कृतविद्योऽसि दर्शनीयोऽसि पुत्रक।
यस्मिन् कुले त्वमुत्पन्नो गजस्तत्र न हन्यते॥

'तू जिस वंशमें जनमा है उसमें हाथी नहीं मारे जाते।' फिर उसे बिदा किया कि "अब यहाँ रहनेमें तुम्हारा कल्याण नहीं।"

४. लोमड़ी

नाम :

संस्कृतमें इन्हें "किखि" अथवा "खिखि", "खिंकिर", और "लोमशा" कहते हैं। शृगाल जाति होनेके हेतु कतिपय नाम समान हैं। जैसे—"भूरिमाय", "गोमाय", "धूर्त", "बहुमाय" आदि, सब शब्दोंसे इनकी धूर्तता अथवा चालाकीका भाव प्रकट होता है। ये भी बहुत चालाक जानवर होते हैं।

अंग्रेजीमें इन्हें Fox कहते हैं। इंगलैण्डमें पुराकालमें ये बहुतायतसे होते थे। वहाँपर शिकारी कुत्तोंकी सहायतासे घोड़ोंपर चढ़कर इनका बड़ा मनोरंजक शिकार होता था। उस शिकारीका सबसे बड़ा नाम होता था जो अन्तमें इसे दौड़ाकर पकड़ पाता था।

सौन्दय :

इस जातिके अन्तर्गत ये सबसे लघु काय परन्तु सबसे अधिक सुन्दर होते हैं।

अंग :

ये लगभग एक फुट तक ऊँचे और डेढ़-दो फुट लम्बे होते हैं। इनका वजन तीनसे पाँच सेर तक का होता है।

इनकी दुम बहुत झबरी, मोटी और लम्बी होती है। इनके दुम व रोयेंदार चर्मलोमन्का बहुत मूल्य होता है। विलायतमें इनके लोमन्का विशेषकर बहुत मान है। वहाँकी समृद्धिशालिनी स्त्रियाँ इनके लोमन्को अपने कोटमें बड़ी प्रसन्नतापूर्वक लगवाती हैं।

प्रकार :

इन्हीं रोयेंदार चर्मके लिए इनको बहु संख्यामें पालते हैं। इनके भी कई प्रकार होते हैं। उत्तरी बर्फीले ध्रुव प्रदेशोंमें ये रजत वर्णके होते हैं जिन्हें अंग्रेजीमें Silver fox कहते हैं। इनके लोमन् विशेषकर बहुमूल्य होते हैं।

भारतवर्षमें ये दो प्रकारके होते हैं। एक लाल, दूसरा सादा राखीके रंग का। राखीके रंगवाले साधारणतया समस्त भारतवर्षमें मिलते हैं, यद्यपि बहुतायतकी संख्यामें नहीं और न आसानीसे मिलते हैं। लाल रंगवाले केवल हिमालय और उत्तरी प्रदेशोंमें पाये जाते हैं। इनके भो लोमन् मूल्यवान होते हैं।

पत्नी व्रत :

इन लाल लोमड़ियोंके विषयमें कहा जाता है कि ये अपने जीवन कालमें एक ही संगिनी करते हैं। पर सादे लोमड़ीके बारेमें यह बात सुननेमें नहीं आयी।

वन्यता :

लोमड़ी पोस कभी नहीं मानते। भेड़िये भले ही पल जायँ परन्तु ये कभी भी पोष्य नहीं होते। साथ ही इनकी बुद्धि सबसे अधिक होती है। कहीं ये पोस मानते तो कुत्तोंसे कहीं अधिक उपयोगिता इनकी होती।

वास :

ये मांदोंमें रहते हैं। इन मांदोंमें आने जानेके कई मार्ग रखते हैं कि संकट पड़नेपर जब इन्हें कुत्ते आदि दौड़ाते हैं तो ये एक बिलसे दूसरी तीसरीमें घुसकर निकल भागते हैं। ये गम्भीर वनोंमें नहीं रहते।

भोजन :

इनका आहार चूहे, छोटी-छोटी चिड़ियें, मुर्गी, गोबरौला आदि बहुत छोटे जानवरोंका है। ये दीमक भी खाते हैं। परन्तु इनका सबसे प्रिय भोज्य पदार्थ छोटा शशक है, जिसे खरहा अथवा खरगोश कहते हैं। इन्हें यदि वह मिल जाय तो उसे बड़े स्वादसे भोजन करते हैं।

कभी-कभी इन्हें जब इन वन्य पशुओंका भोजन नहीं मिलता तब ये भेड़के छोटे बच्चोंको उठा ले जाते हैं, जिसे मेमना कहते हैं।

फ़ल के मौसममें ये बैर और अंगूर बड़े प्रेमसे खाते हैं। अंगूरोंको लेकर इन्हींकी कहावत है कि ऊँचे फले हुए अंगूरके गुच्छोंको जब ये बहुत झंपने पर भी नहीं पाते, तो कहते हैं—"अंगूर खट्टे हैं।"

शुभ :

शिकारके लिए प्रस्थान करते समय यदि इनका दर्शन हो जाय तो शिकारी इसको बहुत शुभ मानते हैं। क्योंकि प्रायः देखा गया है कि तब कोई न कोई जानवर अवश्य मिला है, इसी कारण इनका नाम लेनेसे बुरा नहीं मानते जैसे शृगालके नाम और दर्शनसे अशुभ मानते हैं।

एक बार मैंने जंगलमें भ्रमण करते हुए दो लोमड़ियोंको आपसमें निमग्न होकर बात करते हुए देखा, कदाचित् कोई ऐसा जटिल विषय छिड़ा था जिस पर मत ऐक्य न होनेसे वे दो शास्त्रज्ञोंकी तरह उच्च स्वरसे तर्क-वितर्क कर रहे थे। उसमें वे इतने तल्लीन थे कि मैं उनके अति निकट आ गया, परन्तु मेरे सानिध्यका उन्हें तनिक भी बोध न हुआ। बन्दूककी नालसे जब मैंने एकको कोंचा और डांटा तब ये बड़े जोरसे चाँय-चाँय करते-करते भागे।

५. कुत्ता

(क) कोगी : जंगली कुत्ता

नाम :

इनके भी कई नाम हैं, परन्तु दो नाम अधिक प्रचलित हैं, एक "कोगी" दूसरा "सोन-कुत्ता" जिससे इन्हें सम्बोधित करते हैं। इन्हें जंगली अथवा वन-कुत्ता तो कहते ही हैं, इनका एक नाम "सोनहा" भी है।

रंग :

"सोनहा" अथवा "सोन कुत्ता" सोने ऐसे रंगका द्योतक है। इनका रंग सोनेके ऐसा लाल होता है इसी कारण इन्हें सोनहा कहते हैं। अन्य प्रदेशोंमें इनके रंगमें कुछ अन्तर होता हो परन्तु उत्तरप्रदेश, नेपाल और दक्षिणमें ये लाल ही रंगके होते हैं। इसीलिए अंग्रेजीमें इन्हें Red dogs of Deccan कहते हैं।

संस्कृत :

संस्कृतमें "श्वन्" अथवा "श्वान" शब्द अधिक प्रयोगमें लाया जाता है। "कुक्कुर", "कौलेयक", "भष" अथवा "भषक" ("भष्"-"भषति"—अर्थात् भूंकना वा गुर्राना—"भषण") कुत्तेके भौंकनेको भी भषण कहते हैं। "मृगदंश" अथवा "मृगदंशक", "शुनक" "शुनि", "सारमेय" आदि अनेक नाम हैं। कुतियोंको "सारमेयी", "शुनी" आदि कहते हैं। बहुसंख्यक कुतियोंको "शुनीर" कहते हैं। अल्पवयस्क तरुण कुत्तेको "शुनक" कहते हैं।

अंग :

साधारण कुत्तोंकी ही भाँति इनके भी अंग बहुत गठीले होते हैं। परन्तु इनका माथा और सीना कुछ अधिक चौड़ा होता है और दुम

मोटी व झबरी होती है। साथ ही ये ऊँचे भी अधिक नहीं होते। साधारणतया ये बीस इंच ऊँचे होते हैं। इनका वजन केवल बीस सेर तकका होता है। तिसपर भी ये बहुत बली होते हैं। भेड़ियेके समान इनको भी अत्यधिक शक्ति होती है। ये थकित होना जानते ही नहीं। परन्तु इनकी चालमें वेग नहीं। ये एक बँधी चालसे ही दौड़ते हैं। कैसा भी भागनेवाला जानवर क्यों न हो ये एक बार जब उसका पीछा करेंगे तो भागकर वह किसी प्रकार इनसे बच नहीं सकता। उसे थका कर ये अवश्य ही पकड़ लेंगे। सांभर ऐसे बड़े-बड़े पशुको भी दौड़ाकर तथा थकाकर पकड़ ही लेते हैं।

समूह :

ये न तो एकाकी रहते हैं और न ये अकेले किसी भी पशुका पीछा करते हैं। ये सदैव संघमें ही रहते हैं। इनके झुण्ड चारसे लेकर पचीस-पचीस तीस-तीस तकके होते हैं। यही कारण है जिससे ये बड़ेसे बड़े पशुका भी पीछा करनेमें शंकित नहीं होते।

हरिणों और साधारण कुत्तोंकी तरह ये भी झुण्डमें रहना पसन्द करते हैं। अपने-अपने साथी भी ये झुण्डमेंसे चुन लेते हैं। जब बच्चे पैदा होते हैं तो कई वर्ष तक सब साथ ही रहते हैं। अतएव इनकी संख्या बढ़ती ही जाती है। तब बड़े-बड़े पशुओंको दौड़कर घेरकर पकड़ने और मारनेमें इनको और भी सुविधा हो जाती है।

शिकाररीति :

इनका एक झुण्ड यदि छः सातका भी हुआ तो ये जंगलके एक टुकड़ेमें थोड़ी दूर-दूर पर फैले हुए प्रवेश करते हैं। ठीक वैसे ही जैसे उस जंगलको हँकानेके लिए हंकवे प्रवेश करते हैं। आपसमें अन्तर केवल इतना रखते हैं कि एक दूसरेको देखते रह सकें और मध्यसे इनका शिकार निकलकर भाग भी न सके। अधिकतर धीरी ही चालसे शान्त

होकर दौड़ते बढ़ते चले जाते हैं। परन्तु यदि घना जंगल हो तो बीच-बीचमें कूं-कूं करते जाते हैं। जिससे आपसमें एक दूसरेसे सम्बन्ध विच्छेद न हो जाय। इस प्रकार वे भलीभाँति उस जंगलको छान डालते हैं। उसमें कोई भी पशु इनसे छिपकर बचा नहीं रह सकता।

मृगराजके भी मृगराज :

जिस जंगलमें इनका समूह प्रवेश करता है उस जंगलसे शेर भी भाग जाता है। क्योंकि वहाँके समस्त भक्ष्य पशुओंको ये ही खा जाते हैं और शेष पशु अतिशीघ्र उस जंगलको छोड़कर भाग जाते हैं। अतः शेरके लिए कोई भोजनकी सामग्री नहीं रह जाती। प्रायः ये दिनमें ही शिकार करते हैं, क्योंकि छिपकर शिकार करनेकी इनको न शक्ति और न आवश्यकता है जबकि ये दौड़ाकर ही भक्ष्यको पकड़ते हैं।

प्रायः ये घने जंगलोंमें ही रहते हैं। और शेर भी तो सदा घने जंगलोंमें ही रहते हैं। अतः इनकी उनसे प्रतिस्पर्धा होनेकी पूरी सम्भावना रहती है। यदा-कदा संघर्ष भी हो जाता है। जब इनकी संख्या कम रहती है तब शेर इनको मार भगाता है। परन्तु इनकी संख्या जब अधिक रहती है, जो प्रायः होती है, और जब ये भूखसे पीड़ित रहते हैं, उस समय जब शेरका भी सामना हो जाता है—विशेषकर उस समय जब शेर कोई पशु मार चुका हो और उसके भोजन निमित्त जा रहा हो तो उस समय ये शेरको भी मार भगाते हैं। कभी-कभी तो मार ही डालते हैं।

पालतू कुत्तोंकी तरह यह भौंक नहीं सकते। जंगली कुत्तोंको भूँकना नहीं आता।

इनको मारनेके लिए २२ Bore पर्याप्त है।

(ख) ग्राममृग : पालतू कुत्ते

वन्य पशुओंकी पुस्तक होनेके कारण घरेलू अथवा पालतू कुत्तोंका वर्णन यहाँ नहीं करते। परन्तु इतना बतलाना आवश्यक है कि पुराकालमें पिल्लोंकी ही अवस्थामें ये सोनकुत्ते ही पकड़ लाये गये तथा घरमें पोसे गये और तब ये बड़े स्वामिभक्त भी हुए। अब भी जंगलके किनारेके गावोंके कुत्तोंका संमिश्रण भेड़िया अथवा शृगाल व कोगीसे हो जाता है।

अनेक जातियाँ :

अब इनकी अनेकों प्रकारकी जातियाँ हो गयी हैं। कई प्रकारके तो शिकारी कुत्ते ही होते हैं, जिनके द्वारा अनेक प्रकारके वन्य पशुओंके आखेटमें सहायता मिलती है। इसी कारण—

संस्कृतमें इन्हें "कुक्कुर", "ग्राम्य मृग", "ग्रामसिंह", "गृह-मृग", "गृहपाल" आदि कहते हैं।

पसीना :

श्वान जातिकी विचित्रता है कि इनके अंगोंमें पसीना नहीं होता। इनका पसीना जिह्वासे बहता है।

शूकर

- पौरुष
- प्रकृति
- जाति : १. वनवराह
  २. ग्राम्य
  ३. विदेशी

शूकर

प्राचीन कालसे किंवदन्ती चली आ रही है कि "मर्द" अथवा "वीर" तीन होते हैं—

१. पुरुष

२. सर्प और

३. वन-वराह या बनैला सूअर।

पुरुषके साहसके विषयमें कुछ विस्तृत लिखना तो विफल प्रयास करना है। उनका शौर्य समस्त जगत्में प्रसिद्ध है। "पौरुष" शब्द पुरुषसे ही तो निकला है।

सर्पका विषय भिन्न है। अतएव एक पृथक् परिच्छेदमें उनका उल्लेख करनेका प्रयास करूँगा। किन-किन विकट स्थितियोंमें किस-किस प्रकार इनको मारना पड़ा इसका ज्ञान रोचक और हितकारी होगा। इस प्रसंगमें केवल इतना कह दूँ कि उपरोक्त उक्ति अक्षरशः सत्य है। परन्तु सब सर्पोंके लिए नहीं, अपितु विषधर काले नागके ही लिए यह कहा जा सकता है। भय क्या वस्तु है उससे वह सर्वथा अनभिज्ञ है।

संस्कृत नाम :

संस्कृतमें शूकरके कई नाम दिये हैं। कुछ तो लक्षण सूचक हैं। जैसे—"दंष्ट्रिन्", "दंष्ट्रास्त्र" अथवा "दंष्ट्रायुध", अर्थात् दांतवाले, दांत ही जिसके अस्त्र अथवा आयुध हैं।

बगलवाले बड़े दाँत :

अपने आकारके अनुरूप इनको भी हाथीकी तरह दो बड़े-बड़े "रद" होते हैं जिनसे ये गहरा घाव कर सकते हैं। गुजरातीमें इनको एक

विनोदोक्ति है—"हाथीने बच्चों छूं, सूँ इ घसि गयो" अर्थात् हाथीका बच्चा है सूँड़ घिस गया है।

इनका एक दूसरा नाम "घोणिन्" है जिसका अर्थ नाकवाला है। "घोणा" का एक अर्थ नाक है। शूकरका थूथन बहुत दृढ़ और लम्बा होता है। इनके थूथन अथवा नाकको "पोत्र" कहते हैं अतएव "पोत्रिन्" भी इनका एक नाम है और "पोत्रआयुध" भी।

इसी प्रकार "भूदार", "घृष्टि", "किर", "किरि", "कोल", "क्रोड", "किटि" आदि अन्य कई नाम हैं।

एक नाम "स्तब्धरोमन्" है। स्तब्ध यानी कठोर और रोमन्का अर्थ है रोयें—जिसका रोआ अति कठोर हो। शूकरके रोम बहुत ही कठोर होते हैं, जो एक घने कड़े ब्रशका काम करते हैं। जहाँ कहीं कठोर रोआँका विवेचन करना होता है तो तुरन्त "सूअर बर्रा" शब्दका प्रयोग कर देते हैं।

इनके प्रचलित नाम दो ही हैं : (१) वराह अथवा "वाराह" तथा (२) "शूकर" अथवा "सूकर"।

अपने समूहसे विलग होकर परिभ्रमण करनेवाले, दुष्ट प्रकृति, बृहदाकार शूकरको ग्रामीण लोग "अकेलवा" से सम्बोधित करते हैं। यह अपना जीवन एकाकी ही व्यतीत करता है। आरम्भमें यह भी अपने झुण्डमें ही रहता है। परन्तु शूकरीके बच्चे होनेके उपरान्त ये पृथक् होकर रहते हैं। यही पर्वताकार वन्य शूकर है जो निर्भीकतासे निर्द्वन्द्व होकर वनमें एकाकी विचरता रहता है और जिसके लिए "वीर" शब्द कहा जाता है।

रंग :

कुछ शूकरोंका रंग कत्थई अर्थात् गेरुआ होता है। विशेषकर तारुण्यावस्थावाले शूकरोंका ही यह रंग होता है। अधिकतर वृद्ध

शूकरोंका रंग काला ही होता है, जिससे प्रातः अथवा सायंकालकी बेलामें झुटपुटे समय धुंधले प्रकाशमें दूरसे भालूका भ्रम हो जाता है। इनमें भी कोई-कोई छत्तीस इंचसे भी ऊँचे होते हैं और इनके भी केश पर्याप्त लम्बे होते हैं, विशेषकर गर्दन और पीठके ऊपरके, जो लगभग ४-५ इंचके होते हैं, कुछ उसी प्रकारके जैसे घोड़ेके गरदनके अयाल हों। शेष अंगमें भी श्वेतमिश्रित कुछ लम्बे-लम्बे रोम होते ही हैं। इसलिए यदि दूरसे भालूका भ्रम हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं।

चर्म :

इनका चर्म भी बहुत मोटा और कठोर होता है परन्तु शोधनके उपरान्त ही। शोधनके पूर्व जीवित अवस्थामेंइनके त्वचाकी ऐसी बनावट होती है कि कोई भी पैनी वस्तु जैसे भाला, कटार आदि बड़े आसानीसे प्रवेशकर जाते हैं। बहुत युयुत्सु होनेके कारण अन्य पशुओंके तथा अन्य शूकरोंके रदोंसे अथवा खांगोंसे इनके चर्ममें अनेक घाव हो जाते हैं, लगभग पाँच-पाँच, छः-छः इंचके। ये घाव शोधने पर खुल जाते हैं। यदि इनका चर्म कहीं साबूत निकल आवे तो बहुत मूल्यवान् होता है। केवल मगर और घड़ियालके चर्म इससे अधिक मूल्यके होते हैं। एक बार अपने मारे हुए शूकरके चर्मको शिकारीको उतार लानेको कहा तो उसने साश्चर्य कहा कि "कहीं सूअरमें भी चमड़वा होतवा। हमन तो चमड़वा सहित भून-भांन खा गयली।" सुनकर हम लोग हँस पड़े।

इसके विपरीत शेर, चीतोंकी त्वचाकी ऐसी सुदृढ़ रचना होती है कि उसमें पैनीसे पैनी वस्तु भी प्रवेश नहीं कर सकती।

यद्यपि शूकरके पैर पतले होते हैं परन्तु होते हैं अत्यन्त बलिष्ठ। हरिन अथवा गायकी तरह इनको भी खुर होते हैं।

अल्प दूरीके लिए ये बड़ी तीव्र गतिसे दौड़ सकते हैं, परन्तु शीघ्र ही श्रमित हो जाते हैं। कहा यह जाता है और सत्य भी है कि जब ये

बहुत वेगसे दौड़ते हैं तो सहसा घूम नहीं सकते। अतएव जिसके ऊपर वेगसे आक्रमण करते हैं यदि वह व्यक्ति ठीक समय शीघ्र एक ओर हट जाय तो उस समय वह बच जायगा, क्योंकि इनके लक्ष्यसे वह आगे बढ़ जायगा। भले ही वह कुछ आगे बढ़कर अपनेको रोक पाये और तब पुनः हमला करनेके हेतु घूमे, परन्तु इसकी सम्भावना कम होती है, क्योंकि फिर वह सीधे ही निकल जाता है।

वजन :

इनके शीघ्रतासे घूम न सकनेके दो मुख्य कारण हैं। एक तो इनका उस थोड़ी दूरके लिए अति तीव्र गतिसे दौड़ना, दूसरे इनके शरीरकी बनावट। इनका शरीर तो, हुआ करता है बहुत भारी किन्तु पैर होते हैं बहुत पतले। तीसरे इनका वजन लगभग तीनसे चार मन तकका होता है। इनका माथा भी बहुत लम्बा और भारी होता है। इसलिए ये अति वेगमें सहसा घूम नहीं सकते।

दांत :

नर शूकरोंके रद अथवा खांगोंकी बनावट बड़ी विचित्र होती है। ऊपरके दाढ़में दोनों ओर दो खांग ऊपरकी ही ओर लगभग दो इंचसे ऊपर मूँछोंकी तरह निकली रहती हैं। उन्हींसे सटे हुए नीचेके दाढ़के दोनों ओरके खांग वहीं ऊपरको लगभग तीन-चार इंच निकले रहते हैं। किसी-किसीके रद पाँच-छः इंच या इससे भी लम्बे होते हैं। यही इनके मुख्य अस्त्र हैं, जिनसे मनुष्य अथवा अन्य पशुओंको ये गहरे घावकर देते हैं तथा इसी कारण इनकी मुखाकृति इतनी भयंकर लगती है।

भोजन :

पौधोंकी जड़ ही इनका मुख्य आहार है। अपने विकट रदों व सुदृढ़ थूथनसे ये भूमिको खंद डालते हैं। यदि ये कहीं आलूके खेतमें

प्रवेशकर पायें तो फिर उसमें कुछ शेष रह जाना असम्भव है। ये ईखके खेतमें भी रहते हैं। खेतीके ये बहुत बड़े वैरी हैं। प्रायः ये झुण्डमें ही रहते हैं। इनका झुण्डका झुण्ड जिस भी किसी खेतमें प्रवेशकर गया तो वह खेत साफ हो गया। ये कीड़े-मकोड़े भी खाते हैं तथा "मरी" घसीटते हुए भी देखे गये हैं।

एक बार एक बड़े चीतेको मारनेके लिए एक भैंसका छोटा पड़वा बाँधा गया जिसको चीतेने मार डाला। सायंकाल उसके समीपके मचान पर जब चीतेकी अगवानीके लिए बैठा गया तो दो घण्टे तक चीता नहीं आया। इस बीच एक बड़ा शूकर आया और उस "मरी"को घसीट कर ले जाने लगा। विवश होकर उसे मारना पड़ा। परन्तु आश्चर्य बहुत हुआ, क्योंकि अभी तक इनके विषयमें यही विदित था कि ये शाकाहारी होते हैं।

ग्रामीण और वन्य शूकरोंके भोजनमें बहुत अन्तर है। ग्रामीण सूअर गन्दा जानवर होता है। यहाँ तक कि वह विष्ठा खा जाता है।

जंगली सूअरोंके भोजनका समय अधिकतर प्रातःकाल अथवा सायंकाल होता है। परन्तु जहाँ आदमियों द्वारा विघ्न-बाधा उपस्थित होनेका भय होता है वहाँ वे रात्रिमें अर्धरात्रिमें निकलते हैं।

विलायती सूअर

एक विलायती सूअर होता है जो इन दोनोंसे भिन्न है। उसके मुख और सारे अंगोंकी भी बनावटमें अन्तर है। रंग भी हल्का कत्थई होता है। ये बहुत ही कायर, स्थूल काय और चर्बीसे भरे होते हैं। क्योंकि इनको केवल भोजनके हेतु पाला जाता है, पालकका विशेष ध्यान इनको खूब हृष्ट-पुष्ट और मांसल बनानेका रहता है, अतएव ये बहुत ही भौंड़े और लद्धड़ होते हैं। वन्य शूकर यद्यपि बृहत् आकार और मेदस्विन् होता है परन्तु उसके समस्त अंग बहुत ही गठीले और सुदृढ़ होते हैं जिससे उनमें विशेष बल और स्फूर्ति होती है।

वास :

इनका वास अधिकतर गुल्मावृत स्थान अथवा घने झारखण्डके अन्दर होता है जहाँ अन्य किसीका प्रवेश होना कठिन है। परन्तु ये आसानीसे उसमें गमनागमन करते हैं। हर प्रकारके पशुओंसे रक्षा हेतु कृषक अपने खेतको चारों ओर घनी और कटीली झाड़ियोंसे घेरता है। सम्भव है अन्य पशु उसके अन्दर न जा सकें। परन्तु ये उसमें भी आसानीसे प्रवेश कर जाते हैं।

कोई-कोई थोड़ी देरके लिए कन्दराओंके अन्दर, परन्तु मुखद्वारके समीप ही विश्राम ले लेते हैं और दिनके आतपसे अपनेको बचा लेते हैं। कभी-कभी ऊँची घासोंके बीच जहाँ वृक्षोंकी भी छाया हो और भुवन-भास्करकी प्रचण्ड किरणोंका प्रवेश न होता हो वहाँ ये दिन बिता देते हैं। ये भी शेरोंके सदृश उष्णतासे सन्तप्त रहते हैं और ग्रीष्ममें प्रायः कीचड़-पानीमें पड़े रहते हैं।[1]

जैसा पूर्व लिख आया हूँ प्रायः ये यूथचारिन्[2] ही होते हैं। कभी-कभी केवल दो चारकी ही संख्यामें विचरते रहते हैं और जो एकाकी रह जाता है उसका प्रकृति बहुत ही क्रूर हो जाती है तथा एक विचित्र प्रकारका कर्कश चीत्कार कर अनायास ही हमला कर बैठता है। ऐसे इनकी बोलीको शूकर नाद अथवा घुरघुराना कहते हैं।

शिकार :

इनका शिकार निरापद नहीं है। कुछ ही वर्ष पूर्व भारतवर्षमें अधिकतर शिकारी घोड़ेपर चढ़कर इनको दौड़ाकर केवल भालेसे ही मारते थे। उलांवके मेरे बड़े भांजे श्रीचन्द्रचूड़देवने जिनको सशस्त्र डाकुओंको अकेले मार भगानेके लिए बहादुरीके लिए गवर्मेण्टसे G. M. का सनद मिला है, सैकड़ों सूअरोंको भालेसे ही मारा है और कई बार उनके हमलोंसे बाल-बाल बचे हैं।

१.-२. रघुवंश २।१७, ९।५९

ये अधिक दूर भाग नहीं सकते। अतः जब देखते हैं कि घुड़सवार अति निकट आ गया तो घूमकर स्वयं आक्रमण कर बैठते हैं। परन्तु कुशल शिकारी अपने और घोड़े दोनोंको बचाकर उसे भालेसे प्रायः मार देता है। परन्तु कभी ऐसा भी होता है कि शिकारीका निशाना चूक गया और वह भालेसे इनके मर्म-स्थानको भेद नहीं सका। ऐसी अवस्थामें यह केवल हलकी चोट लगनेसे और गम्भीर आहत न होनेसे अतिशय रोषमें होकर पहले घोड़ेपर ही वार कर बैठता है। अपने विकराल रदोंसे उसके पैरको चीर देता है। परिणामस्वरूप शिकारी भी भूमिपर गिर पड़ता है। और तब प्रतिहिंसाका इन्हें पूर्ण अवसर मिल जाता है। उस समय ऐसा ही कोई भाग्यशाली होगा जो इनके आक्रमणसे बच जाय।[1]

अब शूकरोंका साहस देखिये।

साहस :

इनके पराक्रमका एक ज्वलन्त उदाहरण है। एक शिकारीने आक्रमण करते हुए शूकरपर अपने भालेसे सच्चा निशाना लगाया जिसके कारण वह मर्माहत हो गया, उसके शरीरमें प्रवेश किये हुए भालेको शिकारी निकाल भी नहीं पाया कि यह सावधान होकर उठा और प्रतिशोधकी भावनासे वह शूर वीर उस भालेको अपने अन्दर और प्रवेश कराता हुआ शिकारीकी ओर बढ़नेका पूरा यद्यपि विफल प्रयास करता रहा जबतक कि उसके प्राण पखेरू उड़ न गये।[2]

१.-२. महाकवि कालिदासने सूकरकी इस प्रवृत्तिका इसी रूपमें २००० वर्ष पूर्व इस प्रकार वर्णन किया है—

त वाहनादवनतोत्तरकायमीषद् विध्यन्तमुद्धतसटाः प्रतिहन्तुमीषुः।
नात्मानमस्य विविदुः सहसा वराहा वृक्षेषु विद्धमिषुभिर्जघनाश्रयेषु॥

दशरथजीने घोड़ेपरसे ही सूकरोंके झुण्डपर बाण चलाये। चोट लगते ही वे सब दशरथजीको मारने दौड़े, किन्तु दशरथजीके बाण इतने तीखे और वेगशाली थे कि उन्होंने सभी सूकरोंको पेड़ोंमें छेद दिया। रघुवंश ९.६०

एक बार हमारे छोटे चाचाजीके साथ दूसरी घटना हुई। उन्होंने एकाकी विचरते हुए एक बड़े शूकर पर गोली चलायी। यद्यपि उसे गम्भीर चोट लगी तो भी उसकी उपेक्षा करता हुआ वह वीर्यशालिन् पाश्र्वके खेतसे निकलता चला आ रहा था। खेतके कारण चाचाजीकी आँखोंसे वह ओझल हो गया। इसलिए वे तत्काल दूसरी गोली चला न सके, जब वह उस खेतके रक्षकके पाससे निकला तो उसने अपनी लकड़ी काटनेवाली टँगारीसे उसके पीठपर ऐसा प्रहार किया कि उसकी पीठ विदीर्ण हो गयी—पूरे नौ इंचका गहरा घाव हो गया। तिसपर भी उसने घूमकर अपने "रद" से कृषककी टांग चीर डाली। उसका क्रंदन सुनकर जब चाचाजी उधर दौड़े तो इनके अभिमुख होते ही वह उस गम्भीर घायल अवस्थापर भी तीर ऐसा इनके ऊपर झपटा। इनको केवल इतना ही समय मिला कि बन्दूककी नाल सीधी कर दोनों गोली दनादन चला कर एक ओर कूद गये और बाल-बाल बच गये। वह शूकर भी झोंकमें केवल पांच गज आगे बढ़कर गिर गया।

निर्भीकता :

कभी-कभी इनकी भिड़न्त चीते और बाघसे भी हो जाती है। चीतेको तो ये आसानीसे मार भगाते हैं। परन्तु बाघसे भी जिनके ये भक्ष्य हैं, सामना होनेपर ये आशंकित नहीं होते। अतएव कभी-कभी जब इनकी चित्तवृत्ति बिगड़ी रहती है अथवा किसी कारण विशेष रुष्ट रहते हैं और उस समय सहसा बाघका सामना हो जाय तो ये बरबस उनपर टूट पड़ते हैं। दोनोंको गहरी चोट आ जाती है। परन्तु फिर भी अवसर मिलते ही इनसे बचकर निकल भागनेमें ही बाघ अपनी कुशल समझता है। किसी-किसी शिकारीका कथन है कि इस भिड़न्तमें कभी-कभी दोनोंकी ही मृत्यु हो जाती है।

यह भी सत्य है कि जिस ताल तलैयामें बाघ पानी पीता है उसमें यह "अकेलवा" भी निर्भय होकर पीता है। शेरके सान्निध्यके कारण

भले ही अन्य निरीह पशु पलायमान हो जायँ परन्तु यह "एकाकिन्" अपने स्थानपर निःशंक डटा खड़ा रहेगा। एकबार दो शेर इसके दोनों ओर होकर पानी पीने लगे। फिर भी वह हटा नहीं, उन दोनोंके ऊपर अपने लाल-लाल नेत्रोंसे दृष्टि डालता हुआ पुनः पीना आरम्भ कर दिया। परन्तु यह निर्भीकता उसी "अकेलवे"की होती है किसी अन्य की नहीं। यह घटना आँखों देखी है।

साथ ही यह भी यथार्थ है कि यदि शेर भूखा नहीं होता है तो इसका बोध अन्य पशुओंको भी हो जाता है और उस समय वह किसीपर अनायास आक्रमण नहीं करता। सम्भव है इसी कारण शेरोंने उसे छोड़ दिया।

शूकरोंको बहु-सन्तान होती है और एक-एक बार पांच-पांच, छः-छः बच्चे पैदा होते हैं। यही कारण है कि इतने मारे जानेपर भी इनकी संख्यामें अल्पता दृष्टिगोचर नहीं होती।

गोरखपुरके शूकर :

शूकरोंके शिकारका प्रथम अवसर मुझे सन् १९१७ ई० के जाड़ोंमें मिला जबकि मेरे आदरणीय बड़े भाई स्व० श्री श्रीविलासजी गोरखपुरमें डिप्टी कलेक्टर थे। उन्हें विदित था कि मुझे शिकारमें अत्यन्त रुचि है। अतएव दिसम्बरकी बड़े दिनकी छुट्टियाँ उन्हींके यहाँ व्यतीत करनेके लिए उन्होंने मुझे आमन्त्रित किया। उन दिनों विद्यालयमें "क्रिसमस" की लगभग दस दिनोंकी छुट्टी होती थी। उनका निमन्त्रण सहर्ष स्वीकार कर अति उत्साहसे मैं शीघ्र ही वहाँ पहुँचा। उनकी छुट्टी आरम्भ होने तक दो-चार दिन वहीं उनके साथ रहा तथा भावी आखेटका कार्य-क्रम बनाता रहा।

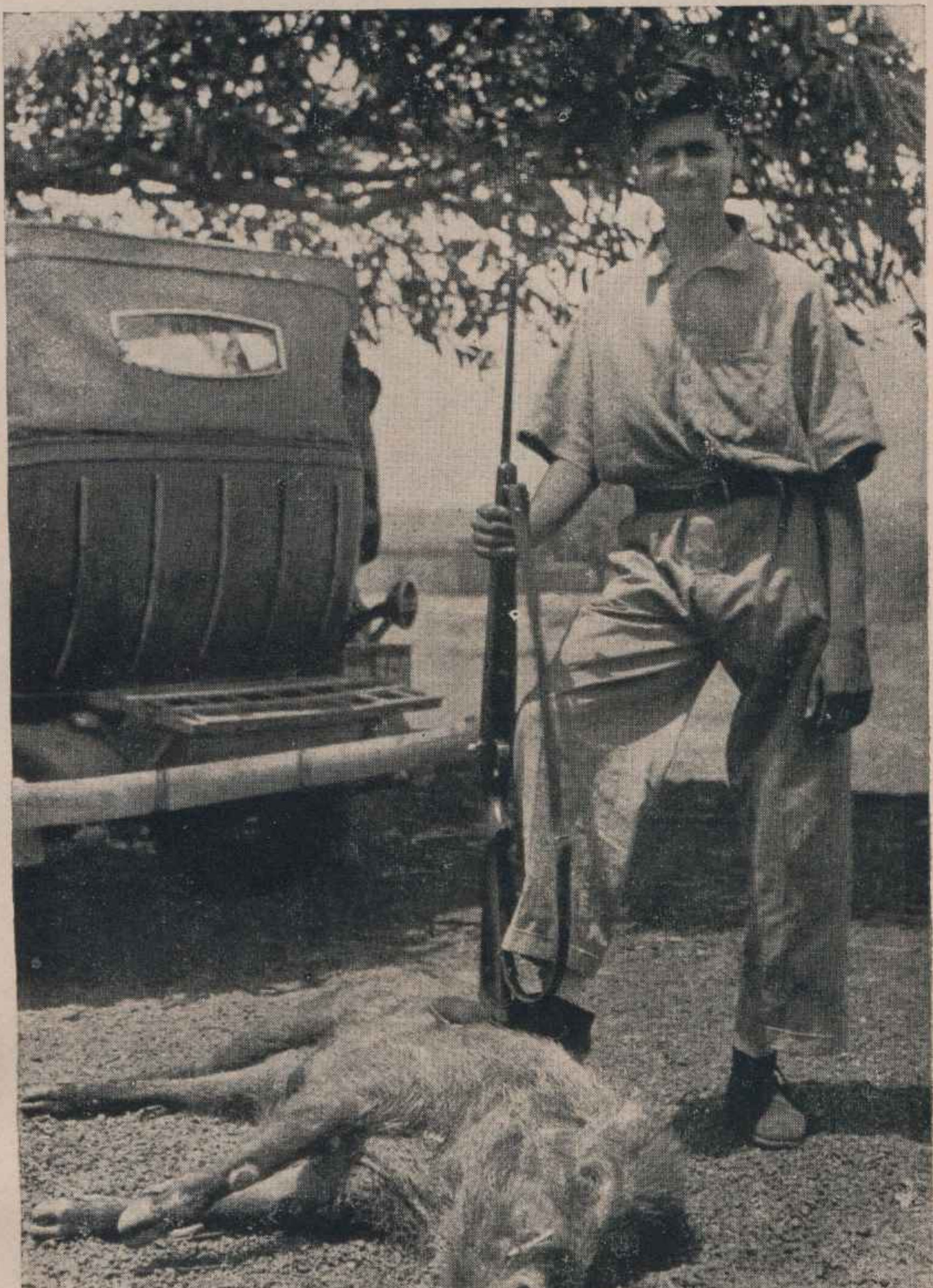
वहाँके एक प्रतिष्ठित वकील जमीन्दारने हमलोगोंको अपने जंगलोंमें शिकार खेलनेका साग्रह निमन्त्रण दिया था। उनका गाँव गोरखपुर

शहरसे बहुत दूर था। सायंकाल हमलोगोंने गोरखपुरसे प्रस्थान किया आर रात्रिमें दो बजे सिसवा बाजार स्टेशनपर उतरे। स्टेशनसे लगभग दस मील देहाती कच्चे रास्ते जानेपर उनका गाँव था। अतः सवारीके लिए उन्होंने बैलगाड़ियाँ मँगा रक्खी थीं। स्टेशनपर रात्रि बितानेसे व्यर्थ समयका दुरुपयोग होता देख हमलोग अपनी-अपनी बैलगाड़ियोंपर ही बिस्तर बिछाकर सो गये और गाड़ीवानोंने गाड़ियाँ हाँक दीं। झूलेका-सा आनन्द लेते हमलोग गाढ़निद्रामें अत्यन्त आरामसे सोते रातभर चलते रहे। प्रातः ६ बजे नींद खुलनेपर अपने काफलेको एक सुन्दर अमराईसे होकर जाते देखा। थोड़ी देर वहाँ रुककर प्रातः क्रियासे निवृत्त होकर पुनः चलकर आठ बजते-बजते उनकी छावनीपर पहुँच गये। वह दिन तो भोजन, विश्राम तथा आखेटके प्रबन्धमें ही बीत गया।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही हम लोग पूरा कलेवाकर जंगलकी ओर चल पड़े। जमींदार साहेबने लगभग दो ढ़ाई सौ हंकवे एकत्रित कर लिए थे। वे भी हम लोगोंके साथ हो लिए।

उधर तराईके जंगल बहुत ही सघन तथा हरे भरे होते हैं और जंगलोंके बीच कई रास्ते कटे रहते हैं जो जंगलोंको कई भागोंमें विभक्त कर देते हैं। उससे आने जानेमें सुविधा भी हो जाती है और यदि किसी एक टुकड़ेमें आग लग जावे तो दूसरे भागमें फैल न जाये, इसलिए बीच-बीचमें काफी चौड़े-चौड़े मार्ग छूटे रहते हैं। कहीं-कहीं तो नालोंके कारण सत्तर अस्सी गज तककी दूरी हो जाती है।

ऐसे ही एक जंगलके दो भागके बीच हम लोगोंको विभिन्न स्थानों पर बैठा दिया गया। हममें से कोई तो घासके जुटोंकी ओटमें कोई छोटे वृक्षकी ओटमें और कोई जंगलके किनारे ही किसी वृक्षकी ओटमें बैठ गया तथा पहला हाँका प्रारम्भ हुआ। इसी हाँकेमें मुझे मेरा प्रथम घोड़रोज मिला जिसका विस्तृत विवरण "गोरखपुरका घोड़रोज" प्रकरण [पृष्ठ ५६] में आ चुका है।



लेखक के कनिष्ठ पुत्र श्री राज्यवर्धन देव अपने आखेट शूकर के साथ

घोड़रोजके शिकार हो जानेके उपरान्त दूसरा हाँका पास हीके एक दूसरे जंगलके दूसरे भागमें कराया गया। इस बार मैं एक छोटेसे पेड़पर चढ़ गया जिससे कि दृष्टि दूर तक फैल सके। कारण पहली बार जमीनपर बैठने और घास आदिके ओटे होनेसे दूर तक देख नहीं सकता था, और सुना यह कि कई पशु निकल गये जिसे मैं देख न सका था।

मेरे वृक्षारोहणके थोड़ी ही देर बाद हाँका आरम्भ होते ही एक बृहदाकार काला प्राचीन शूकर मन्द गतिसे झूमता हुआ दूसरे जंगलकी ओर जाता देख पड़ा जो मुझसे लगभग सत्तर-अस्सी गजके दूरी पर रहा होगा। पेड़ पर चढ़े हुए जल्दीसे निशाना लगाना कितना कठिन है यह तो इस प्रकारके अनुभवी तथा भुक्तभोगी शिकारी ही समझ सकता है, अतः मैं भी शीघ्रतापूर्वक निशाना लगा नहीं पा रहा था, कारण एक तरफसे तो पेड़की टहनियां तथा पत्ते निशाना रोकते हैं, दूसरी तरफ यदि स्वयं भली भाँति जमकर न बैठे हों तो अपनी ही गोलीके धक्केसे गिर जानेका पूरा भय होता है। किसी प्रकार निशाना लेकर गोली चलाई जो शूकरके चलते होनेके कारण उसके गरदन पर न लगकर कूल्हे पर लगी। गोलीके धक्केसे वह तो फिर हरी ऐसा घूमकर वहीं बैठ गया और इधर मैं यदि एक हाथसे शीघ्र ही पेड़की डाल न पकड़ लेता तो मेरे गिरनेमें भी कोई सन्देह न था। अतः फिर दूसरी गोली पेड़परसे चलानेका साहस न हुआ।

यद्यपि शूकरके कूल्हेपर ही गोली लगी थी तथापि भारी सबल गोलीने उसकी दोनों ओरकी अस्थियोंको तोड़ दिया था जिसके कारण वह भाग नहीं सका। जंगलके हाँकेकी प्रणालीके अनुसार मैं तत्काल ही नीचे नहीं उतर आया, यद्यपि जबतक हाँकेवाले सम्मुख निकट न आ जाँय उतरना मना है इसलिए कि कदाचित् कोई अन्य पशु निकल आवे। परन्तु जंगलका वह भाग बहुत छोटा था तथा मेरी गोली भी

चल चुकी थी अतएव और कोई जानवर इधर नहीं निकले। यद्यपि पीछेसे सुननेमें आया कि गोली चलनेके कारण अथवा सच्चा हाँका न होनेके कारण कतिपय अन्य पशु दूसरी ओर कट गये।

इतनेमें हँकवे भी जंगलसे बाहर निकल आये और मैं भी नीचे उतर कर शूकरकी ओर बढ़ा। इस बीच हंकवे वाले उसे घेरकर लाठियोंसे प्रहार कर रहे थे और वह अपनेको बचाता हुआ उनपर आक्रमणका प्रयत्नकर रहा था। हमारे निकट पहुँचनेके पहले ही दो एक गाँववालोंकी लाठी उसके सरपर ऐसी सटीक बैठी कि उसकी तत्काल मृत्यु हो गयी। पास पहुँचनेपर मैंने देखा कि जानवर बहुत बड़ा था और उसके मुखके दोनों ओर पाँच-पाँच, छः-छः इंचकी खांगें निकली थीं, परन्तु दुर्भाग्यवश किसीके लाठीके प्रहारसे उसकी एक ओरकी खांग टूट गयी थी।

बड़ी राइफलकी दो-दो गोलियाँ चल चुकी थीं और कोलाहल भी बहुत हो जानेसे यह विचार हुआ कि इस समय आस-पासके जंगलोंके भागोंसे सब जानवर निकल भागे होंगे। अतएव दो-तीन मील दूर एक गहन जंगलमें हमलोगोको ले जाया गया। यहाँपर जंगलके दो भागोंके बीच एक बहुत बड़ा दलदल स्थान था, जो लगभग चार सौ गज लम्बा और एक सौ गज चौड़ा रहा होगा। यद्यपि उसमें पानी कम था परन्तु दल-दल अधिक होनेसे पशु भी उसमें आ-जा नहीं सकते थे। इस दल-दलके बीच लगभग डेढ़ गज चौड़ा पानीकी सतहसे दो फुट ऊँचा एक मार्ग बना था जो दोनों ओरके जंगलको सम्बद्ध करता था। इस मार्गके द्वारा मनुष्य या पशु दोनों ही आ-जा सकते थे। परन्तु यह भी मार्ग बहुत ठस न था और जलाढ्य-दलदला होनेसे उसपर भी बहुत सम्हलकर आना-जाना होता था। उस दल-दलके चारों ओर इतना घना जंगल था कि दृष्टि थोड़ी भी फैल नहीं सकती थी, केवल उस मार्ग तक ही केन्द्रित थी।

इसी पार उस मार्गके ठीक सामने और समीपमें ही जहाँ मार्ग और दलदलका अन्त होकर दृढ़ भूमि और जंगलका आरम्भ होता है एक बहुत बड़ा और मोटा वृक्ष था। पिछली बार पेड़पर चढ़कर गोली चलानेका कटु अनुभव हो चुका था अतः इस बार मैंने उस मोटे वृक्षकी ओटमें भूमिपरसे ही खड़े रहकर गोली चलानेका निश्चय किया। वृक्ष भी लगभग दो फुट ऊँचे टीलेपर था इसलिए थोड़े ऊपर तो थे ही जिससे जानवर देखने और गोली चलानेमें सुगमता हो गयी।

हँकवेवाले उस पारका जंगल हँका रहे थे। उसमें जो भी जानवर होंगे उनको इसपार आनेके लिए केवल यही एक मार्ग था। परन्तु जंगल बड़ा होनेके कारण भाई साहेबको और अन्य शिकारियोंको कुछ दूर-दूर पर खड़ाकर दिया। फिर भी पीछेसे सुननेमें आया कि कुछ जानवर इधर-उधर कट ही गये। इसके लिये बाध्य होकर मुझे कहना पड़ता है कि इसमें दोष हाँके वालोंका था। यद्यपि उन्हें दोषी नहीं ठहराना चाहिए क्योंकि वे भी इस कार्यसे सर्वथा अनभिज्ञ थे। हांकेके लिए बहुत कुशल शिकारी होना चाहिए कि किस प्रकार जंगलको घेरकर हंकाना है। मैं सतर्क होकर वृक्षकी ओटमें खड़ा हो गया और साथमें जो ग्रामीण शिकारी था वह उसी पेड़पर चढ़कर एक ऊँची डालपर बैठ गया। उसके ऊपर चढ़नेका कारण था, सुननेमें यह आया था कि उस जंगलमें एक चीता भी है।

हाँका आरम्भ हो गया। किसी भी जानवरके आगमनकी प्रतीक्षामें मैं अत्याकांक्षासे खड़ा था। इतनेमें देखता हूँ कि एक शूकर ही उस मार्गसे भागा चला आरहा है। सम्मुख आते हुए इस प्रकारके जानवरों पर निशाना लगाना बहुत कठिन होता है, विशेष कर यदि स्वयं कुछ ऊपर नीचे रहें तो लक्ष और भी दुःसाध्य हो जाता है। इसका भली-भाँति अनुभव एक कुशल शिकारीको ही हो सकता है। इसके विपरीत तिरछी दिशामें अथवा बगली होकर जाते हुए अथवा भागते हुए जानवर

पर सच्चा निशाना लगाना उतना कठिन नहीं है जितना आते हुए पशु पर और वह भी जब कुछ ऊपरसे निशाना लगाना पड़े। अतः परिणाम यह हुआ कि शीघ्रता और कुछ अनभिज्ञताके कारण पहली गोली शूकरके गरदन अथवा पीठ पर न लगकर उसके दुमपर लगी। शूकरने समझा कि किसीने उसे पीछेसे मारा है। अतः वह जोरसे चीत्कार करता मेरी ही ओर वेगसे भागता हुआ आने लगा। परन्तु हल्का दलदल होनेसे उसके पैर थोड़े धँसते जाते थे। अतः उसके पूर्ण प्रयत्न करने पर भी उसकी गतिमें विशेष वेग न आनेसे मुझे कुछ क्षण मिल गये और मैंने तत्काल दूसरी गोली चलाई जो उसके गरदन पर लग गयी। मर्माहत होने पर भी भागनेका वेग होनेके कारण लगभग तीन गज मेरी ही ओर आता-आता मेरे पैरके पास ही पहुँचकर वह गिर पड़ा और तत्क्षण ही उसकी मृत्यु हो गयी।

भाई साहबने आकर पूछा कि क्या मैंने उसे पिस्तौलसे मारा, मैंने कहा नहीं तो और उनके पूछनेका कारण पूछा। उन्होंने कहा कि इतनी जल्दी दूसरी गोली चलनेसे पिस्तौल चलानेका भ्रम हुआ। इसके उपरान्त हमलोगोंके शिकार भ्रमणका अन्त हुआ तथा हमलोग छावनी पर लौटे। यहाँ पर ढाई सौ हंकवोंके मध्य केवल उन दो शूकरोंका मांस प्रसाद रूपमें वितरण हुआ, जो केवल एक-एक दोनेमें अल्प मात्रामें सबको मिल सका। एक बेचारे हंकवे वालेने कहा परन्तु आदरपूर्वक कहा कि यह चटनीकी जगह काम आ जायगा। इतनी देरमें मुझे इनके चर्मका ध्यान आया। तुरन्त उत्तर मिला कि "सूअरोंको चमड़ा ही नहीं होता और हमलोग तो चमड़ा समेत खा गये।"

उस रात्रिमें गाँव वालोंने खूब उत्सव मनाया। मुसहरोंका अपूर्व नृत्य तथा अभिनय हुआ। दूसरे दिन लौटते समय गाँव वालोंने मेरे प्रति बहुत ही आदरपूर्वक हार्दिक स्नेह दर्शाया और अगले साल आनेकी प्रार्थनाकी परन्तु कई कारणवश मेरा जाना फिर न हो पाया।

सिलहटका शूकर

एक बार सन् १९२९ के मार्चमें हमलोगोंका एक बड़ा काफिला पर्यटनार्थ तथा आखेटके लिए निकला जिसमें हमारे चाचाजी, भाई लोग तथा अन्य मित्र गण भी थे। हमने तीन चार मोटरोंमें अपना, नौकरोंका तथा सामानका विभाजन कर "सिलहट"के लिए प्रस्थान किया। यहाँका विस्तृत वर्णन "सिलहटके सांभर" प्रकरण [पृष्ठ ४३] में आ चुका है।

मार्ग अधिकतर कच्चा होनेके कारण उन तीनों, चारों मोटरोंकी दौड़से धूल बहुत उड़ती थी। अतः प्रत्येक मोटरको दो-दो सौ तीन-तीन सौ गजके अन्तरसे चलाना पड़ता था। निर्दिष्ट स्थान दूरस्थ होते हुए भी, मार्ग कच्चा होनेसे मोटरका अतिवेगसे चलाना दुष्कर था। उस दीर्घकालका समय सुखसे व्यतीत करनेके हेतु नाना प्रकारकी कहानियाँ तथा विनोदपूर्ण वार्तालाप करते हुए हमलोग चलते चले जा रहे थे।

इस बीच असावधानीसे रक्खा हुआ कोई बर्तन झन्नसे गिरा। इस पर मुझे महाकवि कालिदास रचित समस्यापूर्तिका एक श्लोक स्मरण आया। घटना इस प्रकार थी, राजा भोजके राज्याभिषेकका समय था। इस अवसर पर महाराज राजोचित वस्त्रालंकारोंसे अलंकृत, उन्नत ललाट पर सुचारु तिलक लगाये हुए महलसे सभामण्डपके लिए प्रस्थान कर रहे थे। सोपान मार्ग अथवा सीढ़ीके ऊपर खड़ी युवतिकी दृष्टि उन सौंदर्य मूर्ति देदीप्यमान महाराजके ऊपर पड़ते ही वह विह्वल हो गयी। इस कारण उसके करकमलोंसे सोनेका कलश छूट गया और उस सीढ़ीके मार्गसे "टटं, टटंटं, टटटं, टटंटम्"का मधुर नाद करता हुआ नीचेकी ओर लुढ़कता हुआ चला। साहित्यानुरागी राजाको वे शब्द अति प्रिय लगे। सभामण्डपमें पहुँच कर विद्वानोंके मध्य उन्होंने इन्हीं शब्दोंकी समस्या रक्खी।

महाराजकी मनोवृत्तिसे सर्वथा अनभिज्ञ होनेके कारण अन्य कवियोंने तो मौन रहनेमें ही अपना कल्याण समझा। परन्तु शृंगार रसके प्रधान महाकवि कालिदासके सभामण्डपमें प्रवेश करते ही जब महाराजने उनके भी सम्मुख यह समस्या रक्खी तो देवी सरस्वतीकी अनुकम्पासे वह घटना कविकी कल्पनामें साकार हो गयी और कविकी वाणी निम्नांकित श्लोकमें मुखरित हो उठी—

राज्याभिषेके मदविह्वलायाः हस्ताच्च्युतो हेमघटो युवत्याः।
सोपानमार्गेषु करोति शब्दं टटं टटंटं टटटं टटंटम्॥

प्रतिभाशाली कविके मुखसे निःसृत यह मधुर श्लोक सुनकर जितना आनन्द उन मेधावी महाराजको आया होगा, हमलोगोंको उससे कुछ कम आनन्द नहीं आया। इस प्रकार कुछ देर तक हम लोग साहित्य, हास्य तथा शृंगार रसका रसास्वादन करते रहे। परन्तु हमारी इस आनन्द-निमग्नताके कारण मोटरका वेग कुछ बढ़ गया तथा आगे वाली मोटरका सामीप्य होते ही उससे उड़ती हुई धूलसे हमलोग आच्छादित हो गये। पीछे मुड़कर जो देखा तो अपनी भी मोटरसे उड़ती हुई धूलसे सारा वायु मण्डल व्याप्त पाया। धूल फाँकनेसे जो कष्ट उत्पन्न हुआ तो विनोदी चाचाजीने तत्काल एक समस्या उपस्थित किया।

"फक् फक् फकाफक् फकतं फकंतम्।"

यह सुनते ही धूल फांकनेका क्लेश हास्यमें परिणत हो गया तथा हम लोग कुछ देर तक समस्या पूर्तिका विफल प्रयास करते रहे। फिर हमने चाचाजीसे ही बहुत अनुनय विनय किया तो उन्होंने शीघ्र ही बड़े सुन्दर ढंगसे उसकी पूर्ति कर दी—

मोटर चली है धरि मार्ग कच्ची नाथौ निवासो रघुनन्दनं च।
धूली उड़ी है बहु वेगसे जो फक् फक् फकाफक् फकतं फकंतम्॥

यह कविता सुनते ही हम लोग प्रसन्नतासे उछल पड़े। हम सभी लोगोंके नाम भी इसमें आ गये। मोटर भागती हुई चली जा रही थी,

जब लगभग साठ मील पार कर चुके थे कि "घंघरौल"का बांध मिला। अब यदि इसके वर्णनके लिए यहाँ रुके तो बहुत विलम्ब हो जायगा। अतएव इतना ही कहकर सन्तोष करना पड़ेगा कि यहाँ पर "घाघर" नदीको बाँधा है। मिर्जापुरमें क्या, प्रान्त भरमें यह सबसे बड़ा बाँध कहा जाता है। पचास मील आगे "रेंड़" जिसका अपभ्रंश "रिहन्द" कर दिया गया है—नदीको बाँधनेकी एक बड़ी योजना संयुक्त प्रान्तकी सरकारने सेंट्रल गवर्मेण्टकी सहायतासे बनायी है। यह बाँध "घंघरौल"के भी बांधसे बड़ा होगा और उसमें बहुत बड़े पैमानेमें विद्युत् उत्पादनकी भी शक्ति होगी। "घंघरौल" बाँधका जलाशय लगभग पचीस वर्ग मीलमें है, और पचीससे पैंतीस फुट तक पनसाल-पानीकी गहराई बनी रहती है। यह भी स्थान बड़ा सुरम्य है। बाँधके एक ओर यह विशाल जलराशि तथा उससे सटी हुई पहाड़ी और उसके दूसरी ओर गहन वनके कारण यहाँ अत्यन्त सुन्दर मनोमुग्धकारी दृश्य उपस्थित हो गया है।

"राबर्ट्सगंज"से जिला बोर्डकी सड़कसे तो "सिलहट" केवल अठारह मील है, परन्तु "घंघरौल" होते हुए नहरकी सड़कसे अट्ठाईस मील हो जाता है। बांध देखनेकी लालसा और नहरकी सड़कें अच्छी होनेके कारण हमलोग इधर ही से चले। इन मार्गोंकी जितनी भी प्रशंसाकी जाय थोड़ी ही होगी। एक तो ये सड़कें बहुत साफ और अच्छी होती हैं, दूसरे इनके एक ओर तो साथ-साथ चलती हुई नहर और दूसरी ओर जंगल अथवा हरे-भरे खेत बहुत ही मनोहर लगते हैं। सिलहट पहुँचनेके दो मील पहलेसे ही दोनों ओर शालके गहन वन हैं। डोंगियाकी अपेक्षा इधरके वृक्ष अधिक बड़े-बड़े हैं और जंगल भी घना है।

सिलहटके बंगलेका वर्णन "सिलहटके सांभर" प्रकरण [पृष्ठ ४३] में आ जानेसे यहाँ नहीं दे रहा हूँ।

वहाँके जमींदार ठाकुर साहेबने बड़े प्रेम और आदरसे हम लोगोंका सम्मान किया। हमें शिकार खेलाने प्रतिदिन वे स्वयं हमारे साथ-साथ चलते थे। उन्होंने बाघके शिकारके निमित्त दो-एक भैंसे भी बँधवा दिये थे कि यदि वे "टूटे" तो बाघ होनेकी सूचना मिल जायगी। हम लोग पाँच-छः दिन वहाँ रहे परन्तु बाघकी सूचना नहीं ही मिली।

जब ठाकुर साहेबने देखा कि हम लोगोंको कोई भी शिकार नहीं मिला तो उन्होंने अपने गाँवसे बहुतसे ग्रामीणोंको एकत्रित कर प्रातःकाल नौ बजेसे ही कई जंगलोंका हांका करवाया। फिर भी सांभरके दो-एक मादीनें व बच्चोंके अतिरिक्त कुछ देख न पड़ा। पहाड़ी स्थान पर चलते-चलते हमें लगभग छः घण्टे हो गये। ग्रीष्म ऋतुकी प्रचण्ड गरमीसे सारा पहाड़ तप रहा था, सबके पानीकी कुप्पियाँ खाली हो चली थीं, कई मीलका चक्कर भी लगा चुके थे, अतः हम लोगोंने अब नहरकी सड़कके लिए सीधा रास्ता पकड़ा जिससे सबसे शीघ्र घर वापस पहुँच सकें। लौटते समय एक जंगलके हांकेमें चाचाजीने लगभग दो सौ गजसे भागते हुए एक सांभरको देखा। झाड़ियोंमें पुनः उतनी दूरीसे गोलीका निशाना लगाना आसान न था। फिर भी दो झाड़ियोंके बीच कुछ अधिक जगह खाली देख उन्होंने शीघ्रतासे राइफलका मुख उसी ओर कर दिया। इतनेमें जानवर जो उस स्थानसे भागता हुआ निकला कि इन्होंने गोली चला दी, वह एक कुशल अनुभवी शिकारी थे इसलिए जानवरको गोली ठीक लगी, परन्तु पहाड़से नीचेकी ओर भागता हुआ आनेसे वह लगभग पचास गज जाकर गिरा।

तीन चार दिन तकके इतने कठिन परिश्रमके उपरान्त एक जानवर भी मिल जानेसे हमें कुछ सन्तोष तो हुआ, परन्तु बंगले लौटते-लौटते गरमी व थकानसे सबका हाल बुरा हो गया। केवल एक चाचाजी ही सबको धैर्य दिलाते रहे।

दूसरे दिन मध्याह्नमें बंगलेके चपरासीने जो शिकारसे भी जानकारी

रखता था—आकर सूचना दी कि सामनेवाली पहाड़ी पर कुछ दूर जानेपर एक छोटेसे कन्दरेमें एक सूअर सोया हुआ है सो जल्दी चलिये। भोजन कर हम लोग तुरत ही उठे थे तथा दिनकी दौड़ने सबको श्रान्त कर दिया था इसलिये किसीने भी जानेकी इच्छा प्रगट न की। परन्तु चाचाजीके आदेशानुसार मैं अपने एक भाई श्री अमरनाथ तथा मित्रके कारिन्दाको लेकर निकल पड़ा।

दो मील चलनेके पश्चात् जब वह स्थान निकट आया तब कारिन्दा महाशय कहने लगे कि उन्हें कुछ खांसी आरही है इसलिए उनका आगे जाना उचित न होगा। अतः मैंने उनको वहीं विश्राम करनेकी अनुमति दे दी। तदुपरान्त वे मुझसे पेड़ पर चढ़ा देनेके लिए आग्रह करने लगे। गंड़ासा लिए हुए वह एक हृष्ट-पुष्ट ग्रामीण पुरुष और फिर हम लोगोंके साथ, तब भी उनका यह आग्रह देखकर मुझे मुस्कुराहट आ ही गयी।

उनके इस प्रकार भयभीय होने पर मुझे ऐसी ही एक पुरानी घटना याद आयी जब हम लोग चाचाजीके साथ "बनपुरवा" गाँवमें शिकार खेलने गये थे। यह गाँव काशीविश्वविद्यालयसे लगभग पन्द्रह मील दक्षिणकी ओर है। यह घटना विद्यालयके शिलान्यासके भी पूर्वकी है। उस गाँवके आस-पासके जंगलोंमें तब तक हरिन, घोड़रोज और सूअरके ही शिकार होते थे। वहाँ जब एक टुकड़े जंगलका हांका हो रहा था कि एकाएक हंकवेवाले चिल्ला उठे कि "ओहरे सूअर जात हो।" इतना सुनना था कि एक साथी एकदम गिड़गिड़ाकर प्रार्थना करने लगे कि "भैयाजी, जल्दीसे पेड़ पर चढ़ा दीजिये।" जब मैंने कहा कि भई, तुम्हारे हाथमें तो बन्दूक है तुम्हें किस बातका डर है, प्रत्युत् मैं अशस्त्र हूँ। पर वे क्यों कोई बात सुनते ? उनकी हालत तो उस समय कुछ समझने लायक ही न थी। समीपमें केवल बबूलका पेड़ था जिसपर वे चढ़नेका प्रयत्न कर रहे थे। विवश होकर मैंने उसी पर उनको चढ़ा दिया और तब कहीं उनका शोरगुल शान्त पड़ा। इस पर हमारे छोटे

भाई डाक्टर श्रीरंजनजीने एक कविता बनायी थी जिसकी आधी लाइन तो यह है—

"लखिकै मिर्जाजी बबूल चढ़े" इत्यादि।

कारिन्दा महोदयको पेड़ पर चढ़ा दिया तथा उनको वहीं एक आदमीके साथ छोड़कर हमलोग आगे बढ़े। थोड़ी ही दूर आगे जानेपर पहाड़के चोटीका अन्त हुआ, और जहाँसे उसके दूसरी ओर ढाल उतरती थी उसीके दो गज नीचे शिकारीने एक छोटेसे कन्दरेमें जानवरके सोये रहनेका इशारा किया।

हम लोग बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़े और झुककर देखा तो शूकरके केवल पैर देख पड़े जो गुफाके बाहर थे। हमने बहुत इधर-उधर देखा पर उसके शरीरका कोई भाग कहींसे न देख पड़ा कि गोली चलायी जा सके। अब केवल एक ही उपाय रह गया कि नीचे उतर कर कन्दरेके मुखपर जाकर जानवरसे अति निकट होकर मुठभेड़ होते ही उसपर गोली चलायी जाय। पर ऐसा कार्य खतरेसे खाली नहीं। हम दोनों भाई परस्पर एक दूसरेकी ओर देख मुस्कुराये।

भाईको ऊपर खड़ा रहनेका इशारा कर मैं धीरेसे उतरा और कन्धेसे राइफल लगाये हुए कन्दराको ओर बढ़ा। मालूम पड़ता है कि जानवरको कदाचित् मेरी आहट लग गयी, क्योंकि जब मैं सामने पहुँचा वह उसी समय पैर समेट कर बाहर निकलनेके प्रयत्नमें था। मेरा सामना होते ही उसके एक चीत्कारके साथ हमला करते ही मैंने फायर किया और स्वयं कूद कर ऊपर चढ़नेका प्रयत्न किया। इतनेमें ऊपरसे भाई अमरनाथजीने भी गोली चलायी। केवल एक गजकी ही दूरीसे दोनोंकी भारी गोली लगनेसे जानवर वहीं लेट गया।

ऊपरसे यदि इनकी दूसरी गोली न चलती तो कदाचित् उतने समीपसे शूकरके वारसे मेरा बचना कठिन होता और उस ढालुआँ भूमिपर जानवरसे घायल होकर नीचे ढुलक कर मैं गिर जाता, जिससे

गम्भीर चोट अवश्य लगती। किन्तु भाईके हस्तलाघवसे तुरत गोली चला देनेके कारण मैं बाल-बाल बच गया, और उस गिरे हुए भारी जानवरको एक बाँसमें बाँध कर दो आदमियोंके कन्धेपर उठवा कर हम प्रसन्न मनसे लौटे तथा रास्तेमें उन महोदयको जो अभी तक पेड़पर ही बैठे थे, उन्हें उसपरसे उतार कर बँगले पहुँचे।

जानवरको देख और रास्तेकी कहानी सुन पार्टीके लोगोंको बड़ा आनन्द आया और उन महोदयके वृक्षारोहण दास्तानपर उनकी खूब चुटकियाँ ली गयीं।

हरैयाका शूकर

इस परिच्छेदके आरम्भमें लिख आया हूँ कि मर्द तीन होते हैं— "सर्प, बनैला सूअर और पुरुष"। एक सूअरने इसको किस प्रकार चरितार्थ किया प्रस्तुत प्रकरणमें उसका वर्णन करता हूँ।

एक बार सन् १९३५ के दिसम्बरकी छुट्टियोंमें अपने छोटे भाई डाक्टर श्रीरंजनजीके साथ हम दोनों सपत्नीक डोंगियाके जंगलोंमें घूमने निकले तथा डोंगियाको अपना केन्द्र बना कर मोटरपर कई कोसोंका चक्कर लगाकर और कई प्रकारके जानवरोंको मारकर बँगलेपर लौट आते थे।

एक दिन हमलोग अपने एक मित्रके गाँव "हरैया" गये जो डोंगियासे लगभग बारह-तेरह मीलपर है। वहाँका रास्ता कच्चा और जंगलोंके बीचसे है। कभी-कभी मार्गमें जंगली जानवर भी देख पड़ जाते हैं। हरैयाके जंगलोंमें सांभर, सूअर, चीतल आदि अनेक जानवर हैं। प्रायः तेंदुये भी देख पड़ जाते हैं। कभी-कभी शेर भी चले आते हैं क्योंकि महाराज बनारसके "नौगढ़" जंगलसे इनका जंगल सटा हुआ है।

गाँवसे हमलोगोंने तीन आदमियोंको लिया और जंगलोंमें घूमने निकल पड़े। कई घण्टों घूमनेपर भी कोई जानवर देख न पड़ा। वहाँ

एक छोटी-सी नदी—चन्द्रप्रभा बहती है, प्रायः उसमें तीन फुटसे छः फुट तकके मगर होते हैं। उसमें एक छोटा-सा मगर देख भी पड़ा पर हमलोगोंको दूरसे ही देखकर वह पानीमें कूद गया।

हमलोग मीलों चक्कर काट कर थक चुके थे अतः अब लौटनेका बिचार किया। श्रीरंजनजीने प्रस्ताव किया कि सीधे बापस जानेके बदले, बगलमें जो एक छोटा-सा टुकड़ा जंगलका है, उसको स्वयं छानते हुए बाहर निकलें, ताकि उसमें यदि कोई जानवर छिपा हो तो बाहर निकल आयेगा।

उस टुकड़ेके एक किनारेपर मैं और दूसरी छोरपर वह तथा बीचमें उन ग्रामीणोंको थोड़े-थोड़े फासलेपर करके धीरे-धीरे हमलोग बढ़ने लगे। अर्थात् एक प्रकारसे उस टुकड़ेको हंकाना शुरू किया। हमलोग तो चुपचाप बढ़ते जाते थे और बीचवाले ग्रामीण धीरे-धीरे बोलते हुए आगे बढ़ते चले आ रहे थे।

हमलोग करीब-करीब सारा टुकड़ा पार कर चुके पर किसी जानवरकी न तो आहट ही मिली और न कोई देख ही पड़ा। पर जैसे ही जंगलके बाहर निकले कि सहसा मेरी दृष्टि एक सूअरपर पड़ी जो कि उसी जंगलसे निकलकर घासोंके बीच होता हुआ दूसरे जंगलकी ओर चला जा रहा था।

शूकर मुझसे केवल पचास-साठ गजपर रहा होगा और दाहिने-बायें निडर भावसे देखता हुआ मस्त चालसे झूमता चला जा रहा था। जानवर बहुत बड़ा और वही "अकेलवा" था। जैसे ही उसकी दृष्टि मेरे ऊपर पड़ी कि वह ठिठका और मेरी ओर घूमा। तबतक मैंने भी जल्दीसे राइफल कन्धेसे लगाकर गोली चला दी।

गोली लगते ही वह एक बार तो वहीं गिर गया पर तुरत ही उठा और सीधे मेरी ओर दौड़ा। स्मरण रहे कि आरम्भमें वह दूसरी ओर जा रहा था पर मुझे देखते ही मेरी ओर घूम पड़ा।

इस समय तक वह दोनों गाँववाले मेरे निकट आ चुके थे। पर तीसरा व्यक्ति तथा श्रीरञ्जनजी जंगलके दूसरे छोरपर होनेसे मुझसे कुछ दूर और मेरी दृष्टिसे भी ओझल थे। ये दोनों ग्रामीण, सूअरको अपनी ओर आते देख झट इधर-उधर भाग खड़े हुए और पृथक्-पृथक् पेड़ोंपर चढ़ गये।

जानवरके गिर जानेसे मैं कुछ असावधान-सा हो गया था। मुझे न तो पेड़पर ही चढ़नेका अभ्यास है और न भागनेकी ही आदत है। अतः वहीं खड़े होकर दूसरी गोली शीघ्र चलायी। यह भी गोली ठीक लगी और जानवर पुनः वहीं लेट गया। पर तुरत ही सम्भलकर उठा और पुनः मेरी ओर आने लगा। मैंने नालमें तीसरी गोली चढ़ाकर पुनः जल्दीसे मारा क्योंकि अब वह बहुत निकट आ चुका था। अति निकट होनेके कारण उस भारी गोलीके धक्केने उसे एकदम उलट दिया। मैंने समझा कि चलो अब उठ न सकेगा। परन्तु वह बलशाली, साहसी शूकर थोड़ी देर बाद चेतना आनेपर पुनः सम्भलकर उठा। उसके बल और साहसकी जितनी भी प्रशंसा करूँ थोड़ी है। यद्यपि उसकी सारी शक्ति क्षीण हो चुकी थी और उसकी चालमें अब न वेग था न बल था, तथापि अभी भी दृढ़ता अवश्य थी। लाल-लाल नेत्र किये हुए मेरी ओर देखता हुआ वह दृढ़ संकल्प धीरे-धीरे बढ़ने लगा। कदाचित् उसके मनमें यह ध्यान रहा हो कि एक बार निकट पहुँचकर अपने पैनें दांतोंसे मेरा संहार कर देवे।

मेरे पास अब केवल एक गोली शेष रह गयी थी। मैं भागना भी नहीं चाहता था और न उसको उस अवस्थामें एक क्षणके लिए भी छोड़ना चाहता था। बड़े असमंजसमें पड़ा कि क्या करूँ, इतनेमें श्रीरञ्जनजीकी आवाज दूरसे आयी कि मामला क्या है। उनको मेरे निशानेपर कुछ इतना दृढ़-विश्वास है कि जानवरपर मेरी गोली चलनेपर न केवल उसे लगेगी ही पर गोली लगते ही वह मृत भी हो जायगा।

अत: उस समय मेरी तीन-तीन गोलीका चलना सुन वह बड़े आश्चर्यमें पड़ गये कि कहीं मेरे सामने दो तीन शेर अथवा तेंदुये तो नहीं आ गये। अतएव वह वहींसे उच्च स्वरमें मैं अभी आया "कहते हुए मेरी ओर दौड़ पड़े। मैंने सान्त्वनाके ध्यानसे तुरन्त उत्तर दिया कि घबड़ानेकी कोई बात नहीं केवल एक बड़ा-सा सूअर है जो अभी तक मरा नहीं है और मेरे पास केवल एक गोली रह गयी है। उन्होंने कहा कि मैं अभी पहुँचा"।

तब तक सूअर मुझसे केवल पांच पद रह गया था, मैंने भी उसे अब और पास आने दिया क्योंकि उसकी चालमें कोई वेग तो था नहीं। मैंने विचारा कि अबकी उसके मुँहपर ही गोली मारूँगा कि जिसमें उसके बड़े-बड़े खांग-दांत—टूट जायँ और उसमें पुन: और प्रहार तथा घाव करनेकी शक्ति ही न रह जाय। उधर श्रीरंजनजी दौड़ते चले आ रहे थे फिर भी मुझसे काफी दूर थे। अब जानवर मुझसे केवल तीन पग रह गया था। मैंने राइफलकी नाल सीधे उसकी नाक पर कर गोली चला दी। इस अन्तिम गोलीने उसका दाँत भी चूर कर दिया, तथा उसे वहीं गिरा कर उसकी इहलीला समाप्त कर दी।

यद्यपि जाड़ेका दिन था। फिर भी मेरे माथेपर पसीनेकी बूँदें झलक आयीं। इतनेमें श्रीरंजनजी भी पास आ गये, और वे दोनों ग्रामीण भी जानवरको मृत देखकर अपने-अपने पेड़ोंसे उतर आये। जब मैंने उन लोगोंसे भर्त्सना देते हुए पूछा कि हाथमें कुल्हाड़ी रहते हुए भी तुम दोनों मुझे छोड़कर भागे क्यों तो वे कुछ उत्तर न दे सर लटका कर चुप ही रह गये।

श्रीरंजनजीने पूछा कि "भई बात क्या थी कि तुम्हें इतनी गोली चलानी पड़ी"। मैंने सारा वृत्तान्त कह सुनाया। वे भी सुन कर स्तम्भित रह गये कि इतनी बड़ी गोलियोंकी चोट खाकर भी वह साहसो निर्भीक पशु अन्त तक आक्रमणपर उद्यत ही रहा।

घड़ियाल और मगर

দাম দুই টাকা

घड़ियाल और मगर

परिचय और अन्तर

बहुत सम्भव है हमारे प्रिय पाठकगण दीर्घ कालसे वन-भ्रमण करते-करते किंचित् क्लान्त हो गये हों, अतः आइये अब आपको कुछ नदियोंकी सैर कराऊँ जिससे नदी तटके शीतल, मन्द, सुखद झकोरोंसे तथा जल-जन्तुओंसे परिचय प्राप्तकर आपकी श्रान्ति प्रसन्नतामें परिणत हो जावे।

नदीके बड़े जन्तु मगर और घड़ियाल हैं। ये हमारी गंगा माताके वाहन कहे जाते हैं। यद्यपि इन दोनोंके रूप, आकार, प्रकृति तथा आहार आदिमें बहुत भेद और विशेष अन्तर है तथापि साधारण मनुष्योंकी कौन कहे अनेकों शिकारी भी अनभिज्ञताके कारण भ्रमवश दोनोंको एक ही नामसे सम्बोधित करते हैं। विस्तारसे दिये हुए इनके भिन्न-भिन्न लक्षणोंको ध्यानपूर्वक पढ़नेसे इन दोनोंमें अन्तरका स्वयं भलीभाँति बोध हो जायगा।

जाति :

इनकी गणना "सरट" अथवा "पल्लिका"की जातिमें की जाती है। अंग्रेजीमें इनको रेप्टाइल (Reptiles) की जाति कहा जाता है। परन्तु ये "उरग" अथवा सर्प जातिसे भिन्न हैं। क्योंकि इनको चार पैर होते हैं और नेत्रोंके ऊपर पलक होते हैं, जो झपते भी हैं। सर्पोंको न तो पग होते हैं और न पलकें ही होती हैं। इनकी आँखें अपलक होनेसे उनमें एक विचित्र प्रकारका आकर्षण होता है, जिससे इनसे आँखें चार होते ही समस्त जीव जन्तु, विशेष कर चूहे और चिड़िये जो इनके आहार हैं, जड़ तथा स्तम्भित हो जाते हैं।

अण्डज :

मगर जातिकी गणना "अण्डज"में है। इनको एक साथ कई अण्डे पैदा होते हैं। परन्तु अपने उस अण्डोंको ये सेते नहीं। किनारेके समीप ही किंतु पानीसे कुछ दूर हटकर ऊपरी स्थलोंमें जहाँ पानी आ जानेका भय न हो, वहाँ गड्ढे बनाकर "मगरी" अण्डोंको रखकर ऊपरसे खर-पात्तोंसे भलीभाँति ढक देती है कि सहसा किसीको पता न चले। तदनन्तर इनके रक्षार्थ निकट ही रहती है। समय पाकर बालू और धूपकी गरमीसे तैयार होकर अण्डोंको फोड़कर बच्चे बाहर निकल आते हैं और सीधे पानीकी ओर जाते हैं। तब मगरी उन सबको लेकर पानीमें चली आती है और यथाशक्ति आवश्यकतानुसार समस्त उपयुक्त शिक्षा देती है।

संस्कृत नाम :

संस्कृत कोशमें भी मगर और घड़ियालोंके पृथक्-पृथक् नाम नहीं दिये हैं, जिससे इनके पार्थक्यका ज्ञान हो सके। एक ही स्थान पर सब पर्यायवाची शब्द दिये हैं। जैसे मकर, नक्र, कुम्भीर, कुम्भिन्, कुम्भीलक, ग्राह और अवहार। परन्तु इनसे यह स्पष्ट नहीं होता कि अमुक शब्द मगरका द्योतक है और अमुक घड़ियालका।

"शार्क" मछली :

इसके अतिरिक्त शब्दकोशमें "अवहार"का अर्थ केवल शार्क (Shark) मछली बताया है, जो आकारमें मगरोंके बराबर ही होती है। उसके मुखमें पैने-पैने दांत होते हैं। इनको "दरियाई-शेर" भी कहते हैं। यह समुद्रमें ही होती है और नरभक्षी भी होती है। शब्द कोशमें "शार्क" मछलीके लिए अवहारके साथ-साथ ग्राह, नक्र और मकर शब्द भी दिये हैं जो मेरी समझमें सर्वथा अशुद्ध है और जिससे और भी भ्रान्ति उत्पन्न हो जाती है। मेरे मतमें "शार्क" मछलीके लिए "अवहार" शब्दका ही प्रयोग करना चाहिए।

संस्कृत और हिन्दीसे तुलना : मगर :

"मकर" शब्दसे स्पष्ट प्रतीत होता है कि हिन्दीका "मगर" शब्द इसीका अपभ्रंश है।

"नक्र" :

इसके विपरीत "नक्र" शब्द दोनों हीके लिए प्रयोग किया गया है। गोरखपुर जिलेमें जहाँ मैंने केवल पन्द्रह-बीस "मगर" ही मारे हैं, कारण वहाँकी नदियोंमें प्रायः "मगर" ही होते हैं, वहाँ इन मगरोंको "नाक" शब्दसे सम्बोधित करते हैं। परन्तु बिहार प्रान्तमें, जैसे भागलपुर, मुंगेर आदि जिलोंमें, जहाँ मैंने सैकड़ोंकी संख्यामें दोनोंका शिकार किया है, वहाँ अधिकतर लोग घड़ियालको "नाकर" और मगरको "बोंचा" कहते हैं। कुछ अनुभवी शिकारियों तथा विद्वानोंका कथन है कि "नक्र" मगरको ही कहते हैं।

"कुम्भीर" आदि :

बंगालके "सुन्दर बन"में जहाँ अधिकांश मगर ही पाये जाते हैं, वहाँके लोग इनको "कुम्भीर" कहते हैं, जो संस्कृतके "कुम्भीर" शब्दका तत्सम शब्द है। परन्तु "कुम्भीर", "कुम्भिना", अथवा "कुम्भीलक" आदि सब घड़ियालके ही लिए प्रयोग करना चाहिए। क्योंकि "कुम्भी"का अर्थ एक छोटा घट है। जिसकी विशेषता "कुम्भ" वह "कुम्भीर" "कुम्भीलक" आदि कहलाता है।

घट अथवा तुमड़ी :

बड़े और पुराने नर घड़ियालके नाकके अगले भागके ऊपर एक "तूमड़ी" ऐसी फूलन होती है मानों वहाँ एक छोटा-सा घट अथवा लोटा रक्खा हो। यही कारण है जिससे इनको "नाकर" अथवा "कुम्भीर" आदि शब्दोंसे सम्बोधित करते हैं। परन्तु मगरके और मादा घड़ियालके नाक पर चाहे वे कितने ही बड़े क्यों न हों यह

तुमड़ो नहीं होती। इस तुमड़ीसे एक प्रकारकी वंशी ऐसी ध्वनि निकलती है।

ग्राह :

कुछ विद्वानोंका कथन है कि "ग्राह" शब्द केवल घड़ियालके ही लिये प्रयोग करना चाहिए, परन्तु कोई-कोई विज्ञ इसे मगरका पर्याय-वाची बताते हैं। मेरे विचारसे "ग्राह" शब्द मगरके ही लिए प्रयोग करना चाहिए, क्योंकि मगरका मुख बहुत बड़ा, चौड़ा तथा शक्ति-शाली होता है। यह बड़ेसे बड़े जानवरोंको पकड़ लेता है जो घड़ियाल नहीं कर सकता।

अपने पुराणोंमें गज और ग्राहकी लड़ाई प्रसिद्ध है। वहाँ यह नाटे और चौड़े ही मुख वाला मगर है जो हाथीका पैर पकड़े हुए है। "ग्राह" शब्दका अर्थ पकड़ना भी है।

अंग्रेजी नाम :

अंग्रेजीमें इनके तीन मुख्य प्रकार बताये हैं, इन तीनोंके लिए तीन पृथक्-पृथक् नाम दिये हैं। घड़ियालको (Gavial) गेवियल तथा (Garial) गेरियल अथवा गरिआल भी कहते हैं, जो हिन्दीके घड़ियाल शब्दसे लिया गया है। अधिकतर गंगामें मिलनेके कारण इनको Gangetic Gavial अर्थात् गंगाके घड़ियाल भी कहते हैं, यद्यपि ये गण्डक व सोन आदि नदियोंमें भी बहुतायतसे पाये जाते हैं। कोई-कोई विशेषज्ञ इन घड़ियालोंको भी (Crocodile) क्रोकोडाइल कह देते हैं, परन्तु यह भ्रामक होगा। यह शब्द केवल मगरके ही लिए प्रयोग करना चाहिए।

मगर दो प्रकारके होते हैं। एकको (Crocodile) क्रोकोडाइल और दूसरेको (Alligator) एलिगेटर कहते हैं। इन दोनोंमें बहुत सूक्ष्म अन्तर है जो नीचे दे रहा हूँ। एक तीसरे प्रकारका मगर जो

बिलकुल "एलिगेटर" से मिलता है उसे Cayman अथवा Caiman=कैमन कहते हैं। ये दक्षिण अमेरिकाके गरम प्रदेशमें पाये जाते हैं।

दोनों मगरोंका बाह्य भेद :

"क्रोकोडाइल" और "एलिगेटर" मगरोंमें मुख्य अन्तर उनके नीचेके "चौथे" बड़े दाँतके रखनेके स्थानमें है, जो सहसा दृष्टिगोचर नहीं होता।

"एलिगेटर" के दोनों ओरके ये लम्बे दाँत मुख बन्द होनेपर ऊपरके मसूड़ों में बने हुए दोनों ओरके दो छिद्रोंमें बैठ जाते हैं और फिर मुख बन्द होनेपर देख नहीं पड़ते।

इसके विपरीत "क्रोकोडाइल" के इन दाँतोंके लिए ऊपरके *ओष्ठों* में घाट कटा रहता है, जिससे मुख बन्द होनेपर भी ये दोनों ओरके दांत बाहर देख पड़ते हैं।

इन दोनोंके माथेकी बनावटमें भी थोड़ा अन्तर है। "एलिगेटर" का माथा "क्रोकोडाइल" के माथेसे कुछ पतला और छोटा होता है परन्तु उसकी नाक अधिक चौड़ी होती है।

दोनों ही का माथा, नाटा व मोटा पल्लिका अथवा छिपकलीके सदृश होता है।

उपर्युक्त विश्लेषणसे विदित हो जायगा कि इनमें कितना सूक्ष्म अन्तर है, तथा हिन्दीमें दोनों ही के लिए "मगर" ही शब्दका प्रयोग करते हैं।

विशेषज्ञोंका कथन है कि "एलिगेटर" अधिकतर अमेरिका ही में मिलते हैं, और "क्रोकोडाइल" अफ्रिकाकी "नाइल" नदीमें, भारतवर्ष-की कतिपय नदियोंमें तथा चीन, बर्मा और मलाया आदि स्थानोंमें भी पाये जाते हैं। ये सब उष्ण कटिबन्धके जानवर हैं अतएव ध्रुव प्रदेशोंमें

नहीं होते। मुझे ये दोनों प्रकारके मगर भारतवर्षमें मिले हैं परन्तु यहाँ "क्रोकोडाइल" की ही संख्या अधिक है।

घड़ियाल और मगरका मुख्य अन्तर :

घड़ियाल व मगरके माथे व मुखके ही आकार व बनावटमें विशेष अन्तर है जिसे देखते ही दोनोंका भेद स्पष्ट हो जाता है।

घड़ियालका मुख :

घड़ियालका मुख पतला और बहुत लम्बा होता है। लगभग छः इञ्च चौड़ा और तीन फुट लम्बा।

मगरका मुख :

मगरका मुख अपेक्षाकृत बहुत कम लम्बा परन्तु अत्यधिक चौड़ा होता है। इसका मुख लगभग डेढ़ फुट लम्बा और एक फुटसे भी अधिक चौड़ा होता है। किसी-किसी बड़े मगरका माथा एक कलभ "हाथी" के बच्चे माथेसे मिलता है। दोनोंके शेष सब अंग एक समान होते हैं।

१. घड़ियाल

लम्बाई :

मगरकी अपेक्षा घड़ियाल अधिक लम्बा होता है। साधारणतया इनकी लम्बाई चौदह फुटसे अठारह फुट तककी होती है। परन्तु २२से २४ फुट तकके भी अनेकों मारे गये हैं। मुझे केवल एक बार लगभग ३० फुटका मिला था फिर उतना बड़ा कभी देख नहीं पड़ा।

वृद्धि :

विशेषज्ञोंका कथन है कि यदि इन जानवरोंको शिशु अवस्थासे ही उपयुक्त तथा पर्याप्त मात्रामें भोजन मिलता रहे तो ये शीघ्र बढ़ेंगे भी और सामान्यसे अधिक लम्बे और दीर्घकाय हो जायेंगे, किन्तु यदि



घड़ियाल जिसकी तुम्बी जल में है

जीवनके आलम्बन मात्रके ही लिये केवल अल्प मात्रामें आहार मिलता रहे तो वर्षों तक इनका शरीर नहीं बढ़ेगा। यह नियम अन्य जन्तुओंमें नहीं है।

उचित भोजनके अभावमें मगरोंकी शारीरिक वृद्धिमें अवरोध होनेका प्रत्यक्ष प्रमाण तो मैंने स्वयं पाया है कि किस प्रकार वाराणसीके उस समयके "क्वींस कॉलेज" स्थित कूपमें एक मगरके निरन्तर तीस वर्षोंतक रहते हुए भी उसका आकार लगभग चार फुटका चार फुट ही बना रहा।

आयु :

इन जानवरोंकी आयु बड़ी लम्बी बतायी जाती है। वर्षोंके अन्वेषणसे प्राप्त ज्ञानसे यह सिद्ध हुआ कि इनकी आयु लगभग तीन सौ वर्षकी होती है। इनसे भी अधिक आयु कछुओंकी कही जाती है। अपने कलकत्तेके (Zoo) जू अथवा चिड़ियाघरमें अभी भी जीवित विद्यमान एक कछुआ है जिसकी आयु लगभग तीन सौ वर्षकी बताते हैं। विशेषज्ञोंका कथन है कि कछुये छः-छः महीनेके लिए मिट्टीके अन्दर परिशयन कर जाते हैं। गाढ़ निद्रासे भी परे एक प्रकारसे तुरीयावस्थाके सदृश हो जाते हैं जिसे अंग्रेजीमें (Hibernation) हाइबर्नेशन कहते हैं।

आहार तथा विधि :

घड़ियालोंका आहार उनकी मुखाकृतिके कारण मुख्यतः मछलियाँ ही हैं। एक बार मैंने इनको विचित्र ढंगसे मछली पकड़ते और आहार करते देखा।

एक बड़ा घड़ियाल नदीके बीच लकड़ीके कुन्देकी भाँति पड़ा हुआ था। इतनेमें लगभग डेढ़ फुट लम्बी एक बड़ी मछली उसके पार्श्वसे

तैरती हुई निकली। उसको देखते ही उसने विद्युत् गतिसे सहसा उसको पकड़ लिया। तदुपरान्त अपनी गरदनको पानीके ऊपर उठाकर मछलीको आकाशकी ओर उछाल दिया। फिर ऊपरसे मुँहके बल गिरती हुई उस मछलीको अपने खुले हुए मुँहमें ले लिया और सीधे निगल लिया। कभी-कभी बहुत बड़ी मछलियाँ मिलनेसे अथवा उसे उछालते समय उसके बेड़े बल गिरनेसे और इनका मुँह पतला होनेके कारण ये उसे समूची निगल नहीं पाते। ऐसी अवस्थामें वह मछली इनके मुँहमें आते ही तीन टुकड़ोंमें कट जाती है, बीचवाला हिस्सा तो सीधे इनके मुँहमें चला जाता है, शेष दोनोंको कभी-कभी पुनः शीघ्र पकड़कर निगल जाता है अथवा छोड़ भी देता है।

श्मशानके घड़ियाल :

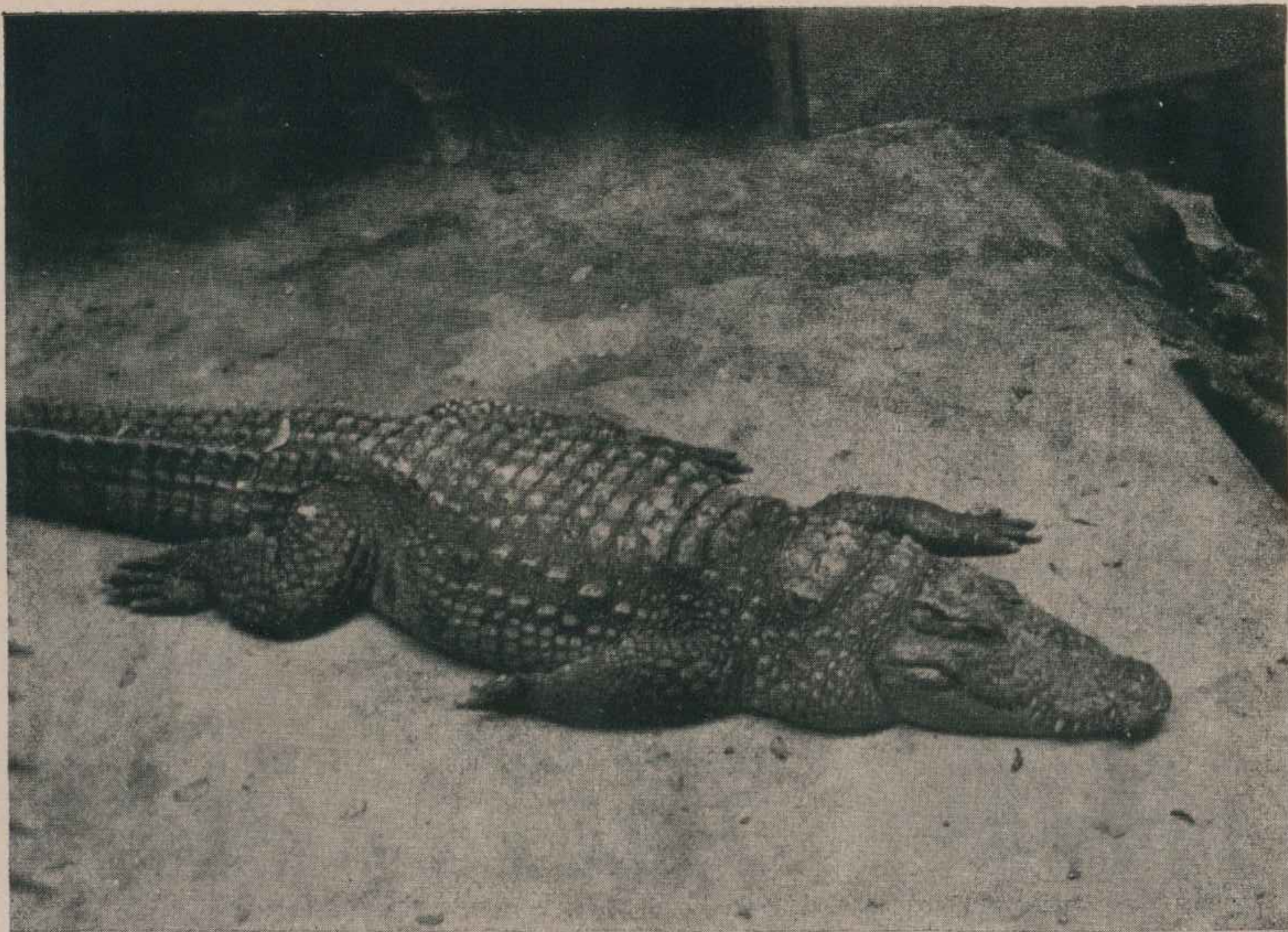
कहीं-कहीं विशेषकर श्मशान घाटोंके घड़ियाल, मनुष्योंपर भी हमला करते देखे गये हैं। कारण उन स्थानोंके जानवरोंको अधजले शवोंको खानेका अभ्यास हो जाता है। ऐसी अवस्थामें वहाँके घड़ियाल अति क्रूर, बड़े चालाक और भयंकर भी हो जाते हैं। वहाँके घड़ियालोंके भी पेटसे कांसेकी चूड़ियाँ मिली हैं जो प्रायः ग्रामीण बालायें पहनती हैं।

प्राप्ति स्थान :

घड़ियाल विशेषकर गंगामें बहुतायतसे पाये जाते हैं, यद्यपि गण्डक और सोन नदियोंमें भी ये बहुत होते हैं। कोसी नदीमें भी बहुत हैं। इस नदीके मगरोंके साथ-साथ बहुतेरे घड़ियाल भी किनारोंपर पड़े धूप खाते हुए मैंने देखे तथा वहाँ मारे भी हैं। पर इनकी संख्या मगरोंकी संख्यासे कम है।

चर्म :

घड़ियालका चर्म मगरकी अपेक्षा बहुत अच्छा होता है।



मगर

२. मगर

(क) विशेषताएँ और स्थितियाँ

मगरका आकार :

मगरका समस्त आकार पूर्णतया पल्लि अथवा छिपकली (बिस्तुइया) से मिलता-जुलता है। अन्तर केवल इतना ही है कि उससे कई गुना अधिक बड़े होनेके कारण इसके नाक, मुँह माथा आदि सभी अंग बहुत बड़े होते हैं, तथा इनका चर्म भी बहुत मोटा होता है।

लम्बाई :

घड़ियालकी अपेक्षा मगरकी लम्बाई कम होती है। एक कारण तो इसके मुँहकी लम्बाईका कम होना है, जिससे लम्बाईमें सीधे डेढ़ फुटकी कमी हो जाती है। मगर साधारणतया दस फुटसे चौदह फुट तकके मिलते हैं। पर कोई-कोई बहुत पुराने मगर अठारह फुट तकके भी पाये गये हैं और इन्हींका माथा हाथीके माथेके सदृश होता है।

सुन्दर वनके मगर :

बंगालके सुन्दर वनके मगर बीस-बाईस फुटतकके होते हैं, साथ ही बहुत मोटे और ऊँचे भी होते हैं। सम्भव है उन्हें वहाँ अच्छा भोजन पर्याप्त मात्रामें मिलता हो। यहाँके मगर खारे पानीमें भी रह जाते हैं, क्योंकि यहाँ गंगाका मुहाना सागरमें समीप ही मिलता है, अतएव गंगाका पानी दूर तक खारा रहता है। परन्तु आवश्यकतानुसार इन्हें मीठे पानीमें भी आना पड़ता है। इनकी जाति मीठे ही पानीमें रहनेकी है, अतः ये समुद्रमें कम पाये जाते हैं।

नाक, आँख, कान :

इन सब जानवरोंके नाक, आंख और कानकी बनावट ऐसी है कि इनकी ये तीनों इन्द्रियाँ तैरते समय पानीकी सतहसे ऊपरही रहती हैं तथा शेष सब अंग पानीके नीचे छिपे रहते हैं।

नाक :

नाक एक गद्देके ऊपर होनेसे, उसमें पानी न जानेसे इन्हें सांस लेनेमें कोई बाधा नहीं होती। मछलीकी तरह ये पानीके अन्दर सांस नहीं ले सकते, वरन् ये कई घण्टे सांस खींचे पानीके अन्दर जमीन थामकर बैठे रह सकते हैं, परन्तु सांस लेनेके लिए इन्हें ऊपर अवश्य आना पड़ता है।

आँख :

इनकी आँखें समस्त अंगोंसे ऊपर होती है, अतः ये चारों ओर आसानीसे देख सकते हैं, साथही इनकी दृष्टि बहुत तीक्ष्ण होनेसे ये दूर तक भी देख सकते हैं।

कान :

इनके कान भी ऊपर होनेसे ये दूरतकके शब्द भी सुन लेते हैं। इनके शीघ्र सुननेका एक यह भी कारण हो सकता है कि जलके ऊपर ध्वनि तीव्रगामी हो जाती है तथा बहुत दूरतक भी सुनाई दे सकती है। वास्तवमें इनकी श्रवणेन्द्रिय कुछ नीचे ही होती है, पर सुननेके लिए लगभग एक इंचका छिद्र आँखके कुछ पीछे और बगलमें होता है। इस छिद्रके ऊपरसे एक मोटा चमड़ा लटकता रहता है, जो आवश्यकतानुसार छिद्रको बन्द कर देता है जिससे उसमें पानी न जा सके।

डुब्बी मारना :

मगरके डुब्बी मारनेका प्रकार बड़ा सरल है। पहले ये नाक और कान बन्द कर लेते हें और सब सांस निकाल देते हैं, तदुपरान्त बिना कोई शब्दके बड़े धीरेसे पानीके नीचे डूब जाते हैं।

दांत :

सब अंगोंसे अधिक भयावह इनके दांत होते हैं। इनकी बनावट ऐसी नहीं होती कि एकके ऊपर एक बैठे। अतः इनसे चबाने अथवा

चीथने का भी काम नहीं लिया जा सकता। इन दांतोंसे ये केवल पकड़नेका ही काम लेते हैं। ये आहार चबाते ही नहीं अपितु सीधे निगल जाते हैं।

जिह्वा :

साथ ही एक बड़े मार्केकी बात है कि इन मगरोंको जिह्वा भी नहीं होती। अतएव इन्हें मांस निगलनेमें बड़ी आसानी हो जाती है।

पैर :

इन जानवरोंके पिछले पैरकी अंगुलियां बत्तकके पैरोंके सदृश झिल्लियोंसे मिली रहती हैं। इससे इनको वेगसे तैरनेमें अधिक सहायता मिलती है।

दुम :

इनकी दुम इनके समस्त अंगोंसे अधिक लम्बी और काफी मोटी होती है। इनके चौड़े दुमके दोनों ओर ऊपर आराके दांतोंके ऐसे चमड़े उठे रहते हैं। इनकी दुममें बल भी बहुत होता हैं। इसके एक हो झटकेसे आदमियोंके पैरकी हड्डी टूट जाती है। इसकी सहायतासे वे धीरे-धीरे भी अथवा बड़ी तेजीके साथ भी तैर सकते हैं।

मगरोंके मांस खानेवालोंका कहना है कि इनके दुमके जड़की मांसपेशीमें बहुत स्वाद होता है और इसे लोग बड़े चावसे खाते हैं, अन्यथा इनके मांसमें तो दुर्गन्ध बहुत होती है।

रंग :

मगरका रंग बहुत कुछ मिट्टीके रंगसे मिलता-जुलता है। परन्तु नये उम्रवालोंका रंग हलका हरा होता है—अधिकतर घड़ियालका और सबके पेट हल्की पिलायी लिए हुए सफेद होते हैं। अतः जब धूप खानेके लिए ये किनारे पर लेटे रहते हैं तो दूरसे किनारेके ही मिट्टीका कुछ

ऊँचे हिस्सेका भ्रम हो जाना कोई आश्चर्य नहीं। निकट आते ही यह भ्रम तत्काल दूर हो जाता है, क्योंकि तब ये प्रायः तुरत पानीमें कूद जाते हैं। इस भ्रमका एक कारण और है कि जब ये किनारे पर पड़े रहते हैं तो यद्यपि ये सोये न भी हों तो भी जरा-सा भी हिलते-डोलते नहीं कि पता चले कि मिट्टी नहीं कोई जीवित जानवर है। जाड़ोंमें तो ये घण्टों धूप खाते किनारेके ऊपर पड़े रहते हैं। कभी सरक कर थोड़ा दूर जाकर लेट जाते हैं अथवा कभी-कभी स्थान बदल कर थोड़ी ही दूर जाकर लेटते हैं।

लकड़ीका कुन्दा :

पानीके किनारे जब ये धूप खाते लेटे रहते हैं तो कभी ऐसा भी भान होता है कि लकड़ीका कुन्दा रक्खा हुआ है। इस प्रकारका भ्रम मुझे भी कई बार हो चुका है। परन्तु भाग्यवश कभी धोखा नहीं खाया। भागलपुर जिलेके "थाना बिहपुर" का किस्सा है जिसका विस्तृत विवरण आगे दूँगा, वहाँ नदीके किनारे जमीनपर कई मगर भी पड़े थे और साथ-साथ चार पांच लकड़ीके कुन्दे भी रखे हुए थे, ये सब दस-बारह फुटके एक समान देख पड़ते थे। बहुत सोच-समझकर और यथासम्भव भली-भाँति देखकर एकके ऊपर मैंने गोली चलायी। बन्दूककी आवाज होते ही सब मगर तो धड़ाधड़ पानीमें कूद गये, केवल एक यह जिसपर गोली चलायी और वे चारों-पाँचो लकड़ीके कुन्दे पड़े रह गये। जिसपर गोली चलायी थी उसके जरा-सा भी न हिलनेसे मनमें कुछ सन्देह हुआ। फिर भी निवारणार्थ मैंने उसपर दूसरी गोली चलायी, किन्तु तब भी वह कुछ भी नहीं हिला। तब मुझे और सन्देह हुआ कि कहीं मैंने लकड़ीके एक कुन्दे ही में तो गोली नहीं चलायी। परन्तु पास पहुँचनेपर वह मगर ही निकला। गोली गरदनपर ऐसी सटीक लगी थी कि वह तत्काल ही समाप्त हो गया था, उस स्थानकी गोलीने उसके हिलने-डोलनेकी भी शक्तिको समाप्त कर दिया था।

वृक्षका तना :

कभी-कभी पानीमें जब ये तैरते रहते हैं अथवा वृक्षोंकी छायाके नीचे एक किनारे छिछले पानीमें पड़े रहते हैं, उस समय उनकी नाक और आँख ही ऊपर रह जाती है तथा दूरसे देखनेमें बहते हुए पेड़के तनेका भ्रम हो जाता है। इस समय कतिपय निःशंक मछलियाँ जो धृष्टतापूर्वक इनके निकट चली आती हैं वे काल-मुखका ग्रास बन जाती हैं। उस समय काष्ठवत् पड़ा हुआ मगर उनको विद्युत् गतिसे पकड़कर सीधे निगल जाता है।

आहार :

घड़ियालकी अपेक्षा ये पूर्णतः तथा विकट मांसाहारी होते हैं। गायके छोटे-छोटे बच्चे व बकरी इनका साधारण आहार हैं। कुत्तोंको भी ये बड़े स्वादसे निगल जाते हैं। पानी पीनेके हेतु जब कोई छोटा जंगली पशु किनारे पहुँचकर असावधान होकर थोड़े पानीमें प्रवेश करता है तो वह पानीके अन्दर छिपे घातमें बैठे हुए मगरका शिकार हो जाता है। यदि मगरने कुछ बड़ा जानवर पकड़ा हो तो फिर उसे पानीके अन्दर खींच ले जाता है। पानी भरनेके लिए अथवा स्नानके लिए आये हुए बालक-बालिकाओंको पकड़कर ये सीधे निगल जाते हैं। यहाँतक कि जब ये बहुत खतरनाक हो जाते हैं तो बड़े-बड़े पुरुषोंको व स्त्रियों तकको भी पकड़ ले जाते हैं। प्रमाणस्वरूप कितने ही मगरोंके पेटसे तो कांसेकी चूड़ियाँ भी मुझे मिली हैं। पानीसे निकलते ही ये थोड़ी दूरतक जमीनपर भी बड़े वेगसे दौड़कर पकड़ ले सकते हैं।

आहार विधि :

इनकी भोजनकी विधि विचित्र प्रकारकी होती है। अपने वध्यको अधिकतर ये जमीनके ऊपर ही खाते हैं। यदि कोई बहुत बड़ी मछली पकड़े हुए हो तो अपने पिछले पैरको मुखके पास लाकर उससे उसको

फाड़ लेते हैं। मुखमें-का हिस्सा पहले निगल जाते हैं और शेष मांस अपने पिछले पैरोंसे लेकर पुनः खाते हैं।

जैसा मैं लिख आया हूँ इनके बलवान् विकराल दांत न नोचनेके काममें आते हैं और न चबानेके ही, वरन् वे केवल जानवरोके पकड़ने और काटनेके ही काममें आते हैं। और मांसका जितना हिस्सा मुँहमें रहता है बिना चबाये हुए उसको ये बिलकुल सीधे निगल जाते हैं।

क्रूर प्रकृति :

वर्षा ऋतुमें नदियोंमें बाढ़ आ जानेके कारण-विशेषकर बिहार प्रान्तमें जहाँ इनकी संख्या बहुतायतसे है—जब गाँवके गाँव जलमग्न हो जाते हैं, तो इनकी पहुँच गाँवोंके अति निकट चारों ओर हो जाती है। कहीं-कहीं तो वर्षाके बाद भी ये गाँवके कूपों व तालोंमें रह जाते हैं।

एक स्थानकी घटना है कि एक युवा पुरुष किसी कार्यवश अपने गाँवसे दूसरे गाँव जारहा था। नदीमें विशेष बाढ़ आ जानेके कारण गाँवके चारों ओर पानी ही पानी था। जब वह कमर बराबर पानीमें पहुँचा तो सहसा एक विशालकाय मगर एक ओरसे बड़े वेगसे झपटा और पलक मारते उसको बीचोबीच कमरसे पकड़ लिया, तथा उसे पकड़े हुए उसको पानीके ऊपर उठाये हुए इधर-उधर उसने प्रदर्शन किया, मानों चुनौती दे रहा हो कि जिसका साहस हो आकर उसको छुड़ा ले जाय। परन्तु किसीका साहस न हुआ कि उस पानीमें प्रविष्ट होकर प्रयत्न भी करे, केवल किनारेसे ही हो हल्ला करते रहे। वह भाग्यहीन पुरुष शून्यमें चिल्लाता रह गया और अन्तमें देखते-देखते उसकी आवाज पानीके नीचे विलीन हो गयी। इसके विपरीत—

मनुष्यका मगर पकड़ना :

मिर्जापुरके पहाड़ों पर 'मुसहर' नामकी एक जाति है। सुननेमें आया कि ये पानीमें डुब्बी मार कर मगरकी कमरमें रस्सा

बाँध कर ऊपर चले आते हैं। फिर इनके साथी मिलकर उसको ऊपर खींच लाते हैं। गोरखपुर जिलेमें भी इसी प्रकार मगर पकड़नेकी रीति मैंने सुनी थी। ये मुसहर अपने अंगोंमें कुछ तेल आदि पोत कर डुब्बी मारते हैं। पहले ये पता लगा लेते हैं कि मगर अमुक स्थानमें है, वह भी इनसे भय खाकर नदीके नीचे जमीन पकड़े बैठा रहता है, तब ये साहसी पुरुष निर्भय होकर उसकी पीठ पर चढ़कर उसकी कमरमें रस्सा बांधकर ऊपर चले आते हैं। ऊपर आकर उसे खींच लेनेके बाद सब मिलकर डण्डे और गड़ासेसे उसका अन्त कर देते हैं।

भैंस द्वारा नदी पार :

गोरखपुरमें यह भी सुननेमें आया कि भैंस चरानेके हेतु उनके चरवाहोंको कभी-कभी छोटी-छोटी नदियाँ पार करना पड़ता है। उन नदियोंमें प्रायः मगर रहा करते हैं। ऐसी अवस्थामें वह चरवाहा निःशंक हो अपने भैंसके झुण्डको पानीमें हला देता है और स्वयं एक भैंसके ऊपर चढ़ जाता है। यदि कोई ढीठ मगर उसको पकड़नेका प्रयत्न करता है तो वह चरवाहा दूसरी भैंसकी पीठपर कूद जाता है, और जहाँ तक हो सकता झुण्डके बीचवाली भैंसों पर ही रहता है। और इसी प्रकार कूदता हुआ बातकी बातमें नदी पारकर जाता है। इन भैंसोंके झुण्डसे मगर प्रायः दूर ही रहते हैं।

एक बार एक भूखे मगरने ऐसे ही एक झुण्डमें-से एक पड़वेको पकड़ कर डुब्बी मारी। उसका आर्तनाद सुनते ही सब भैंसोंने तुरन्त घूमकर एक साथ डुब्बी मारी। फलतः मगर उसे अपनी मांदकी ओर न ले जा सका और उसको भी सीधे गहरे नदी तलमें ही खींच ले जाना पड़ा। परन्तु सब भैंसोंने भी सीधे वहाँ पहुँच कर उसकी पीठ पर अपने खुरोंसे लात मार-मार कर उसको कुचल डाला और पड़वेको छुड़ा ही लायीं।

वास-स्थान :

मगर विशेषकर कर्मनासा, जमुनाजी, कोसी, गंडक, घाघरा, सोन, नर्मदा, ब्रह्मपुत्र आदि नदियोंमें पाये जाते हैं। थोड़ी संख्यामें ये पहाड़ी नदियोंमें भी पाये गये हैं। परन्तु यहाँके मगर बहुत छोटे होते हैं। केवल चारसे छः फुट तकके ही देखे गये हैं। बहुत सम्भव है यहाँ उनके दूर-दूर तक भागदौड़की जगह कम है, तथा आहार भी पर्याप्त नहीं मिलता।

बड़ी-बड़ी नदियोंमें ये जानवर अधिकतर टोलियोंमें रहते हैं। बीस-बीसकी टोली मैंने कई स्थानोंमें देखी है। पानीके किनारे ही रेतपर धूप खाते ये घण्टों पड़े रहते हैं। परन्तु जहाँ थोड़ा-सा भी किसी प्रकारका भय हुआ तो तुरन्त पानीमें कूद जाते हैं। किसी-किसी निर्जन स्थानमें जहाँ किसी प्रकारका भय नहीं रहता, वहाँ ये पानीके तटसे काफी दूर भी चले जाते हैं और कहीं-कहीं अकेले भी पड़े रहते हैं।

स्थानान्तर :

कभी-कभी एक स्थानसे दूसरे स्थान रात्रिमें ही मीलों चले जाते हैं। परन्तु अपनी पुरानी जगहें ये तब छोड़ते हैं, जब उनके उन वासस्थानोंमें पानी कम रह जाता है, अथवा भोजनकी सामग्री भी समाप्त हो जाती है। वर्षा ऋतुमें जब "कोसी" नदी कोसों दूर फैल जाती है, तब बहुतेरे मगर नदीके बढ़ते हुए पानीके साथ-साथ बहुत दूर चले जाते हैं, और पानी हटनेपर गाँवके आस-पास गड्ढोंमें रह जाते हैं। वर्षा समाप्त होनेपर नदी सिमटकर छोटी हो जाती है, अपनी मर्यादामें रह जाती है—परन्तु बहुत गहरी होनेसे मगर उसमें बहुत आनन्दसे रहते हैं।

जाड़ोंके आरम्भमें इस प्रकार नदीके छोड़े हुये गड्ढ़ोंमें मैंने कई एक मगर मारे हैं। तबतक वे वहाँसे हटकर नदीमें वापस नहीं जा पाये थे। परन्तु ये मगर बहुत बड़े नहीं थे, लगभग छः से दस फुट तकके थे।

मांद :

मगरोंकी मांदें भी होती हैं जहाँ ये किंचित् कालके लिए रह जाते हैं, और जहाँ पकड़े हुए आदमियों अथवा अन्य जन्तुओंको लाकर रख देते हैं। कभी-कभी इन मांदोंमें रखनेके पश्चात् अपना भोज्य वहीं छोड़कर ये घूमने चले जाते हैं। और आवश्यकतानुसार लौटकर यथावकाश सुखसे भोजन करते हैं।

कहीं-कहीं दो मांदे भी होती हैं, जिनमें ये क्रमशः गरमी तथा वर्षाऋतुमें रहते हैं। इनकी ये मांदें ढालदार होती हैं। इनका मुख तो पानीकी सतहसे नीचे होता है, परन्तु इनका भीतरी मार्ग ऊपर होता हुआ वहाँ अन्त होता है जहाँ पानी नीचे रह जाता है। इससे इनको दो सुविधायें होती हैं। एक तो सांस लेनेमें दूसरे भोजनमें। जैसा पूर्व लिख आया हूँ सांस लेनेके लिए इनको ऊपर आना आवश्यक है, क्योंकि मछलीकी भाँति ये पानीके अन्दर सांस नहीं ले सकते, यद्यपि दो-दो घण्टे सांस रोके पानीके अन्दर रह सकते हैं। दूसरे, भोजन भी ये पानीके अन्दर नहीं कर सकते। अतः इन दोनों कार्योंकी पूर्ति वह भीतरका सूखा स्थल कर देता है।

वर्षाऋतुकी मांद ऊपर रहती है। कभी-कभी यह स्थल काफी ऊँचा होनेसे ऊपर जमीनकी सतहसे कुछ थोड़ा ही नीचे रह जाता है।

मनुष्यका जीवित बच जाना :

एक बारकी घटना है कि एक मगरने एक आदमीको पकड़ा और तुरन्त उसको सीधे अपनी मांदमें ले जाकर रख दिया। कुछ पानी पी लेनेसे और डरके कारण वह व्यक्ति बिलकुल हिला डुला नहीं। उसे मृत समझकर मगर उसे वहीं छोड़कर पुनः बाहर चला आया। इस बीच उस आदमीने अपने सम्मुख ऊपरकी ओर कुछ प्रकाश देखा। वह जीवनसे तो निराश हो ही चुका था परन्तु प्रकाश देखकर कुछ आशाका

संचार हुआ। वह खिसक-खिसककर आगे बढ़ा, और जहाँसे प्रकाश छन-छनकर आ रहा था, वहाँकी मिट्टीको अपने हाथोंसे जल्दी-जल्दी हटाना आरम्भ किया कि मगरके आनेके पहले वह निकलकर भाग सके। यह छिद्र जिसके द्वारा प्रकाश आ रहा था, एक बड़े वृक्षके जड़ोंके कारण था। छिद्र बड़ा होते ही जैसे ही वह निकलनेका प्रयत्न कर रहा था, उसने मगरके लौट जानेकी आहट सुनी। भयभीत हो अपनी पूर्णशक्ति लगाकर जल्दीसे बाहर निकला और उस छिद्रमें ढेरों मिट्टी पत्थर भरकर उसी वृक्षके सहारे बैठकर अपने धड़कते हुए हृदयको शान्त किया, और उस दयालु परमात्माको अनेकों धन्यवाद दिया जिसने उसे वस्तुतः कालके मुखसे बचाया।

दुष्प्राप्ति :

मगर अथवा घड़ियालका शिकार करना आसान नहीं है, वैसे तो किसी भी वन्य पशुका आखेट कठिन ही होता है, किन्तु इन भयंकर जल-जन्तुओंका शिकार तो एक अत्यन्त दुष्कर कार्य है। कारण, वन्य पशुओंके आखेटमें तो फिर भी हमें विस्तृत भूमि मिलती है जिससे हमारे हाथ-पाँव फैल सकते हैं, हम चल अथवा दौड़ सकते हैं, किन्तु इन जल-जन्तुओंके शिकारमें तो इन्हें पानीमें या पानीसे सटे स्थान अथवा किनारों पर ही मारना पड़ता है, और गोली चलते ही ये तुरन्त पानीमें खिसककर अथाह जलमें गोता लगाकर विलीन हो जाते हैं और शिकारी तटपर खड़ा हाथ मलता ही रह जाता है। अधिकतर ये उसी स्थान पर किनारे धूप खाते पड़े रहते हैं जहाँ नदीका पानी सहसा और अधिक गहरा होता है। भाग्यवश यदि निशाना गरदन पर अचूक बैठ गया तब तो इनके मिलनेकी सम्भावना होती है, अन्यथा सब दौड़-धूप निरर्थक हो जाती हैं। यदि घातक गोली लगनेपर भी, पानीके अति निकट होनेके कारण, ये तुरन्त उसमें खिसक सके, तो एकदम नदीके तलमें जाकर जमीन पकड़कर बैठ जाते हैं, जो मृत्युके

उपरान्त ही चार-पाँच दिन बाद फूलकर उतराते हैं, तबतक तो इनका चर्म भी पूर्णतया नष्ट हो जाता है।

दूसरे पानीपर निशाना लगाना भी अत्यन्त कठिन है। इनकी दृष्टि अति तीव्र होनेके कारण तथा इनके नेत्र इनके शरीरके ऊपर होनेके कारण ये स्वयं तो जलमें छिपे रहकर भी दूर ही से हम लोगोंको देख लेते हैं, किन्तु दूरीके कारण हम लोग ठीक पहचान नहीं सकते कि वास्तवमें मगर है अथवा लकड़ी आदि है। हमलोग जबतक इनके पास पहुँचे-पहुँचे ये अत्यन्त धीरे और शान्तिसे गोता लगाकर जलमग्न हो जाते हैं। अतएव विशेषकर पानीमें यदि गोली इन्हें लग भी जाय तो इन्हीं कारणोंसे इनकी प्राप्ति अति कठिन हो जाती है। केवल एक वार पानीमें मेरी गोली इतनी ठीक लग गयी कि वह पानीके ऊपर ही चित हो गया और उसकी गमनागमनकी शक्ति भी न रह गयी। किन्तु गोली लगना एक बात है पर इन्हें पा लेना दूसरी बात।

कुल मिलाकर कमसे कम पाँच सौ मगर और घड़ियालों पर मैंने गोली चलाई और उन्हें मारा है, किन्तु उपर्युक्त कारणोंसे इनमेंसे केवल पचास-साठ ही मेरे हाथ आये हैं।

मारनेका स्थान :

सैकड़ों मगर मारनेके उपरान्त मेरा अनुभव तो यही रहा कि बहुत सावधानीसे यदि इनके गलेमें ही गोली मारी जा सके, तो इनके हिलने-डोलनेकी शक्ति समाप्त हो जाती है, और तब ये जैसेके तैसे वहीं मृत होकर पड़े रह जाते हैं, और तब ही इनके आसानीसे मिलनेकी सम्भावना होती है अन्यथा नहीं।

राइफल :

आधुनिक शिकारी छोटेसे छोटे बोरकी राइफलसे बड़ेसे बड़े जानवरोंको मारना गौरव समझते हैं। पर मैं इसे बुद्धिमानी नहीं

कहूँगा। क्योंकि ऐसा करनेसे जानवरके केवल घायल होकर भाग जानेकी अधिक सम्भावना होती है, और घाव यदि गहरा हुआ तो ये कई दिनोंमें तड़प-तड़पकर मरते हैं।

मेरा अनुभव है कि यदि बड़े जानवर मारना हो तो .४०० बोरके आस-पासकी High velocity राइफलसे ही मारना चाहिए। यद्यपि हमारे एक मित्रने केवल दस गजकी दूरीसे ही दो नाली बन्दूककी गोलीसे एक आठ फुटका मगर मार दिया। करारेके ऊपरसे उन्होंने गोली चलायी, वह गोली माथे और गरदनके बीच लगी और वह वहीं रह गया। यदि मगर घड़ियाल छोटे हों जैसे पाँच-सात फुटके, तब तो .३०–०७ अथवा .२२ बोरकी High velocity वाली पर्याप्त है, परन्तु यदि बिलकुल ही छोटे हों, केवल दो या तीन फुटके बच्चे तो छोटी .२२ बोर ही काफी है। परन्तु यथासम्भव बच्चोंको नहीं मारना चाहिए। मैंने अधिकतर .४०५ बोरवाली राइफलसे इनको मारा है। परन्तु पिछले दिनों .३७५ बोरकी High velocity से भी मारा। मेरे कई मित्रोंने .५०० बोरकी बड़ी High velocity राइफलसे मारा है, मेरे बड़े भाईने .४५०–४०० बोरकी बड़ी दोनाली राइफलसे और अन्य भाइयोंने .४२३ की बहुत बड़ी H. V. से। इन बड़ी राइफलोंसे जानवरके मिलनेकी अधिक सम्भावना हो जाती है।

कुत्तों द्वारा शिकार :

मगरोंको कुत्ते भी बहुत पसन्द हैं। जहाँ मगरोंकी संख्या अधिक रहती है वहाँ कभी-कभी कोई शिकारी किसी एक ग्रामीण कुत्तेको नदीके किनारे बाँध देते हैं। जैसे चीतेके शिकारमें बकरी बाँधी जाती है, उसी प्रकार कुत्तेको बाँधकर शिकारी निकटकी झाड़ीमें छिपकर बैठ जाता है। कुत्तेका भूँकना सुनकर मगर जब उसको पकड़नेके लिए बाहर आता है, तब वह छिपे हुये शिकारीकी गोलीका शिकार हो जाता है।

मल्लाह द्वारा :

कभी-कभी मल्लाह भी इन्हें बड़े जालमें अथवा कटियेसे फँसा लेते हैं। परन्तु बड़े जालमें प्रायः केवल बड़े नर घड़ियाल ही फंसते हैं, क्योंकि, इनकी तूमड़ी जालमें फंस जाती है और तब ये विवश हो जाते हैं। तब मल्लाह इन्हें बाहर निकालते ही फन्दा मारकर इनका मुँह बाँध देते हैं। तदुपरान्त या तो वे उसे माकर खा जाते हैं अथवा किसीके हाथ बेंच देते हैं।

चर्म और भेद :

मगर तथा घड़ियाल दोनों ही के चमड़ेसे चौकोर और कड़े चार-खाने बने रहते हैं, किन्तु मगरकी अपेक्षा घड़ियालका चमड़ा अधिक मुलायम होता है। अतः छोटी वस्तुओंके लिए जैसे पर्स, जूते, कमर-पेटी, सिगरेट सिगार-चुरुट-केस, शृंगार-बक्स आदिके लिये यह अधिक उपयोगी होता हैं।

इसके विपरीत मगरका चमड़ा अधिक कड़ा होता है। पर यह स्मरण रहे कि इन दोनों ही के केवल पेटके ही चमड़े काममें आते है, पीठके तो हड्डीके समान कड़े होते हैं। किन्तु कभी-कभी छोटे घड़ियाल हों तो उसके पीठके भी चमड़ेको उपयोगमें ला सकते हैं। बड़े मगरके चमड़ोंके बड़े-बड़े सूटकेस, बड़े ट्रंक, बड़े-बड़े अटाची केस, बड़े-बड़े हैण्डवेग आदि-आदि सुन्दर वस्तुयें बनती हैं, और सब चमड़ोंसे ऊंचे दामोंमें बिकती हैं। अमेरिकाके Los Angels स्थानमें इनके चर्मके लिये सैकड़ों मगर पाले जाते हैं।

व्यापारी :

अन्तमें अत्यन्त खेदके साथ लिखना पड़ता है कि पिछले कई वर्षोंसे १९२६ और १९३८ के बीच कतिपय व्यापारियोंने चमड़ेके लालचसे कई शिकारियोंको मुख्य-मुख्य स्थानोंमें भेजकर इनका संहार करवा

डाला । शिकारियोंने शिकारकी मनोविनोदकी दृष्टिसे नहीं, अपितु व्यापारकी दृष्टिसे एक-एक करके इनको मारना आरम्भ कर दिया, वे शिकारी नहीं व्याधा हो गये । मारते समय हाथ न हिले अतः बन्दूकके सहारेके लिये छड़ियोंकी कैंची बना-बनाकर उनपर बन्दूककी नाल रख निशाना लगाकर चुन-चुनकर सब छोटे-बड़ोंका संहार करने लग गये । यह नहीं कि अपने हाथके ही सहारे आखेटके निमित्त पाँच-सात मार लेवें ।

परिणाम :

फलतः जहाँ सैकड़ों मगर रहते थे, अब वहाँ एक भी नहीं देख पड़ते । सम्भव है पचीस-तीस मील हटकर जहाँ शिकारियोंकी पहुँच न हो वहाँ ये कुछ बचे रह गये हों ।

आमी नदीके मगर :

मगर मारनेका सर्वप्रथम अवसर मुझे सन् १९२१ की फरवरीमें मिला, और वहींसे मुझे मृगयाका रस अथवा व्यसन विशेष रूपसे लगा ।

उस समय गोरखपुरमें मेरे आदरणीय ज्येष्ठ भ्राता श्री श्रीविलासजी डिप्टा कलेक्टरके पदपर नियुक्त थे । उन्होंने ही मुझको इनका शिकार खेलनेका निमन्त्रण भेजा था ।

शिशिर ऋतुका समय था और वे गोरखपुरकी भिन्न-भिन्न तहसीलोंमें दौरा कर रहे थे । उस समय उनका डेरा "आमी" नदीके तटपर था । वह स्थान बहुत ही सुन्दर और रमणीक था । वहाँ उन्होंने अपने तम्बूके निकट ही एक अच्छा बड़ा तम्बू मेरे लिये भी लगवा दिया था ।

मेरे वहाँ पहुँचनेके दो-तीन दिन पूर्व ही उन्होंने कई मीलोंतक स्वयं घूम-घूमकर इन मगरोंके धूप खानेके स्थानोंका पता लगा रखा था । इससे सुविधा यह हुई कि मेरे पहुँचनेके दूसरे ही दिनसे हमारा कार्यक्रम प्रारम्भ हो गया तथा हमलोग मगरका शिकार खेलनेमें लग गये ।

भाईने एक हाथी भी मँगा रक्खा था। गाँवोंमें कोई पक्की सड़क न होनेके कारण मोटर वहाँ चल नहीं सकती, अतएव घोड़ा, ऊँट या हाथीसे ही वहाँ सवारीका काम लेना पड़ता है। अतः हाथीपर बैठकर हमलोगोंने पूर्व निश्चित स्थानके लिए प्रस्थान कर दिया।

हमलोगोंको अपने डेरेसे लगभग छः-सात मील जाना था। कहीं-कहीं नदीके साथ-साथ तथा कहीं गाँवोंके मध्य हरे-भरे खेतोंका आनन्द लेते हुए, तीन घण्टे बाद हमलोग गन्तव्य स्थानपर पहुँचे। वहाँपर भाईने पहले ही दिन मगरोंके झुण्डको किनारेपर पड़े हुए देख रक्खा था।

नदी तटसे चार-पाँच सौ गज पहले ही हाथी रोक लिया गया। हम लोगोंकी तनिक भी आहट मगरोंको न लग जाय इस हेतु हम लोग वहीं उतर पड़े। हाथीको वहीं छोड़ हम लोग धीरे-धीरे नदीकी ओर बढ़े।

किनारे पर पहुँचनेके पहले ही थोड़ा रुककर हमने दुर्बीन लगाकर देखा, तो पाँच सात मगर पानीसे कुछ ही हटकर नदी तीरपर पड़े हुए दिखायी दिये, सादी दृष्टिसे देखनेसे ऐसा प्रतीत होता था कि लकड़ीके कुन्दे पड़े हुए हैं।

अब यहाँसे मेरा परिश्रम आरम्भ हुआ। भाई साहेब तो वहीं एक वृक्षके नीचे दुर्बीन लेकर बैठ गये, और मुझसे कहा कि वृक्षों तथा झाड़ियोंकी ओट लेते हुए आगे बढ़कर सबसे बड़े मगरको चुनकर मारो। वे इसलिए और रुक गये कि साथके अन्य व्यक्तियोंको आगे बढ़नेसे रोक सकें। अन्यथा अधिक लोगोंकी आहट पाकर मगर नदीमें तुरत कूद जाते।

इधर मैं एक पेड़से दूसरे पेड़, एक झाड़ीसे दूसरी झाड़ीकी आड़ लेता हुआ धीरे-धीरे आगे बढ़ा तथा उस स्थानके लगभग तीस गज पहले ही बैठ गया क्योंकि, बराबर छिपते हुए झुक-झुककर चलनेसे परिश्रम अधिक पड़ा और मेरी सांस एकदम फूलने लगी।

मैंने केवल दो मिनट विश्रामकर जैसे-तैसे अपने धड़कते हुए हृदयको शान्त कर, खूब अच्छी तरह निशाना लगा गोली चलायी। धड़ाका होते ही सबके सब मगर धमाधम करते हुए पानीमें कूद पड़े। केवल यह एक बड़ा मगर कुछ हिलता हुआ वहीं पड़ा रह गया। मैंने जल्दीसे उसके ऊपर दूसरी गोली चलायी जिसमें वह भी पानीमें न चला जाय। मेरी दूसरी गोली लगते ही वह बिलकुल शान्त पड़ गया। ऐसा प्रतीत होता था कि कदाचित् पहली ही गोलीमें उसके प्राण निकल गये होंगे।

इसके मिलनेका मुझे जितना आनन्द हुआ, यह मेरी लेखनी व्यक्त नहीं कर सकती। इस आनन्दका अनुभव उन ही कतिपय शिकारियोंको होता है, जिनको बहुत परिश्रमके बाद पहले पहल एक बड़ा शिकार मिला हो। मुझसे भी अधिक आनन्द हमारे भाईको हुआ कि उनके प्रयत्नसे मुझको प्रथम बार एक बड़ा मगर मिला।

अदृश्य शिकार :

एक दिनकी घटना है कि मैंने और मामाजीने मगरकी खोजमें कई मीलका चक्कर लगाया, परन्तु कोई मगर देख न पड़ा। अन्तमें थककर हम लोग नदीके किनारे, करारेके ऊपर बैठकर आपसमें परामर्श करने लगे कि क्या उपाय करना चाहिए कि जिसमें कोई जानवर मिल जाय और खाली हाथ लौटना न पड़े।

हम वार्तालाप करही रहे थे कि सहसा मामाजीने धीरेसे कहा कि हम लोगोंके ठीक सामने उस पार एक छोटा सा मगर किनारे पर घासके जुट्टोंके पीछे ही पड़ा है। उनकी यह बात सुनते ही शरीरकी शिथिलता तुरत गायब हो गयी, और मैं उस ओर बड़े ध्यानसे देखने लगा। परन्तु, बहुत देखने पर भी वहाँ मुझे घास और मिट्टीके करारेके अतिरिक्त कुछ देख न पड़ा।

वहाँ जब कोई जानवर देख नहीं पड़ा तो मैंने समझा कि मामाजीने केवल मेरी थकावट और उदासी हटानेके हेतु यह वाक्य कहा। परन्तु

बात ऐसी न थी। उनको मगर देख पड़ रहा था, कारण उनकी दृष्टि हम सबसे कहीं तीक्ष्ण थी, और वे दृढ़ताके साथ कहते जाते थे कि मगर घासोंके जुट्टोंके बीच पड़ा है, और जिसको मैं मिट्टीका करारा समझे बैठा हूँ वस्तुतः वही मगर है।

यद्यपि नदीका पाट केवल ७०।८० गज चौड़ा रहा होगा, और उनके उस दृढ़तापूर्वक कहनेपर मैंने पुनः बड़े ध्यानसे देखनेका प्रयत्न किया, किन्तु मुझे फिर भी कुछ देख न पड़ा और न समझमें आया। अन्तमें मैंने कहा कि आप जिस स्थानपर कहें मैं वहीं गोली चलादूँ। मैंने सोचा कि आज गोली नहीं चली है कुछ अभ्यास ही हो जायगा और कुछ मन भी बहल जायगा।

इस पर उन्होंने भी चन्दबरदाईकी तरह जहाँ मगरकी गरदन थी, वहाँ ठीक-ठीक बताना आरम्भ किया और कहा कि अमुक घासके जुट्टेमें, पानीसे इतने अंगुल ऊँचे, उसी मिट्टीके करारेमें मारो।

उनके इस प्रकार बतलाने पर मैं भी आसन जमाकर दो-तीन मिनट तक निशाना लेता रहा और साथ-साथ पूछता रहा जिससे कि स्थान पूर्णतः समझमें आ जाय। उनके समझानेपर जब मैं भलीभाँति सब ठीक-ठीक समझ गया तो मैंने गोली चलाई।

बन्दूकके शब्दके साथ ही देखता क्या हूँ कि एक चार फुटका मगर गोलीके धक्केसे लगभग दो फीट ऊपरकी ओर वैसे फिक गया जैसे कोई गेंद उछाले।

परन्तु मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ क्योंकि इस बातका मेरे मनमें कुछ ध्यान ही न था कि मैं गोली मगरपर चला रहा हूँ। हाँ, आनन्द अवश्य आया, हर्षातिरेकमें मैं स्वयं भी उछल पड़ा, तथा मामाजीकी दृष्टिकी तीक्ष्णताकी भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगा।

पाँच दिन मैं वहाँ था और पाँचों दिन बराबर मुझे मगर मिले,

परन्तु प्रत्येक दिन एक ही मगर हाथ लगता था। यों देख बहुत पड़ते थे और बहुतोंके ऊपर मैं गोली चलाता भी था, परन्तु यह न था कि जिसपर गोली चले वह मिल ही जाय। अधिकतर तो यही होता था कि गोली लगते ही वे पानीमें कूद जाते थे और फिर उनका पता नहीं चलता था।

उन पाँच दिनोंमें मैंने कुछ नहीं तो ३०।३५ मगरोंके ऊपर गोली चलायी होगी। पर पाँचके अतिरिक्त शेष सब पानीमें कूद जानेसे हाथ नहीं लगे। जिससे निष्कर्ष यह निकला कि जब बहुत सावधानीसे निकट पहुँचनेका अवसर मिल सके और केवल गलेमें ही गोली लगा सके तभी इनके मिलनेकी आशा हो सकती है अन्यथा नहीं। परन्तु ये दोनों कार्य कठिन हैं, क्योंकि ये ऐसी जगह बैठते हैं कि उनके निकट पहुँचना असम्भव हो जाता है। दूसरे वे मुँह घुमाये इस प्रकार लेटे रहते हैं कि सारा अंग तो देख पड़ता है, परन्तु मुँह और गरदन स्पष्ट दृष्टिगोचर नहीं होते।

यद्यपि जिन-जिनको भारी गोली लगी वे प्रायः सभी समाप्त हो गये हैं। इसका ज्ञान पीछेसे हुआ, जब छठे दिन हमलोग विश्राम कर रहे थे तो नदीकी ओरसे जो वायुका झकोरा आया वह अत्यन्त दुर्गन्धसे भरा था, कारण नदी छोटी थी जिससे उसका सारा पानी खराब हो गया। फिर तो वहाँ एक क्षण भी रहना दूभर हो गया, तथा हम लोंगोंने तुरत ही डेरा कूचकर लिया। भाई साहेबने तो कहीं अन्यत्र डेरा लगवाया और मैं घर लौट आया।

थाना बिहपुरका मगर

यह घटना कदाचित् जनवरी १९२३ की है जब मैं भागलपुरमें था। वहाँ मेरे एक मित्रने मुझे मगरके शिकार खेलनेका निमन्त्रण दिया। मेरे साथ एक मित्र और थे।

भागलपुरसे कुछ ही दूरीपर "थाना बिहपुर" नामक एक स्थान है, जहाँ हमें जाना था। किन्तु वहाँ जानेकी सुविधा न होनेसे वहाँ पहुँचनेमें काफी समय लग गया। पहले हम लोग "स्टीमर"से गंगा पारकर, उस पार छोटी लाइनकी ट्रेन पकड़कर बिहपुर स्टेशन पहुँचे।

स्टेशन पर हम लोगोंके स्वागतार्थ बिहपुरके ही जमींदार मित्र उपस्थित थे, जो हम तीनोंको अपने साथ घर ले गये। भारतवर्षके ग्रामवासियोंका आतिथ्य सत्कार तो प्रसिद्ध ही है। अतः मलाईदार शुद्ध दूध दहीसे हम लोगोंका अच्छा स्वागत हुआ। तदुपरान्त शिकार-की चर्चा चली।

उस ग्रामके निकट ही "कोसो" नदी बहती है जो वर्षा ऋतुमें अपने उग्र रूपके लिए कुप्रसिद्ध है, जाड़े और गरमीमें वह बहुत सकरी हो जाती है, किन्तु सकरी होनेपर भी बहुत गहरी रह जाती है, इसकी धारा अत्यन्त वेगवती है। नदी बड़ी और गहरी होनेके कारण ही मगर इसमें बड़े आनन्दसे रहते हैं।

हाँ, तो अब दूसरे दिनकी घटनाका वर्णन करता हूँ जिसमें हमारे मित्र इन मगरोंसे कैसे बाल-बाल बचे।

प्रातःकाल पर्याप्त मात्रामें जलपान कर हम लोग मगरके शिकारके लिए निकल पड़े। नदीके किनारे पहुँचकर देखता क्या हूँ कि लकड़ीके दस बारह कुन्दे पानीके निकट जमीनपर पड़े हैं। परन्तु कुछ पूर्व अनुभव हो जानेसे तुरत ध्यानमें आया कि कहीं मगर ही तो नहीं पड़े हैं। अतः वहीं खड़े होकर हमने दुर्बीनसे देखा तो देख पड़ा कि बहुत बड़े-बड़े मगर धूप खानेके लिए पड़े हुए हैं।

अपनी पार्टीके लोगोंको वहीं रुक जानेका आदेश दे मैं अकेला आगे बढ़ा। यद्यपि वहाँके अन्य लोग भी कौतूहलवश मेरे साथ ही चलना

चाहते थे क्योंकि वहाँके ग्रामीणोंका अनुभव था कि मगर उन लोगोंसे भयभीत होकर दूरसे ही पानीमें नहीं उतर जाते। किन्तु मेरे साथी तो शिकारसे बिलकुल अनभिज्ञ भी थे और सफेदपोश भी थे। उनमेंसे किसीको भी नहीं मालूम था कि मगर बहुत चालाक जानवर होता है और शिकारीको भली-भाँति पहचानता है। उसे जहाँ हम लोगोंकी आहट लगती तथा शिकारी व अन्य साथियोंको देखता कि तुरत पानीमें खिसक जाता। अतः मैंने पहले अकेले ही जाना श्रेयस्कर समझा। थोड़ी देर बाद वे लोग भी अपना कौतूहल न रोक सकनेके कारण धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगे।

इधर मुझे थोड़ा-सा अवसर मिल जानेसे मैं जानवरोंके काफी पास पहुँच गया। उनसे जब मेरा लगभग सत्तर-अस्सी गजका फासला रह गया होगा तभी मैं वहीं बैठ गया; तथा दो मिनट विश्रामके बाद एक सबसे विशालकाय मगरके ऊपर निशाना लगाया। यद्यपि मगरका मुख नदीकी ओर था और वह कुछ तिरछा पड़ा था तथापि इसकी गरदन मुझे देख पड़ती थी जिसपर मैंने निशाना साधा।

मेरी गोली चलते ही सबके सब मगर धड़ाम-धड़ाम पानीमें कूद पड़े। परन्तु यह मगर ज्योंका त्यों पड़ा रहा। गोली लगने पर भी हिला नहीं। मैंने जल्दीसे दूसरी गोली चलायी कि कहीं भाग न जाय। परन्तु वह फिर भी न हिला। तब मुझे संदेह होने लगा कि कहीं मैंने भ्रमवश लकड़ीके कुन्दे ही पर तो गोली नहीं चला दी। किन्तु जब दुर्बीन लगाकर देखा तो मगर ही पड़ा देखा। अतः इसबार सबको साथ ले उसकी ओर बढ़ा। परन्तु उसके चारों ओर दल-दल होनेके कारण हमलोग उसके निकट तक नहीं पहुँच पाये।

जहाँ हम खड़े थे वहाँसे वह लगभग पन्द्रह-बीस गज पर पड़ा हुआ था। अब प्रश्न यह उठा कि ठोस जमीन पर उसको कैसे लाया जाय।

हमारे जमींदार मित्रने यह सुझाव दिया कि हमलोग तबतक वहीं बैठ जायँ जबतक उनका नौकर एक बड़ा और मोटा रस्सा लाता है। अतः हमलोग वहीं बैठ गये और मगर सम्बन्धी अनेकों बातें करने लगे।

इतनेमें धैर्य न रहनेके कारण हमारे दूसरे मित्र, लाख मना करनेपर भी, मगरके निकट जानेके हेतु, उधर दौड़ ही तो पड़े। वह पन्द्रह-बीस पग भी न गये होंगे कि दल-दलमें जांघ तक धँस ही तो गये। मैंने तुरन्त पुकारकर उनसे कहा कि वह पीठके बल लेट जायँ, उनके वैसा करनेसे वे फिर अधिक नहीं धँसे। परन्तु निकलनेका थोड़ा भी प्रयत्न करनेसे अथवा करवट ही बदलनेका प्रयत्न करनेसे वह दल-दलमें पुनः धँसने लगते थे।

इधर हमलोगोंमें-से भी जो सहायतार्थ उनके निकट जानेका प्रयत्न करता था, वही दल-दलमें फँसने लगता था। फलतः आगे जानेका किसीको भी साहस नहीं होता था। एक नौकर जो सबसे हलके वजनका था, वह किसी प्रकार उनके पास तक पहुँचा। परन्तु जब वह उन्हें निकालनेका प्रयत्न करता तो स्वयं धँसने लगता।

इतनेमें मैंने देखा कि जो मगर पानीमें कूद गये थे और दूरसे यह तमाशा देख रहे थे, वे उन्हें असहाय पड़े देखकर किनारेकी ओर आने लगे। उनमेंसे एक तो बहुत ही ढिठायीके साथ किनारेपर पहुँचकर ऊपर चढ़नेकी चेष्टा करने लगा।

मैंने देखा कि अब यदि शीघ्रातिशीघ्र कुछ उपाय नहीं होता है तो व्यर्थमें ही हमारे मित्रकी जान चली जायगी। अतः मैं तुरन्त अपनी राइफलमें गोली भर उन मगरोंपर चाँद-मारी करने लगा। फलतः वे सब भाग गये और उनमें-से किसीको अब किनारे आनेका साहस न

हुआ। उनमें-से बहुतोंको तो गहरी चोट भी पहुँची और बहुतसे तो समाप्त भी हो गये। क्योंकि चार-पाँच दिन बाद वे फूलकर उतराते हुए देखे गये, परन्तु उस समय तो वे मेरे हाथ नहीं हो लगे, कारण वे सभी पानीमें डूब गये थे।

इधर यह सब हो रहा था कि तबतक नौकर रस्सा लेकर आ पहुँचा। हमलोगोंने मित्रके पास रस्सेको तुरन्त फेंका, और उन्हें खींचकर किसी प्रकार दल-दलके बाहर निकाला। वह जब निकट आये तो बेचारे अपनी नासमझीके कारण स्वयं इतने लज्जित थे और तबतक उन्हें इतनी काफी शिक्षा मिल चुकी थी कि और अधिक उनकी भर्त्सना करना उचित न होता। किन्तु हम लोगोंने परमात्माको धन्यवाद दिया कि उनकी कृपासे मित्रकी जान बच गयी और एक बड़ी दुर्घटना होते-होते बची।

तदुपरान्त ग्रामीणोंने पुनः उसी रस्सेके सहारे मगरको भी बाँधकर अपने निकट ठोस जमीन पर खींच लिय। उसकी लम्बाई नापने-पर वह पूरे चौदह फुटका निकला। बहुत ही बड़ा विशालकाय मगर था।

मेरी राइफलकी पहली गोली उसके कन्धेके ऊपर गलेपर लगी थी और माथेके पास जाकर अटक गयी थी। दूसरी गोली बाजूके नीचे छातीमें लगी थी और वहीं अटक गयी थी।

अब मगरको हमारे जमींदार मित्रने एक बैलगाड़ी मँगवाकर सहर्ष उस पर रखवा कर गाँव भरमें प्रदर्शन करवाया। उसे देख बाल-वृद्ध सभी बड़े प्रसन्न थे। और एक खासा जलूस उसके पीछे हो लिया।

मुझे अवकाश और अधिक न होनेसे हम लोग दूसरे दिन भागलपुर लौट आये।

(ख) घटनाएँ :

१. घायल मगरका दुम पकड़कर खींचना :

बहुत दिनोंसे मेरी उत्कट इच्छा थी कि जिस प्रकार मेरे भैयाने मुझे बहुतसे मगरोंका शिकार खेलाया उसी प्रकार मैं भी एक शिकार पार्टीका सुन्दर आयोजनकर उन्हें भी ढेरों मगरका शिकार कराऊँ।

१९२२ के क्रिसमसमें जब मैं भागलपुरमें था, मुझे यह अवसर प्राप्त हुआ। उन दिनों बड़े दिनकी छुट्टियोंमें हम सब भाइयोंको चार-पांच दिनका अवकाश था, अतः मगरके शिकारके लिए मैंने भैया तथा अपने छोटे भाईको भी आमन्त्रित किया। मेरा निमन्त्रण मेरे दोनों भाइयोंने सहर्ष स्वीकार कर लिया।

उन लोगोंको निमन्त्रित करनेके एक ही मास पहले मैं उपरोक्त स्थानोंपर जाकर दो-तीन मगर मार लाया था, इससे मुझे उन स्थानोंका कुछ परिचय हो गया था कि वहाँ नदीके प्रत्येक घुमावपर कुछ-न-कुछ मगरोंकी टोली धूप खाती रहती है।

बादला घाटका मगर :

२५ दिसम्बरको मैं भागलपुरसे चलकर "बादला घाट" पहुँचा, जहाँ मामाजी सहित मेरे दोनों भाई कुछ ही घण्टे पहले पहुँच चुके थे, अतः हमलोग वहाँसे सीधे अपने शिकारगाहके लिए चल पड़े।

भागलपुरसे प्रस्थान करनेके पहले ही मैंने दो-तीन बड़े-बड़े तम्बू, रसोई तथा नौकरोंके लिए अनेक छोलदारियाँ, भोजनका सभी सामान, प्रबन्धके लिए दो-तीन मुनीम, गुमाश्ते, और कई प्यादे, चपरासी, चौकीदार, नौकर, महराज (रसोइयाँ) चार-पांच चर्मकार आदि-आदि सब भेज दिये थे, जिसमें कि हमारे पहुँचनेके पहले ही यथाविधि सब प्रबन्ध ठीक रहे। तदनुसार हमारे पहुँचनेपर हमें अपना कैम्प समस्त

साज-सज्जासे सुपूरित मिला। नदी किनारे एक खासी अच्छी छोटी-सी नगरी बन हो गयी थी। अतः बिना किसी झंझटके हमलोग तुरत शिकार प्रारम्भ कर सके।

हमारी पार्टीमें हमारे प्रिय तथा विनोदी अनुज श्रीरजंनजीके भी होनेसे हमलोग खूब शोरगुल मचा सकते थे। उन तीन-चार दिनोंमें हम तीनोंने मिलकर अथक परिश्रमकर अनेकों मगर, घड़ियाल मारे। हम तीनोंके पास लगभग दो हजार कारतूस थे जो सभी समाप्त हो गये।

अन्तिम दिन जब हमारे सब कारतूस समाप्त हो गये तो हमने यह तमाशा देखा कि मगर अब हमें देखकर दूरसे ही भागते नहीं। इससे हमें यह अनुभव हुआ कि इन जानवरोंको भी यह समझनेकी शक्ति होती है कि कौन उनके घातक हैं और किससे कब वे निर्भय हैं।

इस मगर अभियानमें हम लोगोंने लगभग दो-ढाई सौ मगरोंके ऊपर गोली चलायी होगी, किन्तु पैंतीस-चालीस जानवरोंसे अधिक नहीं मिल सके। एक-एक मगरके ऊपर चार-चार पांच-पांच गोली चलानी पड़ती थी, तब कहीं वह मिल पाता था। एक मगरके ऊपर तो पूरी उन्नीस गोलियाँ चलानेपर भी अन्ततः वह नदीमें ही चला गया, कारण वह एकदम ढालुवी जमीनपर पड़ा था और गोलीके धक्केसे फिककर बार-बार ऊपर चला जाता था परन्तु पुनः पानीमें खिसक आता था। फिर मैंने भी थककर छोड़ दिया।

अब एक दिनकी घटना सुनिये जिसमें मेरे बड़े भाईके अपूर्व साहस कर एक घायल मगरकी दुम पकड़कर खींचे रहनेसे किस प्रकार वह जानवर पानीमें न जाकर मुझे मिल सका।

एक जगह नदीके उस पार भैया तथा इस पार मैं था। एक नाव जो मैंनें पहलेसे ही ले रखी थी उसे उन्होंने उस पार जाकर हमलोगोंके लिए वापस भेज दिया था।

नदीके करारेके ऊपर जानवरकी खोजमें धीरे-धीरे चलते हुए एक जगह मोड़ घूमनेपर उन्होंने बारह फुटका एक मगर पड़ा देखा। किन्तु वह उन्हींकी ओर था। जो भैयाके अधिक निकट जानेसे पानीमें चला जाता। अतः उसको मारनेके लिए उन्होंने मुझे तत्क्षण संकेत किया। उनके इस आदेशपर मैंने बहुत सावधानीसे किनारेपर बैठकर मगरकी गरदनपर निशाना लगाकर गोली चलायी। मेरी गोली चलते ही भाई उसकी ओर दौड़ पड़े।

जानवरको गोली ठीक लगी थी इसलिए वह किनारेपर ही पड़ा रह गया। परन्तु उसमें कुछ-कुछ जान रह जानेसे वह धीरे-धीरे सिर हिला पाता था। भाईको विश्वास था कि जानवरको ठीक जगह भारी गोली लगनेसे वह एक प्रकारसे मर ही गया होगा, पर थोड़ी-सी जान रहनेसे कहीं वह पुनः पानीमें खिसक न जाय, इस कारण वे अपूर्व साहससे बिना आगा-पीछा बिचारे आठ फुट ऊँचे करारेसे नीचे कूद पड़े और तुरत उसकी दुम पकड़कर उसे खींचे रहे तथा मुझे शीघ्र आनेके लिए पुकारने लगे। मैं बहुतेरा चिल्लाया कि वे उसे छोड़ दें, क्योंकि मगर दाहिने-बायें सर घुमा-घुमाकर उन्हें काटनेका पूरा प्रयत्न कर रहा था। उसके सुदृढ़ दाँतोंके खटाखटके शब्द इस पार भी मुझे स्पष्ट सुनाई पड़ रहे थे। परन्तु भाईने उसको नहीं ही छोड़ा।

सौभाग्यवश नाव इस पार होनेसे मैं तुरत उसपर कूदकर चढ़ा और जल्दी-जल्दी डांड़ा खेते तथा बीच-बीचमें लग्घी लगाते उस पार पहुँच मगरके मुँहसे नाव सटा दी, और तुरत एक गोली उसके सिरपर मारी जिसने उसे अविलम्ब समाप्त कर दिया।

भैया का कहना था कि जानवरको मेरी प्रथम गोली ही ऐसी घातक लगी थी कि उसकी गमनागमनकी शक्ति एकदम नष्ट हो गयी थी। दूसरे, उतनी शक्ति क्षीण होनेके उपरान्त जब कोई बलपूर्वक दुम खींचे रहे तो वह घूमकर काट भी नहीं सकता, केवल आगे बढ़नेके

लिए ही वह बल लगाये रहेगा। इसीलिए उससे विशेष भय नहीं था। फिर तो अवसर पड़ने पर हम लोग भी यदा कदा ऐसा ही कर लेते थे जिससे जानवर मिल जाता था। परन्तु बड़े मगरोंको पकड़नेका साहस तब भी नहीं होता था।

अब दूसरा दृष्टान्त सुनिये जिसमें हमारे छोटे भाई डा० श्रीरंजनजी बाल-बाल बचे। उन्होंने ऐसे ही एक दस-बारह फुटका मगर मारा, और मारनेके साथ ही उसको पकड़नेके लिए दौड़े। परन्तु वह जानवर आदमखोर था, क्योंकि उसके पेटसे चूड़ियाँ भी निकली थीं। इनकी भारी गोलीके धक्केसे उसे हलकी तन्द्रा आ गयी थी, किन्तु वह मरा नहीं था। जैसे ही भाई उसकी दुम पकड़नेके लिए उसके निकट पहुँचे, उसकी तन्द्रा टूटी और वह तुरत उनकी ओर घूम पड़ा और मुँह फाड़कर उन्हें दौड़ाया। भाई बिलकुल हक्का हो गये और उलटे पाँव भागे। वह मगर इन्हें लगभग बीस पचीस गज तक दौड़ा पाया होगा कि उससे अधिक आगे बढ़नेका उसको दम ही नहीं रह गया। भारी गोलीने उसका अन्तकर दिया और वह वहीं पड़ा रह गया। हम लोगोंने परमात्माको कोटिशः धन्यवाद दिया कि भाई बाल-बाल बच गये।

इससे यह निष्कर्ष स्पष्ट निकलता है कि जबतक कि उसके प्राणान्त होने का पूरा सन्तोषजनक प्रमाण मिल न जाय, घायल जानवरके निकट कदापि न जाना चाहिये, अन्यथा शिकारीके ही शिकार हो जानेका पूरा अंदेशा रहता है।

२. मगरसे मुटभेड़ :

यह तो पहले ही लिख चुका हूँ कि मगरोंके जितने ही निकट पहुँच कर उन्हें मारा जाय उनके मिलनेकी सम्भावना उतनी ही अधिक हो जाती है, परन्तु उनके निकट पहुँचनेमें कितना परिश्रम तथा कैसे

खतरोंका सामना करना पड़ता है, प्रस्तुत लेखसे यह भली भाँति ज्ञात हो जायगा।

एक दिनकी बात है, हम लोग नदी किनारे मगरोंकी खोजमें गये हुए थे। भैयाको दुर्बीनसे एक मगर इसी पार अपने ही ओरके किनारे पर, किन्तु कुछ दूर पड़ा हुआ देख पड़ा। उसका मुख किनारे परके एक वृक्षकी जड़से सटा हुआ था, और पूँछ पानीकी ओर थी। दूर होनेके कारण साफ समझमें नहीं आता था कि वह अमुक पेड़के पास है।

भाई तो दुर्बीन लिए वहीं बैठ गये, और मुझसे कहा कि तुम पास जाकर मारो। मैं नदीका किनारा छोड़ थोड़ा ऊपर ही ऊपर धीरे-धीरे उस ओर बढ़ने लगा, तथा बीच-बीचमें उलटकर भाईसे संकेत द्वारा पूछता जाता था कि मैं मगरकी सीधमें पहुँचा या नहीं।

इस पार बड़ी-बड़ी झाड़ियाँ न होंनेके कारण मैं बड़े असमञ्जसमें पड़ा कि अब छिपकर कैसे आगे बढ़ूँ। यदि सीधे खड़े होकर बढ़ता हूँ तो मगर देख लेगा, और मेरा सब परिश्रम नष्ट हो जायगा। अन्तमें मुझे यही उपाय सूझा कि मगर मारनेके लिए उसीकी तरह पेटके ही बल रेंगकर उसके पास पहुँचूँ।

अब मैंने पीठपर राइफल लिया और रेंगना आरम्भ किया। सर्व-प्रथम तो मुझे जुते हुए खेतके हिस्सेको पार करना पड़ा जिसमें काफी कठिनाई उठानी पड़ी। हथेली और घुटने वृक्षोंके सूखे खुत्थोंसे कई जगह छिल भी गये। तदुपरान्त बलुई जमीन भी पार करनी पड़ी। बीच-बीचमें थककर बिलकुल पेट हीके बल लेटकर विश्राम कर लेता था, और साथ ही भाईसे बराबर संकेत द्वारा पूछता भी जाता था। इस प्रकार लगभग दो सौ फुट रेंगना पड़ा, तथा केवल इतनी ही दूर पहुँचनेमें मुझे पूरे आधा घण्टा लग गया। इसीसे अनुमान किया जा सकता है कि मुझे कितना परिश्रम करना पड़ा होगा।

जब मैं नदी किनारेके कुछ समीप पहुँचा तो गरदन उठाकर मगर देखनेका प्रयत्न करने लगा, परन्तु वह देख नहीं पड़ा। एक बार तो मनमें सन्देह हुआ कि कदाचित् उसको किसी प्रकार मेरी आहट लग गयी होगी और वह पानीमें उतर गया होगा। परन्तु मुड़कर जो भाईकी ओर देखा तो उन्होंने संकेतसे कहा कि वह सामने ही वृक्षकी जड़में पड़ा है, पर मेरी समझमें न आया कि वह किस वृक्षकी जड़में है। आस-पास कई एक बड़े वृक्ष थे और वह उनकी ओटमें होनेके कारण मुझे देख नहीं पड़ता था।

किसी प्रकारका थोड़ा सा भी शब्द न हो अतः मैंने जूते मौजे भी उतार दिये, तथा बहुत धीरे-धीरे अति सावधानीसे बढ़ता हुआ मैं एक मोटेसे वृक्षकी आड़में जा खड़ा हुआ, और बहुत धीरेसे गरदन आगे करके जो झाँका तो एकदम सन्न हो गया। क्योंकि मगर उसी वृक्षकी जड़में लेटा हुआ था जो शायद मुझसे एक गज भी न दूर रहा हो। मेरे और उसके बीचमें केवल वह वृक्षका तना ही था। यदि मैं अपनी बन्दूककी नाल आगे बढ़ा देता तो वह उससे छू भी सकती थी।

अस्तु, मैंने अपने धड़कते हुए हृदयको जैसे तैसे शान्तकर एक कदम पोछे हटकर पेड़की बगलसे राइफलकी नाल आगेकी ओर की। किन्तु, इतनेमें कदाचित् कुछ खटका होनेसे मगरने आँखें खोली और साथ ही बड़ा सा मुख भी खोला। इधर, तबतक मैंने भी बिना निशाना लिए हो बन्दूककी नाल उसके माथे पर सीधा कर गोली चला ही दी।

बड़ी राइफलकी इतने पासकी गोली सिर पर लगते ही उसका सिर फूट ऐसा एकदम ही फट गया और वह तत्काल वहीं समाप्त हो गया।

यह सब पूरा तमासा दूर बैठे हुए मेरे भाई दुर्बीन द्वारा देख रहे थे। गोली चलते ही वह मेरी तरफ दौड़ पड़े तथा मगर देखकर बहुत

प्रसन्न हुए जो लगभग ग्यारह फुटका था। किसी भी मगरके इतने पास मैं कभी नहीं पहुँचा था।

इस तरहके अन्य-अन्य प्रकारके कितने ही अनुभव मैंने प्राप्त किये हैं जिनको विस्तारपूर्वक लिखना असम्भव-सा है।

३. जलके ऊपर मगरका तीव्र वेगसे दौड़ना :

एक दिन प्रातःकाल, रेलवे लाइनके साथ-साथ हम लोग "बादला घाट"से "घमाराघाट" चले जा रहे थे। यहाँकी रेलवे लाइन जमीनसे सटी हुई एक पगदण्डी थी और हमलोग उसी परसे जा रहे थे। लाइनके दोनों ओर बड़े-बड़े गड्ढे थे। इन गड्ढोंकी मिट्टी लाइन बनाते समय निकाली गयी थी। इन गड्ढोंमें प्रायः पानी भरा रहता था। इनमें एक गड्ढा बहुत बड़ा था और उसके बीचमें एक छोटा-सा टापू था। उस टापूपर एक छोटा पेड़ था, तथा उसके ऊपर एक "वाक्" चिड़िया बैठी थी।

भैयाके हाथमें .२२ बोरकी एक सबसे छोटी राइफल थी। उन्होंने कौतूहल वश उस चिड़ियापर गोली चलायी। गोली लगते ही चिड़िया उड़ी, परन्तु दूर न जा सकनेके कारण जलमें ही गिर गयी और वहाँसे तैरकर उस पार जानेका प्रयत्न करने लगी।

इतनेमें एक छोटा मगर, जो उसी टापूपर बैठा था, जिसे हमलोगोंने नहीं देखा था, एकदमसे उठा और सीधे पानीमें घुसकर डुब्बी मारकर ठीक उसी स्थानपर निकला जहाँ चिड़िया गिरी थी। परन्तु तब तक चिड़िया तैरकर दूसरे किनारेके समीप पहुँच गयी थी।

उसे वहाँ न पाकर, मगरने जो दृष्टि दौड़ाई तो उसे दूसरे किनारेपर पहुँचते देख और यह समझ कि शिकार हाथसे निकला जा रहा है, वह पानीके ऊपर बड़ी तेजीके साथ दौड़ा। मैंने दौड़ना शब्द जानकर प्रयोग

किया है, क्योंकि तैरनेमें शरीरका कुछ हिस्सा पानीमें भी रहता है। परन्तु न जाने कैसे इस मगरका सारा शरीर पानीके ऊपर दिखायी देता था। जैसे कोई जमीनपर दौड़े वैसे ही वह चारों पैरसे तीरके समान बड़े वेगसे दौड़ा, तथा उसने किनारेपर चढ़ती हुई चिड़ियाको पकड़ ही तो लिया।

हम लोग देखते ही रह गये, क्योंकि गोलीका चलना, चिड़ियाका गिरना, मगरका पानीमें झपटना तथा उसे पकड़ना, सब एक क्षणमें हुआ। किंकर्तव्यविमूढ़से हम लोग खड़े रह गये।

भाईने जल्दी-जल्दी उसी छोटी राइफलसे दो चार गोलियाँ चलायीं जो सम्भवतः उसकी नाकमें लगी होगी, क्योंकि उसने फिर चिड़ियाको छोड़कर पानीमें डुब्बी लगा ली।

सायंकाल लौटते समय उस मगरको टापूपर पड़ा देख हमें पुनः अवसर मिल गया। हमारे साथ बड़ी राइफल थी ही, अतः उसे लेकर और थोड़ा समीप पहुँचकर, मैंने उसपर गोली चलायी। जानवर बड़ा न था, अतः भारी गोली सामने गलेमें लगती हुई आधी दुमके पासतक पहुँच गयी, तथा वह वहीं रह गया। नापनेपर वह केवल छः फुटका जानवर निकला।

इतना छोटा जानवर जलपर इतनी तेजीसे तैर सकता है, यह कभी हमलोगोंके ध्यानमें भी न था, जो प्रत्यक्ष देखनेमें आया।

४. उलटे हुए डोंगेके आकारका बृहत् घड़ियाल :

इसी यात्रामें एक दिन हमलोग "कोसी" नदीपर जानेके लिए "घमारा-घाट" स्टेशनसे रेलवे लाइनके साथ-साथ चले। स्टेशनसे लगभग एक मील पर नदीके ऊपर रेलवेका एक पुल है। मामाजी सहित हम तीनों भाइयोंने वहाँ पहुँचकर नीचे उतरनेके पूर्व जानवरोंकी खोजमें इधर-उधर दूर तक दृष्टि दौड़ाई।

नदीके दाहिनी ओर मील भरके ऊपर और हम लोगोंके बाँई ओर, किनारेसे थोड़ा हटकर ऊपरकी ओर एक उलटी हुई नाव देख पड़ी। हम लोगोंको बहुत आश्चर्य हुआ कि यहाँ नाव कैसे पड़ी है। कारण वहाँ आस-पास कुछ दूर तक हमें कोई गाँव या बस्ती तो देख नहीं पड़ी। मल्लाहोंकी कोई झोपड़ी या जाल भी देख न पड़ी जिससे यह अनुमान होता कि कदाचित् वह डोंगी वहाँ मरम्मतके लिए उलट कर रक्खी गयी हो।

हम लोग आपसमें यह तर्क-वितर्क कर ही रहे थे कि देखा वह डोंगा कुछ हिला और अपना स्थान कुछ बदल कर फिर रुक गया। यह देख हम लोगोंके आश्चर्यकी सीमा न थी, क्योंकि आस-पास कोई आदमी भी तो देख नहीं पड़ता था। कौतूहल वश मैंने दुर्बीन लगा कर जो उधर देखा तो सारी समस्या हल हो गयी।

जिसे हम लोग डोंगा समझ रहे थे वह एक बहुत ही बड़ा घड़ियाल था। हम लोगोंने तो इतना बड़ा घड़ियाल कभी देखा ही न था, किन्तु अन्य लोगोंने भी इतना बड़ा देखा होगा इसमें भी सन्देह है। वह घड़ियाल जमीनसे एक गजसे भी अधिक ही ऊँचा रहा होगा और पूरे तीस फुट लम्बा था जो पीछेसे ज्ञात हुआ।

अब विचार यह होने लगा कि इसको मारा कैसे जाय। जहाँ वह पड़ा था वहाँ घासोंके अतिरिक्त खुला मैदान था। आस-पासमें घासके सिवाय कोई झाड़ी आदि भी न थी कि छिपकर उसके निकट पहुँचा जा सके। पुल परसे ही गोली चला सकते थे, क्योंकि उसका आकार इतना बड़ा था कि निशाना लगानेमें तो कोई कठिनाई न होती। परन्तु गोली उतनी दूर पहुँचती इसमें कुछ सन्देह था, और यदि किसी प्रकार पहुँच भी पाती तो उसमें मारनेकी शक्ति भी कम ही रह जाती, तीसरे जानवर इतना बड़ा था कि इतनी दूरसे उसको गोलीका कोई

असर ही न होता। आपसमें यह सब परामर्श होने पर निश्चय यह हुआ कि छोटे भाईके साथ मैं जाऊँ और यथासम्भव उसके निकट पहुँच कर हम दोनों एक साथ ही उस पर गोली चलावें।

यद्यपि हमें उसके निकट पहुँचनेकी आशा तो कम थी किन्तु हम लोगोंका मन कब मानता। अतः हम दोनों भाई पुलसे नीचे उतरे तथा सोचते-सोचते उसकी ओर बढ़े। जहाँ वह पड़ा था और जिसे हम लम्बी-लम्बी घास समझते थे वह घासके छोटे-छोटे पेड़ थे जो कठिनतासे ढ़ाई फुट ऊँचे रहे होंगे, कारण उन पौधोंकी फुनगीके ऊपरसे मगरकी पीठ देख पड़ती थी। वहाँ एक छोटी-सी झाड़ी भी थी जिसमें वह मुँह छिपाये पड़ा था, किन्तु लम्बा इतना अधिक था कि दुमका थोड़ा हिस्सा पानीमें ही था।

बड़ी-बड़ी कठिनाइयोंसे रेंग-रेंगकर, घिसक-घिसककर हम लोग थोड़ा क्या उसके काफी निकट पहुँच पाये। पेटके बल रेंगकर चलनेसे हमें जानवर देख नहीं पड़ता था। कुछ दूर रेंगनेके बाद हम लोग अन्दाज करनेके लिए बैठे कि जानवर अब कितनी दूर है, तो देखते क्या हैं कि कठिनाईसे वह हमसे पचास फुट पर ही पड़ा है।

उस दीर्घकाय जन्तुको इतने समीप देख एक बार तो हमारा दिल धड़कने लगा, पर जैसे तैसे वहीं बैठकर हम दोनोंने उस विशाल कायामें निशाना लगाया। उसका मुँह तो अपनी ही ओर झाड़ीमें रहनेके कारण हम लोगोंको एक दम देख नहीं पड़ता था, अतः सिवा उसके शरीरमें ही निशाना लगानेके अतिरिक्त और कोई उपाय न था। फलतः हम लोगोंने उसके पेट ही में लक्ष ले एक साथ ही गोली चलायी यह जानते हुए भी कि उसका उस पर कुछ असर न होगा। हम लोगोंकी गोली चलते ही वह एकदम घूमकर पानीमें धमसे कूद पड़ा जैसे उस पर गोलीका कुछ असर ही न हो। पता नहीं उसे गोली लगी अथवा नहीं, कारण खूनके कोई निशान तो कहीं देख न पड़े, यद्यपि निशानेमें

चूक होनेकी कोई भी सम्भावना न थी, कारण हम लोग उसके काफी निकट थे और लक्ष्य बहुत बड़ा था। केवल यही कह सकते हैं कि उस इतने बड़े जन्तुके लिए हमारी गोलियाँ बहुत छोटी थीं तथा उसके पेटमें उसका कोई असर नहीं हो सका, अथवा यह कहें कि मारनेवालेसे बचानेवाला कहीं बड़ा है।

३० फुट :

वह जहाँ पड़ा था वहाँकी जमीन मुलायम होनेसे उसके पूरे आकार-का निशान बन गया था जो नापने पर पूरा सत्ताइस फुट निकला, और इसके ऊपर लगभग तीन फुटकी दुम पानीमें और रही होगी। हम लोग उसकी भीमकाया पर विस्मय तथा न मिलनेका पछतावा करते हुए लौट आये।

५. पुरातन-कालसे महाव्याल समान एक विशाल ग्राहकी चाल :

"बादलाघाट", "घमाराघाट" वाली हमारी उसी चतुर्दिवसीय यात्राके अन्तिम दिन एक विशाल मगरका स्थलपर ही सुगमतासे बहुत दूरतक चलना देख पड़ा जो हमने पहले कभी नहीं देखा था और न आजतक भी पुनः देखनेमें आया।

एक दिन भैयाके आदेशानुसार हमलोग अपनी-अपनी बन्दूक डेरेमें ही छोड़ नावपर चढ़ केवल निरीक्षणार्थ चल पड़े। बन्दूकें इस कारण छोड़ दीं कि हथियार पास न रहनेसे प्रायः यह देखा गया है कि जानवर तब हमलोगोंको देखकर दूरसे ही भाग नहीं जाते। उनकी दृष्टि भी तीव्र रहती है तथा समझ भी अति तीक्ष्ण रहती है। वे यह भलीभाँति जानते हैं कि ग्रामीणोंके अतिरिक्त ये नये प्रकारकी वेष-भूषासे सुसज्जित मनुष्य दूरसे ही उनका संहार कर देंगे। परन्तु जैसे वे ग्रामीणोसे नहीं डरते उसी प्रकार हमें निरस्त्र देख वे हमलोगोंको भी थोड़ा-बहुत निकट आने देते हैं। वैसे तो सभी अन्य पशु, मनुष्यमात्रसे स्वभावतः ही भय-

भीत रहते हैं। अतएव न तो वे स्वयं मनुष्यके निकट आते हैं और न आने देते हैं। किन्तु, यदि उनको यह भान हो जाय कि हमलोग उनको कोई हानि नहीं पहुँचायेंगे तो वे हमें अपने कुछ निकट अवश्य आने देंगे।

यही कारण था कि हमलोगोंको उस दिन कई मगर देख पड़े जो हमें देखते ही दूरसे पानीमें नहीं चले जाते थे। अब एक मगरकी चालका वर्णन सुनिये जो किनारेसे लगभग पचास गज दूर नदीके बीच एक टापूके ऊपर पड़ा था।

हमारी नाव खेनेका शब्द जब उसके कानोंमें पड़ा तो वह उठ खड़ा हुआ तथा हमलोगोंकी ओर बड़े ध्यानसे निर्भीक दृष्टिसे देखने लगा। उस समय हमलोगोंकी नाव उससे लगभग डेढ़ सौ गज दूर रही होगी और धीरे-धीरे आगे बढ़ती चली जा रही थी।

फिर भी वह किसी प्रकारकी शीघ्रता न कर वहाँसे किसी मल्ल योद्धाकी भाँति धीमी-धीमी चालसे दाहिने-बाएँ देखता हुआ नदीकी ओर चला।

इसके पूर्व अभीतक हम लोगोंने केवल इनके तीव्रगतिसे भागनेकी ही चाल देखी थी जो पृथ्वीतलसे पेट-छाती सटी सटी हुई छिपकलीकी भाँति रेंगती हुई होती है। किन्तु यह विचित्र मगर तो अपने पूरे शरीरको लगभग ढाई फुट जमीनमें ऊपर उठाकर चौपायोंके ऐसा केवल चारों पैरोंके ही सहारे झूमता हुआ मस्त चालसे चल रहा था। यहाँ तक की उसकी भारी लम्बी दुम भी जमीनसे कुछ ऊपर ही थी।

यह जानवर भी बहुत ही विशालकाय था जो कुछ नहीं तो बीस-बाइस फुट लम्बा तो अवश्य रहा होगा, और निर्भीक होनेके कारण हम लोगोंके पास आते जानेपर भी उसने अपनी झूमती हुई सिंहकी-सी चालका वेग किंचित्मात्र भी नहीं बढ़ाया। कभी सीधे और कभी हम

लोगोंकी ओर मुड़कर देखता हुआ वह मन्द-मन्द पहलवानी ठाटसे पानीकी ओर बढ़ता चला जाता था।

उसके समीप हमारी नाव पहुँचनेके केवल तीस-चालीस गज ही रह जानेपर वह नदीके निकट पहुँच धीरेसे पानीमें उतर गया। एकबार तो उसने डुब्बी मार ली परन्तु पुनः नावसे कुछ ही दूर पानीकी सतहके ऊपर आ हमलोगोंका निरीक्षण करने लगा।

उस समय बन्दूक न रहनेका मुझे उतना खेद न था जितना कि "कैमरा" न रहनेका हुआ। उसकी वह मत्तगयन्दकी-सी मन्द-मन्द चाल देखने योग्य थी। यदि मैं कहीं उसकी फोटो उतार पाता तो वह सदाके लिये इस युगकी एक अनूठी वस्तु रह जाती। उसे देख ऐसा प्रतीत होता था जैसे पूर्वकालीन कोई विशालकाय व्याल (Dragon) चल रहा हो।

जल्दी-जल्दी हमलोग अपनी-अपनी बन्दूकें तथा "कैमरा" लेने डेरे बापस आये तथा पुनः तुरन्त निकले। परन्तु वह विशाल जन्तु फिर देख न पड़ा। यहाँ कहनेमें आयेगा कि अवसर चूक गये जिसका हम सभी को अत्यन्त खेद रहा। यद्यपि आँसू पोंछनेके लिये हमें दो-तीन दूसरे मगर मिले, किन्तु वह पुनः देख न पड़ा।

(ग) शिक्षा :

नये शिकारीको मगर दिखाना :

गत वर्ष मगरके शिकारमें हमें जैसा आनन्द आया था उसकी स्मृतियाँ अभी भी एकदम वैसी ही ताजी बनी हुई थीं, अतः दूसरे वर्ष भी हेमन्तके प्रारम्भ होते ही मेरी इच्छा पुनः मगर अभियान पर जानेकी हुई, तथा मैंने पुनः भैयाको निमन्त्रण भेजा। उनकी स्वीकृति सहर्ष प्राप्त हो जाने पर १९२३ के दिसम्बरमें मैंने पूर्ववत् मगरके शिकारका

बृहत् आयोजन "बादला-घाट"में किया, और उसी प्रकार उत्साहसे सब प्रबन्धमें लग गया।

परन्तु खेदके साथ लिखना पड़ता है कि अपेक्षाकृत इस बार बहुत कम जानवर मिले जिसके मुख्यत: दो कारण थे। एक तो यह कि वे विशेष रूपसे सतर्क हो चुके थे। दूसरा, इस बार भाई अपने साथ शिकारसे विलकुल ही अनभिज्ञ एक नवच्छात्र Tyro अथवा नवसिखवा अतिथि भी ले आये। जिनको इतना भी बोध नहीं कि किसी भी जंगली जानवरके निकट पहुँचनेके लिए अपने शरीरको बिलकुल ही छिपाकर चलना चाहिये, तथा मुखसे एक शब्द भी नहीं निकालना चाहिए जो दोनों ही बातें बहुधा समझाने पर भी उनके मनमें नहीं ही बैठीं।

फलत: जानवर कम मिलना स्वाभाविक था। किन्तु इस भ्रमणमें हमें अन्य कई प्रकारके नवीन आनन्द प्राप्त हुए, प्रकृतिकी अनुपम शोभा युक्त अन्य कई एक नये स्थान देखे, तथा इसी यात्रामें मगरकी एक मांद भी देखी, जिसके प्रवेश द्वार पर एक मगर भी बैठा हुआ था, जो लोगोंको देखते ही पानीमें कूद गया। इस पर्यटनमें हमें एक नयी शिक्षा भी मिली कि दूसरेको भी किस प्रकार शिकार दिलाना चाहिए। एक नये अनभिज्ञ शिकारीको शिकार दिलानेमें कितना और किस-किस प्रकारका परिश्रम उठाना पड़ा, इस बार मुझे उसका पूर्ण अनुभव प्राप्त हो गया।

हम लोग शिकारके हेतु जब भी जहाँ जाते थे एक पूरा काफला साथ हो जाता था। नये अतिथिको भी साथ रखना नितान्त आवश्यक था। दूरसे जानवरोंकी टोलीको लखकर ग्रामीणोंको तो हम रोक लेते थे, परन्तु अतिथि महोदय तो सदा हमारे साथ ही रहते थे।

थोड़ी दूर तक तो हम लोग धीरे-धीरे बातें करते आगे बढ़ते जाते थे, किन्तु शिकार स्थलके समीप आते ही हम लोगोंको छिपकर चलनेकी

आवश्यकता होती थी। हमारे बहुत समझाने बुझाने पर अतिथि महोदय कुछ थोड़ी दूर तक तो झुक-झुककर व झाड़ियोंकी आड़ लेकर, हम लोगोंका अनुसरण करते चले। परन्तु तुरत ही थककर वे हाँफते हुए सीधे खड़े हो गये, फिर जल्दीसे झाड़ीकी आड़से बाहर निकल कर जोर-जोरसे पूछने लगते थे कि जानवर "कहाँ है कहाँ है।" दूसरे उनका वस्त्र भी राखी रंगका न होनेसे वह दूरसे ही जानवरोंको देख पड जाता था, और तबतक तो सभी जानवर धड़ाधड़ पानीमें कूद पड़ते थे।

जब कई बार ऐसा हुआ तो मैंने भैयाकी ओर रोष भरी दृष्टिसे देखकर परन्तु मौन ही रहकर आगेके लिए आदेश माँगा कि अब क्या करना चाहिए। तत्काल उन्होंने यही आज्ञा दी कि दूसरी जगह चला जाय। पुनः कई मील चक्कर काटनेके उपरान्त नदीके घुमाव पर मगरोंकी एक दूसरी टोली देख पड़ी। परन्तु यहाँ भी वही परिणाम हुआ।

अन्तमें थककर हमलोग सायंकाल अपने डेरेपर लौट आये। मेरे मनमें जो रोष भरा था वह स्वभावतः मैंने भैयापर भी उतारा। परन्तु वे धीर, गम्भीर, शान्त प्रकृतिके पुरुष थे, उन्होंने मुझे सान्त्वना दी तथा दूसरे दिन किस प्रकार क्या-क्या उपाय करना चाहिये जिससे शिकार मिले इस पर कई घण्टे विचारविमर्श भी हुआ।

भैयाका आदेश हुआ कि दूसरे दिन सब लोग पृथक्-पृथक् जाँय और अपने-अपने भाग्यका परीक्षण करें। अतः दूसरे दिन प्रातःकाल चाय जलपानके उपरान्त मैंने शिकारी ग्रामीणोंको बुलवाया और उनसे पूछा कि कहाँ-कहाँ कितने-कितने जानवर हैं। उनसे सब सुननेके बाद भैयाने अतिथि महोदयको आदेश दिया कि जहाँ सबसे अधिक पच्चीस-तीस मगरोंकी टोली पड़ी है, तथा जिधर जानवर मिलनेकी अधिक आशा थी वहीं वह दो अच्छे शिकारियोंको साथ लेकर जायँ तथा

जहाँ १५–२० थे वहाँ मामाजीके साथ भैया स्वयं गये, और जहाँ केवल १०–१२ ही थे वहाँ मुझे भेजा।

मध्याह्नमें हम सब डेरे लौटे। भैया अपने साथ दो जानवर ले आये, मैं भी दो लाया। परन्तु भैयाके अतिथि दो घण्टे पहले ही लौट आये थे। पूछनेपर पता चला कि यद्यपि उन्होंने गोली चलायी, परन्तु जानवर न मिला।

दोपहरके भोजनके बाद पुनः हमलोग उसी प्रकार निकले। परन्तु इस बार अतिथि महोदयने आपत्तिकी कि जहाँ ढेर जानवर हैं वहाँ वे नहीं जायँगे, अपितु जिधर कम थे और जिधर मैं जानेवाला था वे उधर ही जायेंगे। उनका आग्रह सुन भैयाने स्वीकृति दे दी, मैं उनकी ओर गया और वे मेरी ओर गये।

सायंकाल लौटनेपर भैया अपने साथ दो मगर लाये और मैं एक लाया, किन्तु माननीय मेहमान इस समय भी खाली हाथ ही लौटे। उन्हें इसका जो दुःख हुआ सो हुआ ही, परन्तु भैयाको भी इसका बहुत खेद हुआ।

इस बार उन्होंने मुझे आज्ञा दी कि अगले दिन मुझे उनके साथ जाकर चाहे जिस प्रकार भा हो उन्हें उनकी ही राइफलसे एक जानवर तो अवश्य ही दिलवाना होगा। आज्ञा देना एक बात परन्तु उसका पालन करना अति कठिन था। भैयाका आदेश था कि जबतक एक जानवर उन्हें दिला न दूँ तबतक याने दोपहरतक भी मुझे लौटनेकी आवश्यकता नहीं।

अतः प्रातः आवश्यकतासे अधिक जलपानकर और जेबमें मठली, पेड़े इत्यादि भरकर, श्रीरामजीका नाम लेकर, अतिथि महोदय तथा दो पथ प्रदर्शकोंको साथ ले मैं निकल पड़ा।

मार्गभरमें अतिथि महोदयको अपने आपको छिपानेकी कला तथा मौन रहनेका महत्त्व सिखाता जाता था। जहाँ-जहाँ मगरोंकी टोली देख पड़ती, वहाँ मैं उनका हाथ पकड़े-पकड़े बीच-बीचमें उनका कन्धा नीचे दबाते हुए, यथासम्भव उन्हें छिपाते हुए कुछ निकट पहुँचने का प्रयत्न करता। परन्तु जब मैंने देखा कि उन्हें अब और अधिक निकट न ले जा सकूँगा, तो वहीं बैठकर उनसे कहा कि सबसे बड़े मोटे मगरपर निशाना लगायें। परन्तु, उनकी गोली चलते ही सबके सब मगर पानीमें कूद पड़े। पता नहीं उनकी गोली लगी या नहीं। अस्तु, हमलोग पुनः आगे बढ़े। परन्तु दूसरी जगह भी उसी प्रकारकी पुनरावृत्ति हुई। अब मैं बड़े असमंजसमें पड़ा कि अब क्या उपाय किया जाय जिससे कमसे कम एक जानवर तो उन्हें मिल ही जाय।

किन्तु अब मेरा धैर्य भी छूटता जा रहा था। दोपहर हो गयी थी, तीसरे पहरका समय आया, चलते-चलते हमलोग थक भी चले थे। भाग्यवश, एक जगह नदीके उस पार पानीसे पाँच गज दूर स्थलके ऊपर एक मगर देख पड़ा। उस स्थान पर नदी बहुत सकरी थी, और इस पार हमारे छिपने के लिए पर्याप्त झाड़ियाँ भी थीं।

अतः एक अच्छा स्थान देखकर हमलोग बैठे तथा इस बार मैंने उनसे कहा कि उनकी गोली चलते ही मैं भी अपने राइफलसे दोहरानेका प्रयत्न करूँगा, दो-दो गोली साथ लगनेसे जानवरके मिलनेकी सम्भावना भी अधिक हो जायगी।

एवमस्तु, कहकर उन्होंने भलीभाँति निशाना लगाकर गोली चलायी। इधर मैं भी जानवरकी गरदन पर सच्चा निशाना लिये बिलकुल तैयार बैठा था।

उनकी गोली चलते ही तत्क्षण मेरी गोली भी चली। भाग्यसे इस बार हमारा प्रयत्न सफल हुआ और मैं उनको जानवर दिला सका।

मैंने उनकी प्रशंसा की, नाव मँगा कर जानवर को इस पार मँगाया और उसे लेकर प्रसन्न मुद्रामें चार बजते-बजते डेरे लौटे।

इधर भैया तथा मामाजी दो जानवर लेकर आधे घण्टे पहले ही आ चुके थे। हमलोगोंको एक जानवर लाते देख भैया को बहुत प्रसन्नता हुई, और मैंने उन्हें हाथ जोड़ा कि आपकी आज्ञाका यथासम्भव पालन करनेमें मैंने किसी प्रकारकी कोर-कसर न उठा रखी। सब वृत्तान्त सुननेके उपरान्त उन्होंने सब बातें समझ कर मेरी प्रशंसा की। मैंने भी कहा—जान बची लाखों पाये······।

चौथे दिन हमारी छुट्टी समाप्त हो रही थी अतः हमें सायंकाल घर लौटना था, फिर भी एक बार प्रातःकाल निकल कर हमलोग दो-तीन मगर और मार लाये तथा सायं होते-होते सब लोग अपनी-अपनी ट्रेन पकड़ कर घर लौटे।

इसके बाद तो फिर सदाके लिए इस बृहत् रूपमें ससमारोह मगरके शिकारका अन्त ही हो गया। इन दोनों वर्षोंके शिकारमें तथा मगरके चमड़ोंको सिझवाने और बक्स आदि बनवानेमें मेरे दो हजारके ऊपर व्यय हुए थे, अतः पिताजीने कहा कि अब मगरके अतिरिक्त अन्य किसी वन्य पशु का शिकार करना अच्छा होगा।

भालू



लेखक चूनादरी के भालू के साथ [विवरण १९२ पृ०]

भालू

नाम :

भालूको संस्कृतमें ऋक्षः, भल्लः, भल्लकः, भल्लुकः, भालुकः भालूकः, भाल्लुकः अथवा भाल्लूकः कहते हैं। हिन्दीमें कहीं-कहीं इनको "रीछँ" कहते हैं जो संस्कृतके "ऋक्ष" शब्दका अपभ्रंश है और दूसरा नाम भालू है जो स्पष्ट "भालूक" आदिसे निकला है।

ग्रामीण इन्हें "नोंचनी" शब्दसे भी सम्बोधित करते हैं। कारण यह कि है इनके नख बहुत ही लम्बे होते हैं जिससे ये लोगोंको बहुत बुरी तरहसे नोंच भी लेते हैं।

विभिन्न प्रकार तथा अंग्रेजी नाम :

साधारणतया अपने देशके भालूको Sloth Bear और हिमांचल प्रदेशके भालूको Himalayan Bear कहते हैं! ध्रुव प्रदेशोंमें Polar Bear होता है। अमेरिकामें Grizzly Bear तगा Alaskan Bear होते हैं। पाकिस्तानके उत्तरी-पश्चिमी स्थान वजीरिस्तानमें एक प्रकारका विशालकाय लाल भालू होता है। "मलय" आदि देशोंमें काले भालू होते है।

१. भारतवर्षके भालू :

आकार :

अपने देशके भालू काले होते हैं। इनका सम्पूर्ण अंग लम्बे-लम्बे काले बालोंसे ढका रहता है। ये लगभग ३०" से ३६" तक ऊँचे और ४ फुटसे ६ फुट तक लम्बे होते हैं।

वजन :

तौलमें ये ढाई मनसे पांच मन तकके होते हैं।

हिमालयके भालू :

हिमांचल प्रदेशके भालुओंके बाल छोटे और चिकने होते हैं और इनका आकार शेष भारतवर्षके उष्ण प्रदेशके भालुओंकी अपेक्षा बृहत् होता है।

वक्षःस्थलपर चिह्न :

प्रायः सभी भालुओंके वक्षःस्थल पर एक प्रकारका श्वेत अर्द्ध चन्द्राकार चिह्न होता है।

पदतलमें बाल नहीं :

वृक्षोंपर चढ़नेवाले तथा अन्य साधारण भालुओंके पद-तलमें बाल नहीं होते। अतएव ये वृक्षको दृढ़तासे पकड़ सकते हैं। इनके तलवों में बाल न रहनेसे न वृक्षपर और न पृथ्वीपर ही फिसलनेकी आशंका रहती।

मनुष्यके समान पदचिह्न :

इनके पद-चिन्ह मनुष्योंके पद चिह्नोंके सदृश ही पृथ्वी पर चिपटे रहते हैं।

सभी भालुओंका माथा बड़ा होता है। आँखें गोल-गोल व छोटी होती हैं। कान भी गोल होते हैं। इनका मुख पतला और लम्बा होता है। अन्य पशुओंकी भाँति इनके ओठोंके साथ मसूड़े नहीं लगे रहते। इनके मुखके बीचवाले दो दांत भी नहीं होते और तालू भी गोल होते हैं।

इन्हीं सब कारणोंसे ये बिलोंके अन्दर मुख करके जोरसे श्वास खींच सकते हैं, जिससे पृथ्वीके अन्दरके दीमक आदि सीधे इनके मुखमें प्रविष्ट हो जाते हैं।



भाई श्री अमरनाथ जी　　　　लेखक　　　　छोटे चाचा जी

नख :

इनके नख लगभग चार इंच लम्बे होते हैं। परन्तु व्याघ्रके नखोंके सदृश भीतर नहीं घुसते। अतः इनकी नोंक घिसकर मन्द पड़ जाती है। तथापि इन्हीं नखोंसे ये मनुष्योंपर गहरा घाव कर सकते हैं तथा सुदृढ़ तो इतने होते हैं कि दीमकोंको पानेके लिये कड़ीसे कड़ी धरती खोद डालते हैं जिन्हें ये बड़े चावसे खाते हैं।

आहार :

प्रायः ये निरामिष भोजी होते हैं। महुआ, बेर इत्यादि सब प्रकारके कन्द, मूल, फल तथा घासों और औषधियोंकी जड़ ही इनका आहार है। मधु इनको अत्यन्त प्रिय है, उसे पानेके लिए ये वृक्षपर चढ़कर इनके छत्ते तोड़ लेते हैं, और जब मधुमक्खियाँ इनको घेर लेती हैं, तो ये अपने नाक और मुखको अपने हाथोंसे ढक लेते हैं। अतः उन लम्बे और घने बालोंके कारण मधुमक्खियाँ इनको डँश नहीं सकतीं। वसन्त ऋतुके अन्त और ग्रीष्मके आरम्भमें जब महुआ पक कर टपकने लगता है तो अरुणोदयके पूर्व ही अथवा रात्रिमें भी उन वृक्षोंके नीचे पहुँचकर ये बड़े प्रेमसे महुआ खाते हैं।

स्वभाव :

ग्रामीणजन व्याघ्रोंकी अपेक्षा इन भालुओंसे अधिक भयभीत रहते हैं। वृक्षपर चढ़कर ये व्याघ्रसे तो बच भी सकते हैं, परन्तु भालू वृक्ष पर भी आसानीसे चढ़ जाते हैं।

भालुओंका वृक्षसे उतरनेका ढंग बड़ा ही विचित्र है। अन्य पशुओंकी भाँति ये मुख नीचे करके नहीं उतरते, अपितु, मुख ऊपरकी ओर किये हुए ही नीचे उतरते हैं।

कुछ लोगोंका कहना है कि ये अनायास ही आक्रमण कर देते हैं। मैंने भी सुना है कि ये अकेले आते जाते किसी भी व्यक्तिका पीछा

करते हैं। परन्तु इसके विपरीत कुछ शिकारियोंका कथन यह भी है कि सहसा जब कभी इनका सामना हो जाता है तो भयके कारण ही ये आक्रमण कर देते हैं। किन्तु यदि मनुष्य पहलेसे ही कुछ दूरसे उनसे बचकर एक ओर हट जानेका प्रयत्न करें तो वे भी अपने मार्ग पर चले जायँगे। यह बात हिंसक पशुओं जैसे व्याघ्र आदिके लिए भी लागू है।

जब इन भालुओंका पीछा किया जाता है तो कभी-कभी ये बड़ी बुद्धिमानी और चतुरतासे घूमकर निकटकी झाड़ियोंमें छिप जाते हैं, तथा पीछा करनेवाला व्यक्ति जब उधरसे निकलता है तो ये सहसा उसके ऊपर आक्रमण कर उसे बुरी तरहसे घायल कर देते हैं।

यदि मादीने अपने बच्चोंके साथ हों तो उस समय इनसे सावधान रहना चाहिए। क्योंकि ये बच्चोंके रक्षणार्थ अनायास ही आक्रमण कर बैठेंगी। यह बात बाघिनके लिए भी लागू है।

कुछ लोगोंका कहना है कि भालू लिपटकर अथवा आलिंगन करके मार डालता है, परन्तु यह प्रायः मिथ्या है। यह अवश्य है कि ये पिछले पैर पर खड़े होकर आक्रमण करते हैं, और इस प्रकार हाथोंसे प्रहार करते हैं कि आलिंगनका भ्रम हो जाता है।

इनकी घ्राणशक्ति भी बहुत तीव्र होती है, किन्तु इनकी दृष्टि व श्रवण शक्ति अति क्षीण होती है, तथापि प्रत्येक अवस्थामें इनसे दूर ही रहना अपेक्षित है।

२. पश्चिमी अमेरिकाका मांसाहारी (Grizzly) ग्रिजली भालू :

पश्चिमी अमेरिकाके पहाड़ी प्रदेश (Rocky Mountains) में Crizzly "ग्रिजली" नामका एक प्रकारका भालू होता है। भारतवर्षके भालूकी अपेक्षा ये बहुत बड़े, भारी तथा बलिष्ठ होते हैं। ये वहाँके बड़े-बड़े बलवान् वन्य महिषोंको मार गिराते हैं और खा जाते हैं। वहाँकी नदियोंकी विगलित मत्स्योंकी राशिको भी ये अधिक मात्रामें खा जाते

हैं। इनका स्वभाव अति क्रूर और दुष्ट होता है तथा ये अनायास ही मनुष्यों पर आक्रमण कर बैठते है।

३. अलास्का (Alaska) का भूरा भालू :

अमेरिकाके ही सुदूर उत्तर-पश्चिम प्रदेश "अलास्का"में एक दूसरे प्रकारका बहुत ही बृहत् भूरा भालू होता है। इसके किसी-किसी नरकी लम्बाई नौ फुट तककी पायी गयी है, तथा उनका वजन लगभग अठारह मनतक सुननेमें आया है। परन्तु इनकी प्रकृति क्रूर नहीं होती, और न मनुष्यपर अनायास ही आक्रमण करते हैं, प्रत्युत उनके आगमनपर स्वयं हट जाते हैं।

४. उत्तरी ध्रुव प्रदेशका मांसाहारी Polar Bear "पोलर" भालू :

एक पृथक् जातिका मांसाहारी भालू उत्तरी ध्रुव प्रदेशोंमें पाया जाता है, जहाँ पृथ्वी सदा हिमाच्छादित रहती है। इसीलिए अंग्रेजीमें उसका नाम Polar Bear "पोलर-बियर" ("पोलर" अर्थात् ध्रुव देशका भालू) है।

इनके भी बाल बहुत लम्बे-लम्बे परन्तु एकदम श्वेत वर्णके होते हैं। उस हिमाच्छादित धवल रंग धरतीमें इनका शुभ्र वर्ण विलीन हो जानेसे ये सहसा दृष्टिगोचर नहीं होते।

इनके पद-तलोंमें भी बाल रहनेके कारण उस पिच्छिल हिमपर भी इनके पैर नहीं फिसलते।

अन्य भालुओंकी अपेक्षा ये अधिक बृहदाकार तथा वजनी होते हैं। इनका भार लगभग बारह मन तकका होता है।

आहार :

उन ध्रुव प्रदेशोंमें दो प्रकारके बड़े-बड़े मत्स्य अथवा जन्तु होते हैं। एक को Seal (सील) दूसरेको Walrus (वालरस) कहते हैं। "वालरस"को हिन्दीमें "समुद्री सिंह" भी कहते हैं, जो अंग्रेजी Sea-

Lion (सी-लायन) का अनुवाद है। ये दोनों प्रकारकी मछलियाँ अथवा जन्तु ही इनका मुख्य आहार है। अधिक तुषार पड़ने पर जब उत्तरी ध्रुव समुद्रका पानी हल्का जम जाता है; तो ये अपने बलिष्ठ हाथों द्वारा ऊपरी सतहका जमा हुआ हिम तोड़कर, उसमें फँसी जमी हुई मछलियोंको निकालकर उनके आहारसे अपना जीवनयापन करते हैं।

यदाकदा मनुष्योंपर भी ये आक्रमण कर देते हैं।

५. वजीरिस्तानके भालू :

पांचवें प्रकारके भालू पाकिस्तानके उत्तर-पश्चिम प्रदेश वजीरिस्तान आदि अथवा मध्य एशियाके हिमाच्छादित ऊँचे स्थानोंमें पाये जाते हैं। ये लाल कत्थई रंगके होते हैं। इनकी भी काया बहुत ही विशाल होती है।

योगनिद्रा अथवा परिशयन Hibernation :

हेमन्त ऋतुमें इन हिमाच्छादित प्रदेशोंके भालुओंको हिमके कारण जब भोजनका कोई साधन नहीं रह जाता तो ये चहुँ ओरसे तुषार मण्डित किसी गिरि गह्वर या कन्दरामें प्रवेशकर गाढ़ हैमन्तिक निद्रामें लगभग चार मासके लिये परिशयन कर जाते हैं। इस परिशयनकी तुलना हम योगनिद्रासे कर सकते हैं। उस समय इनकी श्वासोंका आना-जाना, हृदयका स्पन्दन, धमनियोंमें रक्त संचार आदि सब अति मन्द तथा एक प्रकारसे अवरुद्ध ही हो जाता है। वसन्तके आगमनपर ये पुनः जागते हैं।

इसी प्रकार हिमालय प्रदेशके भी अन्य हिमाच्छादित स्थानोंमें रहनेवाले कोई-कोई काले भालू भी हैमन्तिक निद्रामें सो जाते हैं। परन्तु अधिकतर ये इन दिनों कुछ नीचे पर्वतोंपर उतर आते हैं जहाँ तुषार नहीं पड़ता। यहाँ इनको पर्याप्त भोजन मिल जानेसे ये परिशयन नहीं करते।

अन्य स्थानोंमें भी जैसे चीन, आसाम, वर्मा, लंका, मलया आदिमें भी परन्तु कुछ-कुछ भिन्न प्रकारके भालू पाये जाते हैं।

भलदरियाके भालू :

सन् १९२५ के "ईस्टर" की छुट्टियोंके पूर्व एक दिन मैं मामाजी तथा अपने फुफेरे भाई श्री अमरनाथके साथ बैठा हुआ परस्पर विचार-विमर्श कर रहा था कि यह आगामी छुट्टियाँ कहाँ तथा किस प्रकार व्यतीत की जायँ।

मामाजीने "डोंगिया" चलनेका प्रस्ताव किया जो "अहरौरा" ग्रामसे लगभग ११ मील आगे दक्षिण दिशामें विन्ध्य पर्वतके पठार पर स्थित है। उन्होंने कहा कि "डोंगिया" एक अत्यन्त सुन्दर तथा रमणीक पर्वतीय स्थान है, जहाँ नहर विभागका एक छोटा-सा सुन्दर बंगला है। बंगलेके सामने एक विशाल जलाशय भी है, जिसका निर्माण "गरई" नदीको बाँधकर किया गया है। वहाँ अर्जुन, तेंद, महुआ, चिरौंजी, झरबेर आदि अनेकों वृक्षोंसे पूर्ण घना जंगल है, जिसमें शेर-चीते, भालू, शूकर, सांभर घोड़रोज, चिकारे इत्यादि विविध वन्य पशु प्रचुर मात्रामें हैं। अतः आखेट तथा वनविहरणके लिए भी वह एक बहुत ही सुन्दर तथा उपयुक्त स्थान है।

आखेट तथा प्रकृतिके प्रेमी मामाजीके मुखसे "डोंगिया"का ऐसा लुभावना वर्णन सुनकर तत्क्षण हम लोगोंने वहीं जानेका निश्चय किया।

उस समय मोटरका युग न था। बहुत कठिनाईसे केवल अहरौरासे ही एक्के आते जाते थे। रामनगरसे अहरौरा ग्राम लगभग अठारह मील हैं। अतः वहाँसे कुल तीस मील जानेका प्रबन्ध करता था।

भाई अमरनाथके पास एक छोटा-सा टाँगा था जिसमें एक छोटा नेपाली टट्टू जुतता था। अतः निश्चय यही हुआ कि इसी टांगेसे डोंगिया चला जाय, तथा उनके एक सहकारीको भी साथ ले चला जाय।

इस प्रकार यात्रा निश्चित हो जानेपर उसी संध्याको ही तत्सम्बन्धी सम्पूर्ण प्रबन्ध कर हम लोगोंने रात्रि रामनगरके किलेमें ही व्यतीत की, तथा प्रातःकाल चार बजे ही उठकर हम चारों व्यक्ति टांगेपर बैठ हरि-स्मरणकर डोंगियाके लिए चल पड़े।

मार्गका क्या वर्णन करूँ? कहनेको तो रामनगरसे अहरौरा तक सड़क पक्की है, परन्तु उस समय कच्चीसे भी अधिक खराब थी। कहीं-कहीं तो इतने बड़े गड्ढे थे कि यदि सँभालकर बहुत धीरे गाड़ी न चलायी जाय तो कमानी तक टूटनेका भय था। ऐसे विकट मार्ग पर बेचारे हम टांगारोहियोंकी क्या अवस्था रही होगी, यह तो भुक्तभोगी ही समझ सकते हैं। इस ऊबड़-खाबड़ रास्तेके कारण धक्के लगते-लगते हमारी पीठ और कमरके तो कचूमर निकल गये। प्रातः ४ बजेके चले-चले लगभग एक बजे दिनमें हम लोग अहरौरा किसी प्रकार पहुँच सके।

दिनका भोजन हमने वहीं अपने एक जमींदार मित्रके यहाँ किया, तथा पुनः परामर्शके बाद यह निश्चय हुआ कि यहाँ कुछ विश्राम कर लेनेके उपरान्त अपराह्नमें ही अहरौरासे पुनः यात्रा आरम्भ कर देना चाहिए। अन्यथा यदि वह रात्रि आरामके ध्यानसे वहीं बिता देते हैं तो पूरे एक दिनका समय व्यर्थ ही चला जाता है।

डोंगिया, अहरौरासे लगभग ग्यारह मील है। यह रास्ता कच्चा होने पर भी पक्केसे अच्छा है। यद्यपि, उस समय यह भी कुछ बिगड़ गया था। परन्तु सुननेमें आया है कि "रेहन्द" नदीको बाँधनेकी जो एक बड़ी योजना भारत सरकारने की है, उसके कारण बनारससे अहरौरा तथा अहरौरासे राबर्ट्सगंज तककी सड़कें नये सिलसिलेसे बनी हैं।

अहरौरासे हमलोग चार मील गये होंगे कि "घोड़रोजों"का एक झुण्ड हमने दूरसे आते देखा। इनको किस प्रकार मारा यह "हरिन" व "घोड़रोज"के प्रकरणमें (पृ० ४५ पर) उल्लेख किया गया है।

थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर पहाड़ीके नीचे "छातो" नामक एक ग्राम है। यहाँसे पूरे सवा मीलकी घाटीकी चढ़ाई है, जिसे "सुकुत पास" कहते हैं। जैसे-जैसे हम ऊपर चढ़ते जाते थे नीचे चारों ओर हरे-भरे खेत, ऊबड़-खाबड़ हरित पौधोंसे पूर्ण पहाड़ी धरातल, उनके बीच घूमती हुई "गरई" नदी तथा आमने-सामने बिन्ध्याचलकी पहाड़ोका मनोहर दृश्य अत्यन्त रमणीक लग रहा था। ऊपर पहुँचकर थोड़ी देर रुककर हम उस अनुपम प्राकृतिक सुषमाका अवलोकन करने लगे। इतनी देरमें घोड़ेको भी विश्राम लेनेका अवसर मिल गया।

वहाँसे डोंगियाके लिये पूरे चार मील जंगलके बीचका मार्ग है जो जंगलके ही मध्यसे बनाया गया है। अतएव उसके दोनों ओर घने जंगल हैं। पहाड़ी मार्ग होनेके कारण कभी ऊपर कभी नीचे जाना पडता था। परन्तु घोड़ा अब बिलकुल थक चला था। अतः हमलोग सभी टांगेसे उतरकर उसके साथ-साथ पैदल ही चले। बीच बीचमें जहाँ कहीं चढ़ाई मिलती थी वहाँ हम अपने कन्धे लगाकर घोड़ेकी सहायता करते जाते थे।

चलते-चलते रात हो गयी, परन्तु उस अपरिचित जंगलमें रुकनेका किसीको साहस न हुआ। घोड़ेको खींचनेमें और टांगेको ढकेलनेमें हमें काफी परिश्रम पड़ रहा था और हम लोग क्लान्त भी हो चले थे। तथापि परस्पर धैर्य बंधाते उत्साहित करते आगे बढ़ते गये।

लगभग नौ बजे रात्रिमें एक अन्तिम बड़ी ढाल चढ़नी पड़ी, जिसके ऊपर पहुँचने पर हमें सामने ही नहरका बंगला देख पड़ा। अन्ततः अपनी यात्राकी अन्तिम मंजिल देख हमने सन्तोषकी सांस ली।

पास पहुँचकर बंगला, सामने जलाशय तथा उसके चारों ओर घने जंगलका मनोरम दृश्य देखते ही हमारा सारा श्रम दूर हो गया।

बंगला एक टीलेके ऊपर बना हुआ है। उसके सामने "गरई" नदीका बाँध है, जो पूरा एक मील लम्बा है। बाँधके एक ओर झील

तथा दूसरी ओर घना जंगल है। बाँधके बीचमें एक स्थानपर जल-द्वार है, जिससे आवश्यकतानुसार कृषिके हेतु जल दिया जाता है, जो एक सुन्दर जल-प्रपातका रूप धारणकर, उसी घने वनके मध्यसे अहरौरा आदि दूर स्थानोंतक चला जाता है।

यह दृश्य किसी भी प्रकृति-प्रेमीको लुभा देनेवाला है। ऐसा सुन्दर स्थान मैंने कभी नहीं देखा था जहाँ प्राकृतिक सौन्दर्यके साथ-साथ हर प्रकारके वन्य पशु भी देख पड़ते हैं।

बंगलेसे थोड़ी दूर लगभग चार सौ गज नीचे अहरौराकी ओर एक स्रोत बहता है जिसे हमलोग "चूआ" कहते हैं, कारण वहाँ नदीका जल पत्थरोंके बीचसे थोड़ा-थोड़ा सदा निकलता रहता है। यह जल नदी अथवा जलाशयके जलसे बहुत स्वच्छ और निर्मल है। हमलोग भोजन बनानेके लिए अथवा पीनेके लिए इसी जलका प्रयोग करते हैं।

पहले इस स्थानमें महुआ आदिके बड़े-बड़े वृक्ष थे। परन्तु एक साल बहुत ही बड़ी बाढ़ने प्रायः सभी वृक्षोंकी उखाड़कर फेंक दिया। यहाँ तककी बड़ी-बड़ी चट्टानोंको भी गेंद ऐसा दूर उछाल दिया। फलतः अब वहाँ कोई छाया नहीं रह गयी है।

इस स्थानके कुछ और नीचे "कटलही" नामक एक अत्यन्त सुन्दर स्थान है। वहाँ एक छोटा-सा जल-प्रपात भी है और ठीक उसीके आगे एक प्राकृतिक कुण्ड बना है, जिसमें हमलोग बड़े आनन्दसे स्नान करते तथा तैरते भी थे। आखेटकी खोजमें भ्रमण करते-करते यह स्थान दिखायी पड़ गया। फिर क्या था, हमलोग वहीं रुक गये तथा स्नानके उपरान्त वहीं भोजन बनाया और दिनभर वहीं विश्रामकर तीसरे पहर शिकारकी खोजमें पुनः निकले।

दूसरी यात्रामें उसी स्थानके पास ही मैंने दो तेंदुए मारे जिनका वर्णन चीतेके प्रकरणमें आयेगा। डोंगियामें ऐसे-ऐसे अनेकों सुन्दर स्थान है, जहाँ शेर, चीता, भालू आदि कुछ दिनोंके लिए रह जाते हैं।

वे सभी मनोरम स्थान इसी पर्यटनमें देख पड़े, जबकि दूसरे दिनसे प्रातः वहाँके दो कोल शिकारी सुन्दर और उसके चाचाको बुला उनके साथ-साथ जंगलोंमें प्रतिदिन आठ-आठ, दस-दस मील आखेट हेतु भ्रमण करना आरम्भ कर दिया। इस प्रकारके शिकारको, 'फालसे''का शिकार कहते ।

उन जंगलोंमें हमलोग तीन दिनतक निरन्तर घूमते रहे और पचीसों मीलके चक्कर लगाये होंगे, परन्तु एक भी पशु हमारे हाथ न लगा। यद्यपि सांभर, चिंकारे प्रतिदिन देख पड़ते थे, परन्तु झाड़ियोंमें छिपे रहनेके कारण वे तो हम लोगोंको पहले ही देख लेते थे और जब वे दूर से ही भागने लगते थे तब हम लोग देख पाते थे। फलतः हमलोग उनपर गोली चला ही न पाते थे।

उस समय हमलोग आखेटसे अनभिज्ञ भी थे। जैसे नवच्छात्र (Tyro) कुछ जानता नहीं और अनेक गलतियाँ कर बैठता है, उसी प्रकार हमीं लोगोंकी भूलोंसे जानवरको हमारी आहट पहले ही लग जाती थी। छिपे हुए जाना या धीरे-धीरे एक ओरसे जाना अथवा हवाका रुख देखकर जाना इत्यादि हम कुछ नहीं जानते थे। हाँ; मादी व बच्चे अवश्य निकट देख पड़ जाते थे। क्योंकि ये कौतूहल-वश खड़े रह जाते थे, और इनपर हमलोग गोली चलाते हो नहीं थे। जब हम लोग अति निकट आते थे तभी ये भागते थे। इस पर रामायणकी एक चौपाई याद आ गयी जो श्री रामचन्द्रजी स्वयं अपने मुखारविन्दसे श्री लक्ष्मणजीसे कहते है :—

हमहिं देखि भृग-निकर पराहीं। मृगी कहहिं तुम्ह कहं भय नाहीं।
तुम्ह आनन्द करहु मृग जाए। कंचन-मृग खोजन ये आए॥
(अरण्यकाण्ड)

इन मादीन व मृग-शावकोंको न मारनेसे दोनों शिकारी हमलोगोंपर

कुछ रुष्ट भी हो जाते थे कारण उनको अपने भोजन की चिन्ता थी उनके लिये ये बहुत ही स्वादु होते हैं।

डोंगियामें एक स्थान भलदरियाके नामसे प्रसिद्ध है "यथा नाम तथा गुणः"। यह एक "दरी" है, जिसमें झरनेसे कुछ जल सदा गिरता रहता है और नीचे घना जंगल भी है। उस पहाड़ीके कन्दराओंमें सदा ठण्डक बनी रहती है, विशेष कर उन अपनी ओरकी कन्दराओंमें जिनमें पश्चिमका सूर्य नहीं पड़ता। इनमें भालू ही प्रायः रहते हैं। अतः वहाँके लोगोंने उसका नाम भलदरिया रख दिया है। परन्तु जब वहाँ कोयलेकी भट्ठी लगने लगती है तब वहाँसे जानवर तितर-बितर हो जाते हैं। अन्यथा जब आदमियोंका आना-जाना कम रहता है तब उनमें जानवर प्रायः टिके रह जाते हैं। उन गुफाओंमें कभी-कभी चीते व शेर भी देखे गये हैं।

प्रातःकाल शिकारियोंने इन्हीं मादोंमें भालुओंको जाते देखा था। उन शिकारियोंको पूर्ण भरोसा था कि भालू अपने स्वभावके कारण उन मादोंमें दिन भर अवश्य पड़े रहेंगे तथा सायंकाल वे उनमें-से बाहर निकलेंगे ही।

यह सुन हमलोग बड़े प्रसन्न हुए तथा जल्दी-जल्दी दिनका भोजन कर अपराह्नमें दो ही बजे भलदरियाके लिए चल पड़े। लगभग पाँच मील जाना था, पहुँचनेमें काफी समय लग जायगा अतः जल्दी चले।

साढ़े चार मील जानेके उपरान्त अपनी सवारी टांगेको सड़कके किनारे थोड़ा जंगलके भीतर एक ओर छोड़ हमलोग भलदरियाकी ओरके जंगलमें पैदल चले। लगभग चार फर्लाङ्ग जानेके बाद हमलोग दरीके ऊपर पहुँच गये।

यह स्थान भी बहुत मनोरम है। ऊपरसे नीचेकी ओरका कुछ मीलोंका दृश्य अत्यन्त चित्ताकर्षक है। यह स्थान ठीक छातो गाँवके ऊपर है। हमलोगोंसे थोड़ी दूरपर एक छोटा झरना गिरता है जो एक

पतली धारा बन कर बह रहा था। उसके दोनों ओर काफी घना जंगल है तथा अपनी ओरके पहाड़में कई मांद हैं।

हमारे शिकारीने एक समझा हुआ स्थान चुन कर हमें एक चट्टानके ऊपर बिठा दिया। यह चट्टान भालूकी मांदके ठीक ऊपर थी तथा उसके बगल हीसे जानवरके आने-जानेका मार्ग भी था। बैठनेको तो हम बैठ गये, किन्तु भय बना था कि कहीं उस मार्गसे भालू अचानक निकल न आये। इस कारण निरन्तर उधर भी ध्यान रखते थे। उस चट्टान परसे नीचेकी ओर भी काफी स्पष्ट देख पड़ता था। मैंने अपने साथियोंको चेतावनी दे दी थी कि जब तक जानवर मांदसे लगभग पच्चीस गज दूर न चला जावे तब तक उसपर कोई गोली न चलावे, अन्यथा यदि वह केवल घायल हुआ तो लौट कर सीधे मांदमें चला जायगा।

हमलोग जल्दी पहुँच गये थे अतः हमें पूरे दो घण्टे चुपचाप बैठना पड़ा जो बड़ी कठिनाईसे बीते। कारण दिनभरकी धूपसे चट्टान एकदम तप कर लाल हो गयी थी। साथमें दरी रहते हुए भी उतने गरम पत्थरपर चुपचाप बैठना अत्यन्त कठिन था, ऊपरसे अपराह्नका सूर्य होते हुए भी ग्रीष्मऋतु होनेके कारण काफी तप्त कर रहा था। परन्तु वहाँके सुन्दर दृश्य तथा भालू मिलनेकी आशामें हमलोग सब कष्ट सहर्ष सहन करते हुए शान्त बैठे थे।

हमें इस प्रकार बैठे-बैठे काफी समय व्यतीत हो गया तथा सूर्य अस्त हो चले और जानवरका कुछ भी पता न लगा तो निराशा होने लगी। शिकारीकी ओर देखकर हमने निराशाका भाव प्रकट किया। परन्तु उसने ढाढ़स दिया और संकेत द्वारा कहा कि थोड़ी देर और प्रतीक्षा करिये।

इतनेमें कुछ सरसराहटका शब्द सुनकर जो नीचे दृष्टि दी तो एक काला-सा भारी भालू जमीन सूँघता हुआ देख पड़ा। वह मांदसे

तुरन्त निकला था तथा चींटे, दीमक आदि खानेके चक्करमें घूम रहा था और ऐसा प्रतीत होता था कि पानीकी ओर चला जा रहा है।

जिस चट्टानके ऊपर हमलोग बैठे थे वह बाहरकी ओर निकली थी, और जानवर ठीक उसीके नीचे होनेके कारण मुझे बन्दूक चलानेमें अत्यन्त कठिनाई हो रही थी। उधर शिकारी घबड़ा रहा था कि मैं मार क्यों नहीं रहा हूँ। उसे मेरी यह कठिनाई समझ हीमें नहीं आ रही थी। जानवर देखकर हमलोग भी उन्मत्त हो रहे थे, फिर भी जैसे-तैसे अपनेको संभालकर चट्टान पर एकदम खड़े होकर जैसे ही भालू झाड़ियोंमें-से देख पड़ा, तुरन्त सीधे नीचेकी ओर निशाना लगाकर गोली चला दी। मेरी गोली चलते ही मामाजीने भी अपनी दुनाली चलाई। फलतः दोनों गोलीके धक्केसे ढालुआँ जमीन होनेके कारण वह वहीं उलट गया तथा लुढ़कता हुआ पहाड़ीके नीचे चला।

उसकी आवाज सुनकर उसका दूसरा साथी भी खाँव-खाँव करता हुआ मांदके बाहर निकला तथा दौड़कर चारों ओर देखने लगा। उन झाड़ियोंमें उसके इधर-उधर दौड़नेके कारण मैं निशाना जल्दी लगा न पाता था। दूसरे, जैसा ऊपर कह आया हूँ कि ऊपरसे एकदम नीचेकी ओर निशाना लेनेमें अति कठिनाई होनेसे शीघ्रता नहीं कर सकता था। उसे मारनेमें बिलम्ब होते देख तथा इस भयसे कि कहीं जानवर भाग न जाय अथवा ऊपर न चढ़ आवे शिकारी हम लोगोंके ऊपर बड़बड़ाने लगे।

फिर भी उनके कहनेका ध्यान न दे मैं जानवर पर निशाना लगानेका प्रयत्न करता रहा। जैसे ही अवसर मिला कि मैंने फौरन राइफल चलाई। गोली ठीक उसकी गरदन पर लगी तथा वह दूसरा भालू भी ढुलकता हुआ नीचेकी ओर चला। देखते-देखते दोनों जानवर आँखोंसे ओट हो गये।

थोड़ी देरतक हम लोगोंने और प्रतीक्षा की कि सम्भवतः कोई तीसरा जानवर भी हो तो निकल आवे, क्योंकि शिकारीने तीन भालू बतलाये थे। परन्तु पन्द्रह मिनट चुप बैठने पर भी जब कोई जानवर देख न पड़ा तो हमलोग उन दोनोंको लेने हेतु नीचे उतरनेका विचार-विमर्श करने लगे।

सूर्यास्त हो चुका था, अंधेराभी हो चला था, मामाजीने उतरनेकी सहमति न दी जो बिलकुल उचित थी। एक तो यदि उन दोनोंमें-से कोई भी जीवित हो तो अवसर पाकर हम पर चोट कर बैठेंगे, दूसरे हमलोग अन्धेरेके कारण तथा ऊबड़-खाबड़ जमीनके कारण उनको मारभी नहीं सकेंगे। तीसरे यदि कोई अन्य जानवर उन किसी मांदोंमें से सहसा निकल कर हमपर हमला कर दे तो इन परिस्थितियोंमें हमलोग अपनी रक्षा भी नहीं कर सकते थे।

परन्तु उस समय हमलोग उत्साहसे भरे थे, दूसरे युवावस्था थी, तीसरे नवच्छात्र Tyro होनेसे उपर्युक्त बातोंसे अनभिज्ञभी थे। अतएव बिलकुल निर्भय होकर उतरना आरम्भ कर दिया।

कुछ ही दूर उतरे होंगे कि हमें एक मांद मिली। कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि इसमें कोई जानवर है। परन्तु वहां ठहरना उचित न समझ हम नीचेकी ओर उतरते चले तथा उस मांदके पास पहुँचे जिसमें-से ये दोनों भालू निकले थे।

हम जैसे ही वहाँ पहुंचे कि मांदके भीतरसे खुर-खुरकी आवाज आने लगी। एकबार तो हम लोग सहम गये। सोचा कि हो न हो तीसरा जानवर इसीमें है और अब हम पर आक्रमण करेगा, परन्तु शिकारीने तुरन्त ही बताया कि इसमें उनके दो बच्चे हैं। फिर क्या था, यह सुनते ही हमें अब उनको पकड़नेकी धुन लगी।

अत. बिना कुछ आगा-पीछा विचार किये ही मैं सीधे मांदमें प्रवेश

कर गया। परन्तु उन दोनों बच्चोंने मुझे मार भगाया। वे लगभग तीन महीनेके लगते थे। उनमें एक काफी बड़ा था, तथा दूसरा १४-१५ इञ्च ऊँचा रहा होगा। परन्तु देखनेमें वे भयानक और काफी बली लगते थे। फिर भी मैं निडर होकर, कोट उतार कर तथा अपनी बन्दूक दूसरेको पकड़ाकर पुनः मांदमें घुसा। इस बार छोटे बच्चेको पकड़नेका पूरा प्रयत्न किया। बड़ेको तो मैंने मार भगाया, तथा वह मांदमें इधर-उधर घूमने लगा, किन्तु छोटेने अपनी शक्ति पर मुझको नोचनेका पूरा प्रयत्न किया जिसमें थोड़ा बहुत वह सफल भी हुआ। परन्तु जब-जब मैं उसको चाँपकर उसके ऊपर बैठता था वह मुझे गेंद ऐसा फेंक देता था। इस प्रकार पूरे १५-२० मिनट तक हमलोगोंकी कुश्ती होती रही, तब कहीं वह मेरी पकड़में आया। बड़ी-बड़ी कठिनाइयोंसे हमलोगोंने अपने-अपने कोट-कमीज इत्यादिसे बाँधकर उसको किसी प्रकार बाहर निकाला। इतनेमें दूसरा बड़ा बच्चा अवसर पाकर बाहर निकल भागा। हमलोगोंने उसे जाने दिया और छोटे बच्चेको हाथ-पांव कसकर बाँधा कि बड़े-बड़े नखोंसे वह हमें नोंच न पावे।

इस भालु-कुमारको पकड़नेमें हमें आधा घण्टा लग गया और इतनेमें एकदम अन्धकार हो गया। अतः अब अधिक आगे बढ़ना बुद्धिमानी न समझकर हमलोग लौट पड़े। किन्तु रास्ते भर यह डर बना था कि बच्चेकी आवाज सुनकर दूसरे भालू उसको बचानेके हेतु हमलोगोंके ऊपर कहीं आक्रमण न कर दें। बन्दरोंमें तो यह प्रायः देखा गया है कि यदि कोई उनके बच्चे पकड़ ले तो वे सबके सब झुण्ड बाँधकर एक साथ हमला कर देते हैं। परन्तु इस प्रकारकी कोई घटना घटित हुए बिना ही हमलोग सकुशल रात्रिमें नौ बजे तक बँगले लौट आये तथा उस बच्चेको बँधा बँधाया ही एक कोठरीमें बन्द कर दिया। किन्तु बन्द करनेके पहले उसे लोहेकी एक पतली सिकड़ीसे भी बाँध दिया कि यदि हाथ पाँवकी रस्सी खुल भी जाय तो भी वह बिलकुल ही खुला न रह जाय अन्यथा उसे पुनः पकड़नेमें अत्यन्त कठिनाई होगी।

दूसरे दिन प्रातःकाल ही उत्सुकताके कारण भाई अमरनाथ हम-लोगोंको छोड़ भालूके बच्चेको देखनेके लिए अकेले ही भागे गये! उन्होंने समझा कि वह बेचारा बँधा पड़ा होगा। परन्तु, जैसे ही उन्होंने किवाड़की साँकल खोली कि खाँव-खाँव करता हुआ वह बच्चा बन्धनसे एकदम मुक्त इनकी ओर दौड़ा। क्षणभरके लिए तो वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ ऐसे खड़े रहे। परन्तु उसके निकट पहुँचते ही उनके आश्चर्यकी मुद्रा भंग हुई तथा जल्दीसे उन्होंने किवाड़ बन्द किया और मुझे पुकारने लगे कि जल्दी आओ। इधर, उनका पुकारना सुन हम सभी घबड़ाकर उनकी ओर दौड़े कि मामला क्या है, परन्तु उनके पास पहुँचकर जब सारा वृतान्त सुना तो बहुत हँसी आयी। साथ ही आश्चर्य भी कम नहीं हुआ कि जब उसके हाथ-पांव रस्सीसे खूब जकड़कर बाँधे थे और ऊपरसे लोहेकी सिकड़ीसे भी बँधा था तो वह कैसे छूट गया। फिर याद आया कि बच्चा होनेपर भी उसमें बल बहुत अधिक था।

मैंने एक छोटी लकड़ी उठा किवाड़की सिकड़ी खोल दी। परन्तु जैसे ही मैं भीतर जाने लगा कि वह मेरे ऊपर भी उछला। मैंने तुरन्त धीरेसे एक लकड़ी उसकी नाकपर जमाई। लकड़ी लगते ही पों-पों करता हुआ वह कमरेके भीतर भागा। फिर उसने मेरे ऊपर कूदनेकी चेष्टा तो न की, परन्तु जब-जब उसे पकड़ने जाता तो वह नोंचनेका पूरा प्रयत्न करता। पहले दिन मैं काफी नुच चुका था अतः इसबार मैंने अपने विस्तरेकी दरी मँगवाकर उसके ऊपर फेंकी और दरीके सहारे उसे दबाया, परन्तु उसने पुनः मुझे उठाकर फेंक दिया। सुबह ही सुबह उससे पुनः आधे घण्टे कुश्ती लड़नेका प्रयास छोड़ मैंने अपने उन दोनों साथियोको बुलाया तथा हम तीनोंके संयुक्त प्रयत्नसे कहीं वह फिर वशमें हो पाया।

उसी दिन हम लोगोंको घर लौटना था, परन्तु जब लौटनेका

सोचते थे तो तनिक भी इच्छा नहीं होती थी, कारण जीवनमें ऐसा सुन्दर रमणीक स्थान हमने बहुत कम देखा था, अतः वहाँसे लौटनेका मन ही नहीं करता था। किन्तु यह बिचारकर अपनेको सान्त्वना दी कि जब भी कभी अवसर मिलेगा तो पुनः वहाँ अवश्य आयेंगे। तीन-चार वर्ष तक तो हम वहाँ नहीं जा सके, किन्तु उसके बाद अवसर मिला। फिर तो अनेक बार वहाँ गये और बहुत-बहुत आनन्द किया जिसका वर्णन आगे करूँगा।

यहाँ यह लिख दूँ कि उस भालूके बच्चेको पकड़ना अच्छा न हुआ। अनेकों प्रयत्न करने पर भी वह कुछ नहीं खाता था। यहाँ तक कि दूध पिलानेका भी प्रयत्न किया परन्तु उधर उसने देखा भी नहीं। सोचा कि दिन भरमें घर पहुँच जायँगे तो वहाँ उसको खिलाने-पिलानेकी विशेष सुविधा होनेसे उसकी कुछ सेवा-शुश्रूषा कर सकेंगे। इसी विचारसे उसी प्रकार बँधा हुआ उसे टांगेके नीचे संभालकर सुरक्षित रखकर घर लौटे। गरमी बहुत तेज हो गई थी, अतः कुछ तो घोड़ोंको दम दिलाने तथा पानी पिलानेके लिए और कुछ भालूके भी ध्यानसे मार्गमें कई स्थानों पर रुकते हुए आना पड़ा। परन्तु भालूके बच्चेने एक घूंट पानी पीना भी स्वीकार न किया।

सुबहके चले-चले रात्रि नौ बजे हमलोग घर लौटे, पर घर पहुँचकर उसे छोड़ देने पर भी वह कुछ स्वीकार नहीं करता था, केवल भागना चाहता था। मैंने सोचा कि सम्भवतः दो-एक दिन भूखा रहने पर कुछ खाने लगेगा। परन्तु चार-पाँच दिनके सतत प्रयत्न पर भी उसने अन्न नहीं ही ग्रहण किया। बड़ी कठिनाईसे केवल एक-दो घूँट पानी पिला पाता था।

सम्भवतः पकड़नेमें उसको कुछ भीतरी चोट लग गयी अथवा उसको जंगल और अपने मांकी याद बनी थी। जो भी हो मैं उसको जीवित न



भलदरिया के भालू के साथ लेखक सपरिवार

रख सका, पांचवें ही दिन उसका स्वर्गवास हो गया, जिससे मुझको अत्यन्त खेद हुआ।

इसके बाद लगभग दो वर्ष तक बन्दूक चलानेका अवसर ही नहीं मिला।

भलदरियाका तीसरा भालू :

पाँच वर्ष बाद सन् १९३० के मार्चमें मुझे फिर इन जंगलोंमें घूमनेका अवसर मिला। इस बार केवल नये-नये स्थान ही घूमने तथा देखनेका ध्येय था। सुखरा, लूसा, राबर्टस्गंज, घँघरौल, सिलहट आदि कई एक स्थान देखे और अन्तमें डोंगिया होते घर लौटे। डोंगियासे लौटनेके पहले एक बार भलदरिया झाँकने भी गये। भलदरिया पहुँचनेके पूरे एक घण्टेके बाद सूर्यास्त होनेपर देखा कि मांदसे एक भालू निकला। देर हो जानेसे कुछ अन्धकार तो हो ही गया था, पर राइफलकी मक्खी Front Sight कुछ देख पड़ती थी, अतः मैंने तुरत निशाना लेकर गोली चलायी। गोली लगते ही पों-पों करता हुआ भालू दरीके नीचे लुढ़क गया, किन्तु रात्रि हो जानेसे अकेले नीचे जाना उचित न समझा। अत: दूसरे दिन प्रातः शिकारीको लेकर पुन: आये तथा उस भालूको ढूढ़नेके लिए नीचे उतरे। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते एक घण्टा लग गया, परन्तु उस पथरीले स्थानमें जानवरका जल्दी पता ही नहीं लग रहा था। इतनेमें मेरे शिकारी राम भालू-भालू चिल्लाते हुए भागते आये। उन चट्टानोंमें भागना दुष्कर था अत: मैं वहीं बैठ गया और राइफल कन्धेसे लगा उसकी प्रतीक्षा करने लगा। थोड़ी देर बाद जब देखा कि कुछ नहीं निकला तो शिकारीसे कहा कि जहाँ जानवर देख पड़ा था, वहाँ ले चलो। हम कुछ ही दूर आगे बढ़े होंगे कि भालू-भालू कहता हुआ शिकारी पुन: पीछे भाग खड़ा हुआ। किन्तु इस बार वह मेरे रास्तेमें था अतः भाग नहीं पाया। उस ओर झाँक कर जो मैंने देखा तो दो चट्टानोंके सहारे भालूको बैठा पाया। दूरसे देखनेसे तो ऐसा प्रतीत होता

था मानों जीवित बैठा हुआ हो किन्तु वास्तवमें वह सर्वथा मृत हो चुका था, अतः उसको उठवा कर बंगले लाये जिसे देख कर मेरे बच्चे अत्यन्त प्रसन्न हुए।

१. चूनादरीका पहला भालू :

१८ अप्रैल सन् १९३८ की बात है कि एक दिन मध्याह्न भोजन समाप्त करके मैं जैसे ही उठा था कि नौकरने सूचना दी कि डोंगियासे आपका पुराना शिकारी आया हुआ है। यह सुनते ही मैंने जल्दीसे हाथ-मुँह धो उसको बुलवाया और हाल पूछा। उसने कहा कि वह एक बड़े भारी भलुन्दर—नर भालूको आज प्रातःकाल ही चूनादरीवाली माँदमें घुसते देख आया है, अतएव यदि मैं तुरत चलूँ तो इसी शामको उसे मांदके बाहर निकलते अवश्य देख सकूँगा।

मोटर ठीक न होनेंके कारण इस समय तो मेरा जाना असंभव था, अतः मैंने शिकारीसे कहा कि तुम तो अभी ही लौट जाओ और मैं कल प्रातःकाल चलकर दस बजते-बजते पहुँच जाऊँगा। तब तक तुम जानवरकी गति-विधिपर ध्यान रखना। अतः वह उसी समय "लारी"से लौट गया, परन्तु डोंगिया पहुँचनेमें रात्रि हो जानेके कारण भालूको मांदपर जा न पाया, किन्तु दूसरे दिन प्रातः ही वह सीधे मांदपर पहुँचा और जानवरको रात भरकी चराईके बाद पुनः लौटते देखा। जब भालू मांदमें चला गया तब शिकारी बंगलेपर लौट आया और मेरी प्रतीक्षा करने लगा।

इधर, मैंने शिकारीको बिदा कर जल्दी-जल्दी शाम तक मोटर ठीक करवाई तथा रात ही को मामाजीको बुलवा लिया और दिन भरके भोजनकी सामग्री एकत्रित कर प्रातः ही मामाजीको ले चल पड़ा।

कुछ बिलम्बसे चलनेके कारण हमलोग डोंगिया लगभग ११ बजे पहुँचे। उधर १० बज जाने पर भी हमलोगोंको न आया देख शिकारी



कनिष्ठ पुत्र श्री राज्यवर्धनदेव भालू के सहित

निराश होकर अपने घर लौट जानेको उद्यत हुआ। इतनेमें मील भरके ऊपरसे उसको हमारी मोटरकी आवाज सुन पड़ी तो वह रुक गया तथा कुछ देर प्रतीक्षा करता रहा कि कदाचित् हमारी ही मोटर हो। उसका अनुमान ठीक निकला और दस मिनट बाद ही हमलोग वहाँ पहुँच गये, किन्तु मनमें धुकधुकी थी कि शिकारी कहीं चला न गया हो। परन्तु एक दूसरेको परस्पर देखकर दोनोंको शान्ति मिली।

हमलोगोंने जल्दी-जल्दी स्नानकर भोजन किया तथा थोड़ी देर विश्रामकर चार बजते-बजते चूनादरीके लिए चल पड़े। वैशाखका आरम्भ था, सूर्यदेवका कहना ही क्या था, अतः इसके पहले चलनेका साहस न था।

चूनादरी बंगलेसे काफी दूर है, यद्यपि थोड़ी दूर मोटरसे गये परन्तु मांदपर पहुँचनेके लिए लगभग दो मील पैदल चलना पड़ा। बिलम्ब हो रहा था, शिकारी शोर मचाये था कि बहुत देर हो गयी है जल्दी चलिये नहीं तो जानवर चरने निकल जायगा। इधर गरमीके मारे हमलोगोंका बुरा हाल था। फिर भी उसके पीछे-पीछे हांफते भागते चले जाते थे। मांदतक पहुँचनेमें पाँच बज गये थे, परन्तु हम इतने थक गये थे और पसीनेसे ऐसे नहा गये थे कि यदि उस समय भालू सामने निकल भी आता तो कदाचित् निशाना लगाना कठिन हो जाता। अतः मांदपर पहुँचनेके थोड़ा पहले ही रुक जानेमें अपनी भलाई समझ हमने एक वृक्षकी छायामें बैठकर विश्राम किया और शिकारीको जानवर देखनेके लिए आगे भेज दिया कि यदि वह माँदसे निकलता हो या निकल आया हो तो वह संकेतसे हमें तुरन्त बुला ले।

विचार किया कि राइफलसे तो सदैव मारता हूँ पर इस बार बड़ी वाली दोनाली बन्दूक (Paradox Gun) चलाऊँ तथा इस गोलीका भी जानवरके ऊपर असर देखूँ। परन्तु मामाजी इस निश्चयसे सन्तुष्ट न हुए। वे बराबर कहते जाते थे कि ऐसा करनेमें बुद्धिमानी नहीं है।

उनके मना करनेके दो मुख्य कारण थे, एक तो यह कि मेरा अभ्यास राइफल चलानेका ही था अतः सम्भव है कि दोनाली बन्दूकसे निशाना ठीक न लगे। दूसरे राइफलकी गोलीपर उनको पूरा भरोसा था और दोनालीकी गोलीपर उतना विश्वास न था। यद्यपि पासकी मारके लिए शिकारी लोग दोनाली बन्दूक हीका विशेष प्रयोग करते हैं और उसी पर उनको विशेष भरोसा भी रहता है, कारण राइफलसे निशाना लगाना कठिन भी है तथा इसके विपरीत अनेकों बार दोनालीकी गोलीसे शेर भी मारे गये हैं। इसलिए मामाजीने भी विशेष हठ न किया, परन्तु मेरे इस निश्चयका नतीजा अच्छा न हुआ जो आगे बताता हूँ।

दरी पर पहुँचनेमें विलम्ब तो हो ही चुका था, सूर्यदेव भी अस्त हो चुके थे, अतएव पाँच मिनट भी विश्राम न कर मैं उठ गया। मामाजी आराम ही कर रहे थे कि मैंने आगे बढ़कर भरी हुई राइफल शिकारीके हाथ सौंपी और दोनाली बन्दूकमें बड़ी गोली भरकर ऊपरसे मांदकी ओर झाँकने लगा।

इतनेमें कुछ खुरखुराहटकी आवाज आयी और एक बड़ा भारी भलुन्दर मांदके बाहर निकला तथा भोजनकी खोजमें इधर-उधर देखता हुआ आगे बढ़ा।

चलते हुए जानवर पर नई बन्दूकसे निशाना लगाना अति कठिन था, तिस परसे जानवरको एकाएक देख लेनेसे कुछ घबराहट भी हो गयी थी और दिल धड़कनेके कारण निशाना लगाना कठिन हो रहा था। जानवर मेरी ही ओर बढ़ रहा था और निकट होनेसे अधिक सोच-विचारका समय न था, अतएव यथासाध्य दम साधकर गोली चला दो। गोली लगते ही भालू खाँव-खाँव करता हुआ एक वृक्षसे लिपट गया और थोड़ी देर तक उसे नोचता-खसोटता रहा। दोनाली बन्दूकसे अनभ्यस्त होनेके कारण जल्दीसे दूसरी गोली चला न पाया। परन्तु

उसकी आवश्यकता न हुई क्योंकि भालू कुछ ही क्षणमें पेड़को नोच-खसोटकर शान्त पड़ गया। मैंने देखा कि दो डालियोंके बीच उसका सिर लटक गया है जिसपर गोलीका निशान स्पष्ट था जिससे मैंने अनुमान किया कि वह समाप्त हो चुका होगा पर जब हमलोग नीचे उतरने लगे तो वह एकाएक उठकर भागा। जल्दीमें मैं दूसरी गोली चला न पाया परन्तु वह थोड़ी ही दूर जाकर गिर गया। हमलोगोंने समझा कि अब वह जीवित न होगा।

उस ओरसे उसके पास जानेका रास्ता न होनेसे दूसरी ओर जिधरसे बरसाती पानी गिरनेका रास्ता था उसी राहसे हमलोग नीचे उतरने लगे। पहाड़ी होनेसे नीचेका मार्ग अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ था। बन्दूक लिये हुए नीचे उतरनेमें बहुत कठिनाई होनेसे मैंने बन्दूक भी शिकारीके हाथमें दे दी थी। वह कोल शिकारी उन जंगलोंमें रहनेका आदी था इसलिए उसके दोनों हाथ फँसे रहनेपर भी उसको उतरने-चढ़नेमें कोई कठिनाई नहीं होती थी। मेरा हाथ खाली होनेसे अब मैं भी चट्टानोंको टेक-टेक कर चढ़ने-उतरने लगा।

थोड़ी दूर उतरनेके बाद नालेके रास्तेके उस पार भालू पड़ा हुआ देख पड़ा। हमलोगोंसे कदाचित् १० गज भी न रहा होगा। हमने समझा कि वह मृत पड़ा होगा पर ऐसा न था, वह दम साधे चुप पड़ा था कि हम पास पहुँचें तो वार करें। अतः उस नालेको पार करनेके लिए जैसे ही हमलोग नीचे उतरे कि सहसा वह उठ बैठा और दो पाँवपर खड़ा होकर आगे बढ़ने लगा।

यह देख कर एक बार तो हमलोगोंके होश उड़ गये और उलटे पाँव भागनेकी सूझी, परन्तु उस पथरीली धरतीमें जल्दी भागना भी असम्भव था। जानवरकी ओर देखता हुआ मैं भागनेकी चेष्टा कर रहा था और साथ ही शिकारीकी ओर हाथ बढ़ाया कि वह मुझे बन्दूक पकड़ा दे। संयोगवश जल्दीमें उसने मुझे राइफल ही थमा दी और

उसी जगह रुक कर मैंने निशाना साध कर घोड़ा दबा दिया। गोली उसकी छातीमें लगी और उसके लगते ही वह एकदम उलट गया और जगह ढालुआँ होनेसे ढुलमुलाता, कलैया खाता नीचेकी ओर चला, परन्तु बीच हीमें एक छोटा-सा पेड़ मिल जानेसे उसीमें अटक गया। थोड़ी देर तक हम प्रतीक्षा करते रहे परन्तु जब देखा कि वह बिल्कुल हिलता-डुलता नहीं तब अनुमान किया कि उसके प्राण-पखेरू उड़ चुके हैं।

पास जानेपर उसके आकारका ठीक-ठीक अनुमान हुआ कि वह कितना विशालकाय था और भारी तो इतना था कि हमलोग उसको हिला नहीं सकते थे। यदि हटानेका विशेष प्रयत्न करते तो भी सम्हाल न पानेसे वह हमारे हाथसे छूट कर एकदम नीचे ही चला जाता।

आश्चर्यकी बात तो यह थी कि यद्यपि पहली गोली ठीक उसके सिरपर लगी थी, परन्तु वह इञ्च, डेढ़ इञ्चसे अधिक उसके माथेमें धँसी न थी। मुझे इस बातका अत्यन्त आश्चर्य था कि जिस गोलीसे बाघ मारा जाता है, उसका असर भालूपर इतना कम कैसे हुआ। संभव है कि गोली पुरानी रही हो, कारण जब बारूद पुराना हो जाता है तो उसमें शक्ति बहुत कम रह जाती है। जो भी हो अब मैंने भी निश्चयकर लिया कि भारी जानवरपर तो अपनी विश्वसनीय राइफल ही चलानी चाहिए। दूसरे जहाँ तक संभव हो नयी गोलीको ही प्रयोगमें लाना चाहिए नहीं तो परिणाम अच्छा न होगा। पुरानी गोलीको तो स्थिर लक्ष्य (Target)पर ही काममें लाना चाहिए।

जानवर भारी होनेसे उसको वहीं उसी पेड़से अच्छी तरह बांध दिया और हरे पत्तोंसे ढँक दिया कि अन्य कोई जानवर अथवा गिद्ध उसके चमड़ेको नष्ट न कर पाये। पश्चात् हमलोग बंगले वापस आये तथा उसको उठा लानेके लिए सात आठ आदमियोंको भेजनेका प्रबन्ध किया। परन्तु रात हो जानेके कारण किसीको वहाँ जानेका साहस न हुआ।

अतः बंगलेपर ही हमलोगोंने रात बितायी और प्रातः अंधेरे ही उन आदमियोंको इस आदेशके साथ रवाना किया कि भालूको बंगलेपर लानेका प्रयत्न न कर बीच रास्तेमें जहाँ सड़क मिलती है वहीं लाकर रक्खें तब तक हमलोग भी वहाँ पहुँचते हैं।

प्रातः काल जलपानसे निवृत्त होकर हमलोग भी चल पड़े। तीन मील जानेपर, वे लोग सड़कपर भालू लिये देख पड़े। मोटर रोककर, भालूको उसमें रखकर हम घर लौट आये। यहाँ उस विशालकाय भालूको देख लड़के बहुत प्रसन्न हुए।

यह पहला अवसर था जब कि २४ घण्टेके अन्दर ही जंगलसे शिकार करके हमलोग सकुशल घर लौट आये। सकुशल इसलिए कि भालूके पंजोंसे बाल-बाल बचकर निकल आये।

अपनी ही गलतीसे हमें धोखा हो जानेका डर था। घायल जानवरके समीप कदापि न जाना चाहिए जब तक यह दृढ़ निश्चय न हो जाय कि उसके प्राण निकल चुके हैं। इसका निर्णय दूरसे उसपर ढेला फेंककर किया जा सकता है। यदि जानवर जीवित होगा तो तुरत उठ बैठेगा और भागनेका प्रयत्न करेगा अथवा आक्रमणकर देगा। दोनों ही परिणामके लिए पहलेसे ही सतर्क रहनेसे हम दूसरी बार पुनः गोली चलाकर जानवरको मार सकते हैं।

मेरे लिये तो इतनी ही शिक्षा पर्याप्त थी, परन्तु तीन वर्ष बाद उसी स्थानमें इसी भूलके कारण घायल भालूसे मेरे एक मित्र किस प्रकार बाल-बाल बच गये, उसका वर्णन "चूनादरीका तीसरा भालू"में मिलेगा।

२. चूनादरीका दूसरा भालू :

९ मई १९३९में डोंगिया जानेका पुनः अवसर मिला। इस बार नयी राइफल जो पारसाल १९३८के जुलाईमें खरीदी थी लेकर चले। इस यात्रामें तेंदुआ आदि भी मिले। इनका वर्णन अन्यत्र है।

चूनादरीसे तेंदुयेको मारकर जब बंगले लौट रहा था तब एक बड़ा भारी भालू मार्गमें जाते देखा। हमलोगोंने उसका पीछा किया, परन्तु समतल भूमि न होने और अनेक कांटेदार झाड़ियाँ होनेसे भालूके समीप पहुँच ही न पाये। जब वह पलटकर शिकारीकी ओर देखता था, तब शिकारी रामका आगे पैर उठना ही बन्द हो जाता था। देखते-देखते वह भालू झाड़ियोंमें ओझल हो गया।

दूसरे दिन शामको इस भालूकी खोजमें हमलोग पुनः चूनादरी गये और भाग्यवश सीधे उसी मांदपर पहुँचे। इस बार पूरे डेढ़ घण्टेकी प्रतीक्षाके बाद भी जब जानवर मांदके बाहर न निकला तो अति विलम्ब होते देख हमलोगोंने एक प्रकारसे आशा छोड़ दी, क्योंकि सूर्यास्त प्रायः हो ही गया था और रात्रिमें वहांके बीहड़ वनका मार्ग भूल जानेका डर सदैव बना रहता है। इस कारण हमलोग उठना ही चाहते थे कि इतनेमें वह भालू मांदके बाहर निकला। उसको मांदसे तीस-चालीस पग दूर चले जाने दिया जिसमें जल्दीमें वह उसमें पुनः लौट न जाय। उसके दूर चले जानेके बाद मैंने गोली चलायी जानवर जहांसे जा रहा था वह पहाड़का बिल्कुल ही ढालुवां स्थान था और नई राइफलमें सबसे भारी वाली गोली चढ़ाई हुई थी। परिणाम यह हुआ कि गोलीके धक्केसे वह एकदम उलट गया और बिना रोक-टोकके लुढ़कता हुआ सीधे दरीके नीचे धड़ामसे जा गिरा। थोड़ी देर बाद हमलोगोंने जब नीचे जाकर देखा तो जानवर बहुत बड़ा व भारी दीखा अतः हमलोगोंका उसको पहाड़ीके ऊपर चढ़ाना असम्भव था। फलतः उसको वहीं पत्तोंसे ढककर हमलोग बंगले लौट आये। दूसरे दिन प्रातः-काल सात-आठ आदमियोंको भेजा कि भालूको उठाकर बंगले ले आवें। परन्तु अत्यन्त भारी होनेके कारण वे भी उसको ऊपर नहीं ला सके अस्तु वहीं उसका चमड़ा उतारना पड़ा। वे लोग दोपहर तक चमड़ा उतार पाये और केवल चमड़ेकोलिये हुये बंगलेपर आये।

नई राइफलकी मारसे मैं बहुत संतुष्ट था। एक ही गोलीकी मारसे जानवर तत्क्षण समाप्त हो गया था।

यह यात्रा पूर्ण सफल रही और हमलोग सानन्द घर लौटे।

३. चूनादरीका तीसरा भालू :

३१ मार्च सन् १९४१ का दिन था। दोपहरका भोजन समाप्त कर जैसे ही मैं विश्राम करने जा रहा था ठीक दो बजे सदाकी भाँति मेरा शिकारी 'सुन्दर' यह कहता हुआ पहुँचा कि चूनादरीमें 'बाघ आयल हो सो जल्दो चलल जाय।' उसकी आदत जल्दबाजी की थी। कहीं जानवरकी झलक मात्र मिलनी चाहिए कि जल्दी मारिये, जल्दी चलिये कि झड़ी लगा देता था।

किन्तु मुझे तो सभी सामान इकट्ठा करनेमें कुछ समय लग ही जाता है। खाने-पीनेकी पूरी तैयारी करनी पड़ती, क्योंकि जंगलमें कुछ भी नहीं मिलता और यदि वहाँ पाँच सात दिन रहना पड़ा तो भोजन-की पूरी सामग्री रखना तो अत्यन्त आवश्यक है। फिर राइफल, बन्दूक और उनके कारतूस एकत्रित करना; कपड़े, बिस्तरे आदि-आदि सभी चीजें सोच-सोचकर रखना पड़ता है। ऊपरसे यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि मोटरमें आसानीसे सभी सामान अँट जाये। सर्वोपरि तो मोटरको ही ठीक करवाना, क्योंकि जंगलमें या मार्गमें गाड़ी बिगड़ जानेसे सारे खेलका आनन्द तो चला ही जाता है, ऊपरसे कष्ट और हो जाता है। यदि सायंकालको चलना पड़ा तो अन्धकार तथा रास्ता खराब होनेके कारण बहुत ही कष्ट होता है और उस समय कहीं मोटर खराब हो गयी तो रात भर वहीं सड़कके किनारे पड़े रहना पड़ता है। किन्तु इस बार शिकारी सही था, क्योंकि एक ही रात्रिका बिलम्ब हो जानेसे उसी शामको अथवा रात्रिमें वह बाघ उस स्थानको छोड़कर कहीं अन्यत्र चला गया जो वहाँ जानेपर पता चला।

उपरोक्त कारणसे दूसरे दिन चलनेका वादाकर शिकारीको रोक लिया तथा उसी दिन यात्राका सब प्रबन्धकर, मोटर ठोक करवाकर रात्रिमें ही उसपर सारा सामान लगा दिया कि जिसमें दूसरे दिन प्रातः शीघ्र प्रस्थान कर सकें।

इस बार बड़े बच्चोंको साथ नहीं लिया, क्योंकि उन लोगोंकी परीक्षायें चल रही थीं। साथ चलनेकेलिये मामाजीको सूचना भेजी, परन्तु वे अपने जमींदारीपर चले गये थे। उनको वहांसे बुलवानेका समय न था सो विवश होकर उनके साथका ध्यान त्यागना पड़ा। केवल पत्नी व छोटे बच्चे राज्यवर्धन, जो उस समय केवल तीन वर्षका था और एक मित्र रामनिरंजन शर्माके साथ व शिकारीको भी मोटरमें बिठा दूसरे दिन प्रातःकाल ही डोंगियाकेलिये चल पड़े। दोपहरके पहले ही डोंगिया पहुँचकर विश्राम किया और हल्का भोजनकर तीसरे ही पहर चूनादरीकेलिये प्रस्थानकर दिया। हमलोगोंके साथ दो शिकारी थे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने पद-चिह्नोंको भलीभाँति देखा और समझनेका प्रयत्न किया। चारों ओर अच्छी प्रकार देखनेके बाद वे इस निश्चयपर पहुँचे कि इस समय शेर दरीमें नहीं है। कारणकी दरीसे जाते हुये बहुतसे पैरोंके निशान देख पड़े, पर दरीके भीतर जाते हुये एक भी नये पंजे देख न पड़े। अतएव खेदके साथ यही अनुमान करना पड़ा कि दरी छोड़कर शेर कहीं अन्यत्र चला गया। पर जब कि हमलोग इतनी दूर आ ही चुके थे तो थोड़ी देर वहाँ ठहर गये कि कदाचित् कोई अन्य जानवर ही निकल आवे।

हमें बैठे-बैठे संध्या हो गयी पर कोई जानवर देख न पड़ा। अतः विलम्ब होते देख लौटनेका विचार करने लगे।

इतनी देरमें दरीके ऊपर जहांसे पानी गिरता था, परन्तु उस समय सूखा था, एक बड़े भालूको उस सूखे हुए नदीके स्थानको चट्टानोंके

ऊपरसे पार करते हुए देखा। वह लगभग चार सौ गजके ऊपरसे जाता हुआ देख पड़ा था। संध्या हो गयी थी इसलिए उसपर गोली नहीं चलायी। साथ ही यह ध्यानमें भी आया कि दरीके उसपार भालूकी मांद है। बहुत सम्भव है कि वह उसमें अवश्य रहता होगा, विशेषकर इस समय जबकि दरीको छोड़कर बाघ कहीं अन्यत्र चला गया है। अतः यह अनुमान किया कि रातभर चरनेके बाद दूसरे दिन प्रातःकाल वह अपनी मांदमें अवश्य लौट आवेगा।

मैंने शिकारीसे कहा कि जब शिकार खेलने आये ही हैं और शेर नहीं है तो भी खाली हाथ क्यों लौटें। तुम प्रातःकाल भालूका मांदमें लौटना देखकर बंगलेपर मुझे इसकी सूचना दो तो अगले दिन थोड़ा जल्दी तीसरे पहर पुनः आकर इसीको मारनेका प्रयत्न करें।

दूसरे दिन सुबह दस बजते-बजते शिकारी बंगलेपर आ गया। उसका प्रफुल्ल चेहरा देखते ही हम लोग समझ गये कि जानवरको देखकर लौटा है, तथा उसके कथनसे जिसकी पुष्टि भी हो गयी।

यह विचारकर कि आज जल्दी चलना चाहिए क्योंकि नदी पारकर लगभग आधा मील और उसके मांद तक पहुँचनेके लिए चलना पड़ेगा, अतः हम लोग तीन बजेके पहले ही चल पड़े, यद्यपि उस समय सूर्यका आतप प्रखर था। फिर भी वहाँ पहुँचते-पहुँचते चार बज ही गये।

जब मांद केवल पचास गज रह गयी और यह समझते हुए कि अभी भी बहुत जल्दी है, सूर्यास्तके पूर्व ही जानवर बाहर निकलेगा तो भी सौभाग्यवश राइफलमें कारतूस भर तैयार और सतर्क हो धीरे-धीरे आगे बढ़े।

मांदके ऊपर किनारे पहुँचकर जैसे नीचेकी ओर निगाह पड़ी तो देखा कि एक भालूराम मांदसे कभीके बाहर निकलकर एक चट्टानपर आनन्दसे बैठे हुए इधर-उधर देख रहे थे तथा सूर्यास्तकी प्रतीक्षा कर रहे थे कि सूर्य अस्त हो तो भोजन व भ्रमणके लिए प्रस्थान करें।

कुशल थी कि हम लोग बहुत धीरे-धीरे आगे बढ़े थे तथा राइफलमें कारतूस पहले हीसे भर लिया था, नहीं तो हमलोगोंकी आहट जानवरको पहले ही लग जाती और वह चल देता। फिर भी हमलोगोंनें कुछ शब्द अवश्य किया होगा। कारण, जानवरने हमलोगोंकी ओर तुरत ही उलट कर देखा। परन्तु मेरे सन्नद्ध होनेसे मैं अतिशीघ्र गोली चला पाया जिससे वह गम्भीर आहत होकर वहीं गिर गया। पर अभी भी उसमें प्राण थे। किन्तु उसके निश्चल पड़े रहनेके कारण हमलोगोंको भ्रम हो गया कि वह मृत हो गया होगा।

जब तक मैं कुछ कहूँ हमारे मित्र साहेब व दोनों शिकारी कूद-कूदकर नीचे पहुँच गये और उसके पास जाने लगे, यद्यपि मैंने पुकारकर कहा कि बहुत सावधानीसे आगे बढ़ें, परन्तु उस हर्षोल्लासमें मेरी सुनता कौन था। अतः जैसे ही आगे बढ़कर उन लोगोंने उसको स्पर्श किया कि वह कनमनाया। उसके हिलते ही ये लोग छिटक कर दो गज कूद गये और घूमकर उसे देखने लगे। जब देखा कि वह हिलता-डुलता नहीं है तब साहस बाँध पुनः निकट जा उसे सहलाने लगे। शर्माजीने उसके बड़े बालको पकड़कर खींचा। बाल खींचते ही वह बड़ी जोरसे गुर्राया और उठ खड़ा हुआ। फिर तो इन लोगोंके होश उड़ गये और चारों ओर भगदड़ मच गयी। यह भी दृश्य देखने योग्य था। कोई तो वृक्षपर चढ़नेका प्रयत्न करने लगा और कोई ऊपर चढ़ आनेके लिए कूदने। हमारे मित्र-महोदय उस ऊबड़-खाबड़ पहाड़ी स्थलपर भागनेके अभ्यस्त तो थे नहीं और न पेड़ ही पर चढ़ सकते थे। उन्होंने मेरे निकट ही आनेमें अपनी भलाई समझी, और जैसे-तैसे गिरते-पड़ते हमलोग जहाँ खड़े थे ठीक उसीके नीचे आकर खड़े होकर कभी मेरी ओर तो कभी जानवरकी ओर देखने लगे। इतनेमें दोनों शिकारी अपने-अपने पेड़ोंपर चढ़ चुके थे। उनकी फुर्ती देखने योग्य थी।

ये लोग शुरूमें जानवरको ऐसा चारों ओरसे घेरे थे कि मैं दूसरी

गोली चला ही न सकता था। परन्तु क्षणभरमें जब ये लोग तितर-बितर हो गये, तब जानवरको आगे बढ़ते देख मुझे दूसरी गोली चलानेका अवसर मिल गया। इसबार दूसरी गोली लगते ही वह सुरधाम सिधार गया। तब उसे उठाकर हमलोग बंगले ले आये।

इसके बाद मैंने भालू मारना प्रायः छोड़ ही दिया। अनेक बार जंगल गया, शिकारीने भालूकी सूचना भी दी परन्तु जब उसके मारनेका उत्साह ही नहीं रह गया।

•

चीता अर्थात् तेंदुआ

चीता अर्थात् तेंदुआ

उत्कृष्ट हिंस्रक जन्तु :

हिंस्रक पशुओंमें बिल्लीकी जातिवालोंकी बनावट सबसे उत्कृष्ट होती है। इनमें क्रमशः सिंह, व्याघ्र और तेंदुये अथवा चीते होते हैं।

संस्कृत नाम :

संस्कृतमें चीता अथवा तेंदुआको "चित्रक", "चित्र व्याघ्र", "तेंदुक" और "द्वीपिन्" कहते हैं।

"चित्रक" विशेष कर शिकारी चीतेके लिए ही प्रयोग किया जाता है। इनका वर्णन आगे आयेगा।

"चित्रक", "चित्र-व्याघ्र" अथवा "चीता" इसलिए कहते हैं कि इनके समस्त अंगपर गोल-गोल अथवा अण्डाकार या चौकोर सुन्दर चिह्न होते हैं। जैसे "चीतल" हरिनोंके अंगपर धब्बे होनेके कारण उनको "चित्र मृग" कहते हैं, उसी प्रकार चीतेको "चित्रक" या "चित्र-व्याघ्र" भी कहते हैं। परन्तु मृगके धब्बे और इनके धब्बोंमें अन्तर है। मृगके धब्बे सफेद और इनके काले होते हैं, परन्तु मृग अधिक सुन्दर लगते हैं। हिन्दीमें इन्हें "गुलदार" भी कहते हैं। "गुल" शब्द फारसीका है जिसका अर्थ पुष्प है। जिस पशुके शरीरमें फूलके आकारका भिन्न रंगका गोल दाग हो उसे "गुल" अथवा "गुलदार" कहते हैं।

अंग्रेजी नाम :

इन धब्बोंके कारण अंग्रेजीमें चीतेको केवल Spots–स्पॉट्से भी सम्बोधित करते हैं। Spots माने धब्बे। यों अंग्रेजीमें इनकी जातिवालोंको Leopards–"लैपर्ड्स" कहते हैं और जो सबसे बड़े

जातिवाले होते हैं या काले जातिवालोंको Panther–"पैन्थर" कहते हैं।

अलमोड़ेके पहाड़ी क्षेत्रोंमें भ्रमवश इनको "बाघ"से सम्बोधित करते हैं। परन्तु इधर अपनी तरफ बाघ शेरको ही कहते हैं।

बड़ा तेंदुआ :

संस्कृतमें बड़े तेंदुओंको "तेंदुक" अथवा "द्वीपिन्" कहते हैं। कहीं-कहीं शेरके लिए भी "द्वीपिन्" शब्दका प्रयोग किया गया है।

हिन्दीमें इन बड़े चीतोंको तेंदुआ कहते हैं। गाँववाले अथवा जंगली जाति इनको भिन्न-भिन्न नामोंसे भी सम्बोधित करते हैं। किसी-किसीको "कोदइलवा" कहते हैं और किसी-किसीको "करौंच" कहते हैं।

लम्बाई :

ये सब बहुत बड़े होते हैं और इनके मुखका आकार भी बहुत बड़ा होता है। कोई-कोई तो आठ फुटसे भी अधिक लम्बे होते हैं। इनकी कलाई इतनी मोटी होती है कि अपने हाथमें नहीं आती।

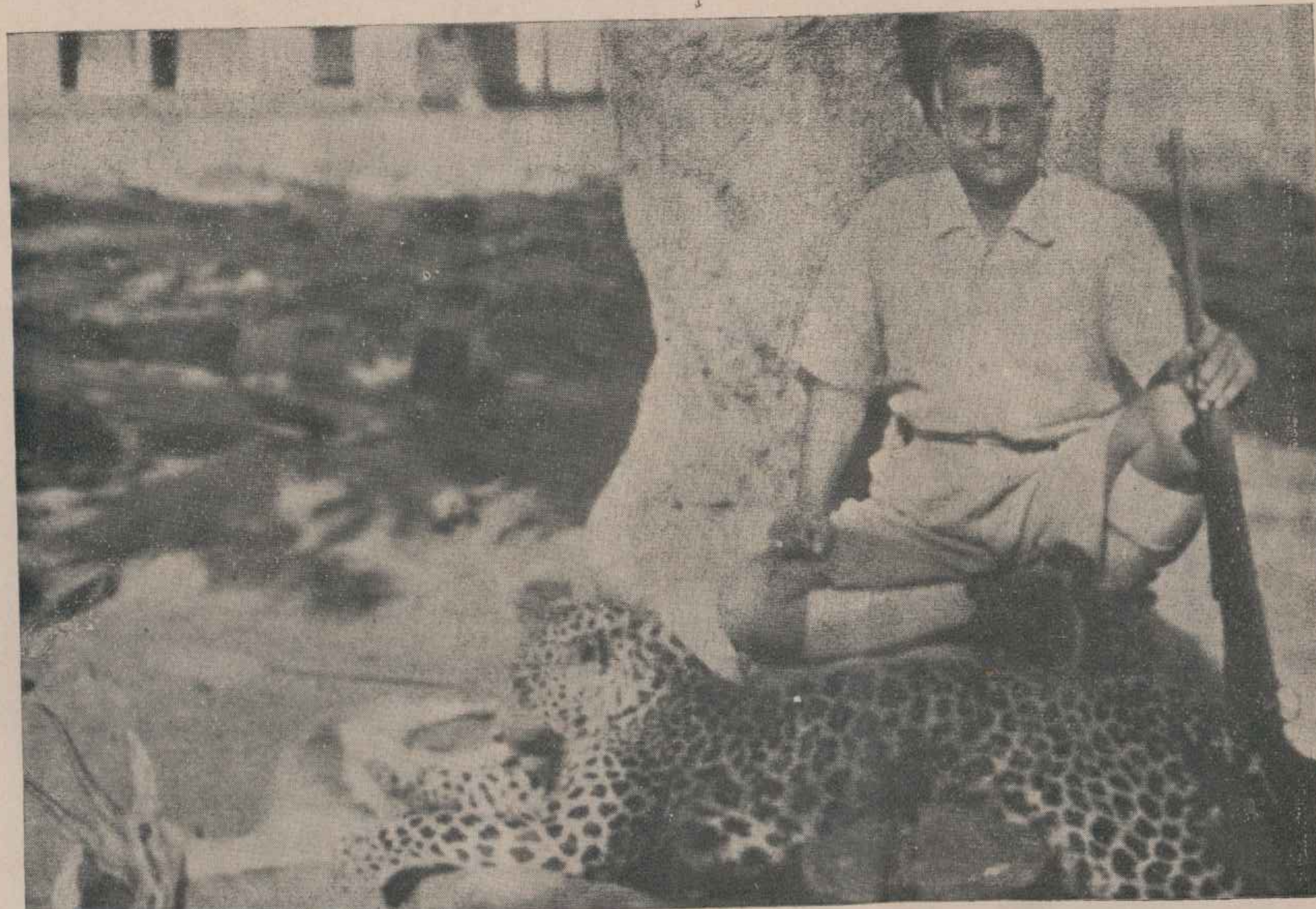
वजन :

इनका वजन डेढ़से दो मन तक होता है, परन्तु छोटे चीते एक मनसे ऊपर नहीं होते।

गुल और रङ्ग :

इनके चिह्न अथवा गुल या धब्बे बहुत बड़े-बड़े काले और पास-पास होते हैं। इन धब्बोंके बीच बहुत हल्की सफेदी झलकती है, जैसे C। अतः काला हिस्सा अधिक होनेसे दूरसे इनके काले होनेका भ्रम होता है। यद्यपि इनके शरीरका रंग पीला अथवा हल्का कत्थई या नारङ्गी रङ्गका होता है।

किसी-किसीका कहना है कि ये बड़े तेंदुये, शेर और चीतेके संयोगसे



लेकख, उनका शिकार चीता, उसका शिकार चिकारा

होते हैं। परन्तु ऐसे संमिश्रणसे ये भिन्न नस्ल और भिन्न प्रकारके पैदा होते हैं, जिनमें कभी शेर जैसी लम्बी-लम्बी काली लकीरें होती हैं, और कभी किसी-किसीमें चीते-चीतेकी तरह काले धब्बे। किन्तु इस प्रकारके संमिश्रण जंगलमें कम ही होते हैं, क्योंकि ये दोनों जाति, शेर और चीते, एक दूसरेसे दूर ही रहते हैं, ऐसे ही किसी कारणवश संयोग होता है। अतः मेरा अनुमान है कि ये किसी भिन्न और बड़ी जातिके जन्तु होते हैं, और दक्षिण अमेरिकाके (Jaguar) जैगुआरसे बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं।

काला तेंदुआ :

कोई-कोई तेंदुये बिलकुल ही काले होते हैं। इनमें किसी प्रकारका धब्बा स्पष्ट दृष्टिगोचर नहीं होता। ये बहुत कम देख पड़ते हैं और बहुत ही खूंखार होते हैं, क्योंकि अनायास ही हमला कर बैठते हैं और देखनेमें भी बहुत भयानक लगते हैं। यह कहना कि इनकी जाति ही भिन्न होती है, कदाचित् ठीक न हो, क्योंकि साधारण तेंदुओंके संयोगसे भी बच्चे पूर्णरूपसे काले पैदा हुए सुने गये हैं। ये अधिकतर मलयद्वीपमें पाये जाते हैं और भारतवर्षमें हिमालयके आस-पास भी कुछ हैं।

इन समस्त जातिवालोंके मांथे और दांतोंकी ऐसी बनावट होती है कि जिससे आसानीसे अन्य पशुओंको पकड़ सकें और दांतोंसे नोच-नोचकर खा सकें।

माथा :

इनका माथा चौड़ा परन्तु गोल और नाटा होता है। हरिन अथवा कुत्तेकी भाँति लम्बा नहीं होता।

अन्तरके कारण :

हरिनके केवल शाकाहारी होनेसे इनके जबड़े चीथनेके लिए नहीं, केवल घास-पात चबानेके ही लिए होते हैं और भूमिसे घास नोचनेके

लिए मुखके अग्रिम भागमें छोटे-छोटे दांत होते हैं। कुत्ते शाकाहारी और मांसाहारी दोनों होते हैं, अतः इनको दोनों प्रकारके जबड़े होते हैं। शेर अथवा तेंदुओंकी जातिके, अतः केवल मांसाहारी होनेसे इनके जबड़े केवल मांसको चीथने या टुकड़े-टुकड़े करनेके लिए ही बने होते हैं। मांस चबाया नहीं जाता, केवल छोटे-छोटे टुकड़ोंमें निगल लिया जाता है। जबकि शाक, भाजी और अन्न चबा-चबाकर ही लाला अथवा लारके साथ ही निगला जाता है।

दांत :

इसलिए व्याघ्र जातिवालोंको चबानेके दांत न होनेसे केवल चीथनेके ही लिए नुकीले दाँत होते हैं, जिनकी संख्या कम होती है, अतः इनका मुँह लम्बा न होकर छोटा पर चौड़ा होता है।

इनके मुखके अग्रिम भागमें छः दांत ऊपर नीचे होते हैं। परन्तु ये बहुत छोटे-छोटे होते हैं जिसमें हड्डीसे सटे हुए छोटे मांसको भी नोचकर खा सके। इनके अगल बगल बहुत विकराल बड़े-बड़े दो-दो दांत ऊपर नीचे होते हैं तथा ये इतने लम्बे और पैने होते हैं कि अन्य पशुओंके अंगोंमें आसानीसे घंस जाते हैं और लम्बे होनेसे पकड़े रह जाते हैं। इनको अंग्रेजीमें Canine Teeth कहते हैं। मनुष्यों में भी ये दांत होते हैं परन्तु इतने नुकीले और लम्बे नहीं। बाकी जबड़ेमें केवल तीन-तीन अगल बगल नीचे और दो-दो बड़े-बड़े नुकीले ऊपर होते हैं। इस कारण ये शाकाहारी जन्तुओंकी तरह भोजन चबाने नहीं पाते अपितु मांसको केवल छोटे-छोटे टुकड़ोंमें करके अथवा चीथकर निगल जाते हैं।

हरिन अथवा कुत्ते शाकाहारी तथा मांसाहारी दोनों प्रकारके होते हैं, अतः उनके मुखमें दांत अधिक होते हैं, फलतः इनके मुँह लम्बे होते हैं। इसके अतिरिक्त तेंदुओंको कम दांत होनेके कारण इनके मुँह नाटे पर बहुत मजबूत होते हैं।

नख :

व्याघ्र जातिवाले इन बड़े हिंस्रक पशुओंको "नक्खी" जानवर भी कहते हैं क्योंकि इनके नख बड़े ही विकराल और विचित्र होते हैं। इन नखोंसे भी इनको अन्य पशुओंको पकड़ने और फाड़नेमें तथा वृक्षपर चढ़नेमें भी बहुत सहायता मिलती है।

इन समस्त व्याघ्र जातिवालोंके नख अपने-अपने म्यानमें-एक प्रकारकी खोलमें-घुस जाते हैं। कुत्तोंके नखों की नाईं बाहर निकले नहीं रहते। ये जब चाहते हैं अथवा जब क्रोध करते हैं तब इनके नख सहसा बाहर निकल आते हैं। ये नख भी इनके बहुत बड़े संहारक अस्त्र हैं। पर जब ये शान्त रहते हैं अथवा जानवरोंकी खोजमें निकलते हैं तो इनके ये नख म्यानके भीतर रहते हैं, तथा भीतर रहनेके कारण जमीनपर घिसते नहीं। इसलिए बड़े ही पैने और लम्बे बने रहते हैं, जिससे ये अन्य पशुओंको आसानीसे विदीर्ण कर सकते हैं।

दूसरे, इनके नख म्यानके अन्दर रहनेके कारण चलनेमें इनके पैरोंकी आहट भी बिल्कुल नहीं लगती, जिससे इनका इतना भारी शरीर होते हुए भी अन्य पशुओंके निकट अथवा आदमियोंके ही पास बड़े चुपचाप पहुँच जाते हैं और सहसा आक्रमण कर बैठते हैं जिससे बचना कठिन हो जाता है।

इनके नख विशेष रूपसे विषैले भी होते हैं, क्योंकि ये थोड़ा-बहुत विगलित मांस भी खा लेते हैं। कारण, पहले दिनका इनका मारा हुआ बछड़ा अथवा बकरी जिसको ये न खा पाये हों उसे दूसरी रात आकर खाते हैं। नखोंकी विषाक्तताके कारण इनके काटे अथवा नोचे हुए पशु या मनुष्य कम जी पाते हैं।

भोजन :

इनका आहार कुत्ते, बकरी, मुर्गी, गाय और भैंस के बछड़े, बन्दर

और लंगूर भी होते हैं। परन्तु इनको पहले कुत्ते और उसके बाद बकरी ही पसन्द है। क्योंकि जहाँ अवसर मिला ये पहले झटसे कुत्ते हीको उठा ले जाते हैं। इसलिए, कुत्ते पालनेवालोंको बहुत सावधानीसे अपने कुत्तोंकी रक्षा करनी चाहिए। यद्यपि मेरा अपना अनुमान है कि कुत्तोंसे इनको विशेष वैमनस्य होता है, क्योंकि कुत्ते इनके आनेकी सूचना सबके पहले दे देते हैं, जिसके कारण सब लोग सतर्क हो जाते हैं और तब ये बकरी आदि नहीं पकड़ ले जा सकते। इसका अनुमान इसलिए करता हूँ कि ढूँढने पर यह पता चला है कि जिन-जिन कुत्तोंको ये पकड़कर ले गये हैं, उनको इन्होंने अधिकतर बुरी तरहसे नोच-नाचकर या चीरकर फेंक दिया है, खाया नहीं। यद्यपि यदा-कदा उनको खा भी गये हैं।

इनमें जो बड़े जातके तेंदुये होते हैं वे छोटी मोटी गायोंको और भैंसके बड़े-बड़े पड़वों तकको मार डालते हैं और कभी-कभी घसीट भी ले जाते हैं।

वृक्ष पर चढ़ना :

कोई-कोई चीते वृक्ष पर भी चढ़ जाते हैं और नीचे जाते हुए अन्य पशुओं पर अथवा यदि नरभक्षी हुए तो आदमियों पर भी कूदकर हमलाकर बैठते हैं। वृक्षों पर ये बड़ी आसानीसे चढ़ जाते हैं। अतः बन्दरोंको भी यदा कदा पकड़ पाते हैं।

जब ये दम्पति अथवा जोड़ेमें शिकार करते हैं तो एक पेड़पर चढ़ जाता है तथा दूसरा जमीन पर ही नीचे खड़ा रहता है। विशेष कर ये रात्रि हीमें ऐसा करते हैं। उस समय बन्दर अथवा लंगूर निद्रावस्थामें रहते हैं। ये धीरेसे ऊपर चढ़ते हैं और जबतक वे जागें जबतक एकाधको पकड़ ही लेते हैं। तदुपरान्त उसके भयसे जब सब बन्दर नीचे कूदते या दूसरे पेड़पर जानेके लिए भागते हैं, तो नीचे वाला भी दो चारको घायल करके पकड़ लेता है।

वासस्थान :

सिंह और व्याघ्रके रहनेके स्थान तो खास-खास प्रदेश व प्रान्तोंमें हैं, परन्तु तेंदुये प्रायः सभी प्रदेशोंमें पाये जाते हैं। समस्त भारतवर्षसे लेकर वर्मा, लंका, मलाया, बोर्नियो आदि द्वीपों तकमें इनके वास-स्थान हैं। उत्तरमें मध्य एशिया तथा साइबीरियाकी सरहद तक पाये जाते हैं। पर इधरके जानवर बर्फीली जगहोंमें रहनेके कारण रंगमें हल्के सफेद होते हैं। यद्यपि इनकी भी चित्तियाँ (गुल) काली ही होती हैं।

अपनी ओरके तेंदुये प्रायः पर्वतोंकी कन्दराओंमें दिन व्यतीत करते हैं। कोई-कोई कभी-कभी वृक्षोंपर भी रह जाते हैं। कई शिकारियोंने इन्हें वृक्षोंपर भी मारा है।

Puma–प्यूमा :

प्यूमा, पश्चिममें अफ्रिका और अमेरिकामें पाये जाते हैं। किन्तु अमेरिकाके तेंदुये भारतवर्षसे भिन्न जातिके होते हैं।

Cougar–कूगर :

उत्तरी अमेरिका व कनाडाकी सीमापर यह प्यूमा अथवा कूगर नामका तेंदुआ होता है। वहाँ उसको (Lion) लायन अथवा सिंह भी कहते हैं, क्योंकि उसका रङ्ग बिलकुल सिंह ऐसा मटमैला होता है। केवल मुखका आकार व शरीर सिंहसे बहुत छोटा होता है तथा इनके शरीरपर काले धब्बे नहीं होते। इनका आहार अधिकतर मुर्गी अथवा छोटा घोड़ा है। वहाँके देशवासी कुत्तोंकी सहायतासे इनका शिकार करते हैं। शिकारी कुत्ते इनकी गन्ध पाकर दौड़ते हैं। तदुपरान्त, शिकारी घोड़ेपर या पैदल ही (जहाँ घोड़े जानेका मार्ग न हो) उनका पीछा करते हैं। जब कुत्ते इनके अति निकट पहुँच जाते हैं तो ये बचनेके लिए प्रायः पेड़पर चढ़ जाते हैं। तब शिकारीको इनके पास पहुँचनेका

समय तथा मारनेका सुगम अवसर मिल जाता है। कभी-कभी ये एकाध कुत्तोंको घायल कर देते हैं। पर ये जानवर बहुत बड़े अथवा खूंखार नहीं होते।

पालतू :

सब तेंदुओंमें एक अकेली इसीकी जाति है जो पोस मानती है। ये बिरले ही आदमीपर हमला करते हैं और खेलवाड़ी बहुत होते हैं। परन्तु इनमें-से कोई-कोई नर बहुत बड़े और खूंखार भी होते हैं। बर्फीले तेंदुये भी बहुत पालतू होते हैं।

Jaguar–जागुआर :

मध्य अमेरिका व दक्षिण अमेरिकामें विशेषकर (Brazil) ब्रेजीलमें जागुआर (Jaguar) नामका सबसे बड़ा तेंदुआ होता है। इसका माथा भी बहुत बड़ा होता है और शरीर भी बहुत सुगठित और भारी होता है। परन्तु लम्बा कम होता है। ये ऐसे घने जंगलोंमें रहते हैं कि बड़ी कठिनाईसे देखे जाते हैं।

मिर्जापुरके घने जंगलोंमें इनसे मिलते-जुलते बहुत बड़े तेंदुये मैंने मारे हैं, जिनकी गणना इन "जागुआरों"में हो सकती है। वहाँ गाँववाले इनको "कोदइलवा" कहते हैं जिसका उल्लेख पहले भी किया है।

शेष सभी चीते साधारण जंगलोंमें रहते हैं। भारतवर्षमें तो विशेषकर गाँवोंके निकट ही रहते हैं। क्योंकि यहाँ इनको भोजन आसानीसे मिल जाता है, अतः ये विशेष घातक भी होते हैं।

नरभक्षी :

कोई-कोई तो नरभक्षी भी हो जाते हैं। तब ये अधिक भयावह हो जाते हैं। क्योंकि आदमियोंके सम्पर्कमें रहनेसे ये बहुत चालाक हो जाते हैं और इस कारण ये बड़ी कठिनाईसे मारे जा ते हैं। ये आदमियोंको,

स्त्रियोंको, बच्चोंको बड़ी सावधानी व कुशलतासे उठा ले आते हैं। अतः गाँववाले इनको शेरसे अधिक भयावह मानते हैं।

भारतवर्षमें कई प्रकारके चीते और तेंदुये होते हैं। शिकारी चीतेके अतिरिक्त जिसका वर्णन आगे आयेगा, एक बिल्कुल छोटा चीता होता है जो सादे कुत्तोंसे थोड़ा ही बड़ा होता है, और कोई-कोई तो छोटे बाघके बराबर भी होते हैं जिनका वर्णन किया जा चुका है।

शिकार करने का तरीका :

तेंदुओंको मारना सहज नहीं है। ये बहुत ही चालाक जानवर होते हैं, जो कभी-कभी ही हाँकेमें फँसकर शिकारीके सन्मुख निकलते हैं, अन्यथा अधिकतर उस समय ये दुबककर छिपे रह जाते हैं, और हँकवे-वालोंको पता ही नहीं होता कि उनके बगल हीके झाड़ीमें दुबका हुआ पड़ा है अथवा वृक्षके ऊपर छिपा हुआ बैठा है। विशेषकर ये रात्रिमें ही भोजनके लिए निकलते हैं।

यदि जानवर लागू अथवा ढीठ है और कुछ भूखा भी है तो तीसरे पहर उसके मांदके पास बकरी बाँधकर "मचान" पर अथवा "पतवा"में छिपकर बैठ जानेसे उस बकरीको पकड़नेके लिए वह कभी-कभी सामने निकल आता है। परन्तु बहुत ही सावधानीके साथ चौकन्ने होकर ये आते हैं। यदि उन्हें थोड़ी भी आहट लग गयी या शिकारीकी झलक देख पड़ गयी तो फौरन् नौ-दो ग्यारह हो जाते है। यहाँ तक कि यदि उनकी दृष्टिमें "पतवे" की पत्तियाँ उलटी लगी देख पड़ती है तो यह उनको प्रकृतिके प्रतिकूल प्रतीत होती हैं और यह ऐसा बुद्धिमान् पशु होता है कि सन्देह उत्पन्न होते ही निकट आनेको कौन कहे दूरसे ही पलायमान हो जाता है। परन्तु प्रायः ये अपने मारे हुए गाय या भैंसके बछवोंको दूसरे दिन सूर्यास्तके पहले ही खाने आ जाते हैं। तब यदि शान्तिसे और पर्याप्त आड़में अति सावधानीसे शिकारी छिपा

बैठा हो तो उस समय इन्हें आसानीसे मार सकता है। अन्यथा ऐसे चालाक पशुका हाथ आना कठिन ही है।

मचान :

"मचान" और "पतवा" ये दोनों शब्द आगे चलकर कई स्थलपर प्रयुक्त होंगे। यद्यपि शिकारी और बहुतेरे लोग भी इन शब्दोंसे भली-भाँति परिचित होंगे ही परन्तु सम्भवतः कुछ पाठकगण अनभिज्ञ होनेसे कदाचित् इनका यथार्थ अर्थ न जानते हों तो इनका सूक्ष्ममें यहा समझा देना अनुचित न होगा।

"मचान" शब्द तो अब अंग्रेजीमें भी प्रयोग होने लगा है। जंगलसे ही लकड़ी काटकर किसी वृक्षके ऊपर दो-तीन शिकारियोंके बैठने योग्य जो स्थान बनाया जाता है उसे मचान कहते हैं। कहीं-कहीं गाँववाले अपने यहाँ की बाँध अथवा रस्सीकी छोटी चारपई ही उलटकर वृक्षों पर बाँध देते हैं। इसपर बैठनेमें अधिक आराम मिलता है।

इन मचानोंको चारों ओर हरे पत्तोंकी छोटी-छोटी टहनियोंसे आच्छादित कर दिया जाता है जिसमें जानवर शिकारीको किसी भी प्रकार देख न सके। उनके बीच-बीचमें केवल बन्दूककी नाल जानेके लिए और शिकारीके जानवर देखनेके लिए गोल-गोल छिद्र बना दिया जाता है।

मचानसे दो मुख्य लाभ है। एक तो जब बड़े हिंस्रक पशु जैसे व्याघ्र आदिके शिकारमें मचान पर्याप्त ऊंची बनाई जाती है। यह पृथ्वीसे लगभग बारह फुट भी ऊपर होती है जिससे बहुत सुरक्षां रहती है। दूसरे ऊँचेपर होनेके कारण शिकारीकी दृष्टि दूरतक फैल सकती है। अतः वह जानवरको पहले ही देख सकता है, तथा उसे मारनेका समय और सुअवसर अधिक मिल पाता है जो जमीन पर रहनेसे घनी झाड़ियों आदिके कारण बिलकुल नहीं मिलता।

विशेषकर रात्रिमें जब भैंसा बाँधकर अथवा "मरी" पर शेरकी प्रतीक्षामें बैठा जाय तो जमीनमें बैठनेसे धोखा होनेका पूरा सन्देह है। शेर यदि नरभक्षी हुआ तो शिकारीको पता भी नहीं लगेगा कि वह कब और किधरसे आया, कदाचित् एक चीखका अवसर मिले अथवा वह भी न मिले।

परन्तु मचानपर चढ़नेके पहले शिकारीको स्वयं देख लेना चाहिए कि मचान सुदृढ़ बनी है और नये बम्वर अथवा रस्सीसे बन्धी है, नहीं तो ठीक समयपर पूरा धोखा होता है, जैसा कि "जवाड़ खोहकी शेरनी"-के समय मुझे हुआ था। उसका विवरण आगे आवेगा। भाग्यवश हम लोगोंके पास एक पुलिंदा नयी सूतकी डोरीका था जिससे जल्दी-जल्दी मचानको पुरानी लगी बम्वरकी जगह बाँधा और वह भी कुछ थोड़े ही हिस्सोंमें बांध पाया। अतः शिकारीको ऐसे समय पर्याप्त नयी रस्सी रखे रहना चाहिए।

पतवा :

"पतवा" शब्द जमीनके मचानको कहते हैं। घने झाड़ियोंके पास उसी प्रकार चारों ओर हरे पत्तोंकी टहनियोंसे घिरा हुआ शिकारियोंको बैठनेके लिए जो स्थान बनाया जाय उसे "पतवा" कहते हैं।

जहाँ विशेष भयकी बात न हो तथा जल्दीका काम हो तो वहाँ इससे काम भलीभाँति हो जाता है, कारण इसको बनानेमें विशेष समय नहीं लगता।

चीते तकके शिकारके लिए जब बकरी बाँधकर बैठते हैं, तो प्रायः "पतवा"में ही बैठा जाता है। चीता यदि नरभक्षी न हुआ तो उसके आखेटके लिए मचानकी विशेष आवश्यकता नहीं होती। यद्यपि अनेकों शिकारी चीतेके लिए भी मचान पर ही बैठना पसन्द करते हैं, कारण प्रायः देखा गया है कि चीते पतवेमें कूदकर शिकारीपर आक्रमण कर देते हैं।

व्याल मृग = चित्रक = शिकारी चीता :

इन चीतोंमें एक सबसे छोटे मुखाकारका "शिकारी चीता" होता है। यह अन्य चीते क्या तेंदुओंसे भी अधिक ऊँचा पर बहुत पतला और हलका होता है। इसका गुल बिलकुल साफ गोल-गोल स्याहीके धब्बेके ऐसा होता है और उन धब्बोंके बीच अन्य चीतोंकी तरह सफेदी देख नहीं पड़ती, कारण वह पूरा काला होता है, जैसे यह चिह्न है—●

इसकी टांगे शिकारी कुत्ते अथवा (Grey Hound) की तरह पतली और लम्बी होती है। इसीलिए यह बहुत द्रुत गतिसे दौड़ सकता है। कहावत तो यह है कि यह जानवरोंमें सबसे तेज दौड़ सकता है। इनका वेग बीस सेकेण्डमें आध मीलका है। उनकी दौड़नेकी शक्ति इसीसे विदित होती है कि ये भागते हुए हरिनको, जो भागनेमें सबसे तेज कहा जाता है, पाँच सौ छः सौ गज जाते-जाते पकड़ लेते हैं।

नख :

इनके नख अन्य चीतों व शेरोंकी भाँति अपने म्यानके अन्दर पूरे नहीं चले जाते, क्योंकि इनकी म्यान छोटी होती है।

नखोंके जरिये शिकार :

पुराने समयके राजे रजवाड़े या बादशाह इनको हरिन पकड़नेके ही लिए पालते थे, तथा इन्हें बैलगाड़ीपर बैठाकर, आँखमें पट्टी बाँध कर शिकारमें ले जाते थे, और जहाँ हरिनका झुण्ड देखते थे तो वहीं गाड़ी रोककर आँखों परसे पट्टी खोलकर हरिनोंकी ओर दिखाकर इसे छोड़ देते थे।

पहले तो यह दुबकता हुआ हरिनोके समीप पहुँचनेका प्रयत्न करता है। इतनेमें हरिनोंको जब पता चल जाता है और वे भाग खड़े होते हैं, तब इसका वेग देखनेमें आता है कि किस वायुके वेगसे यह उनका

पीछा करता है। इधर शिकारी लोग भी घोड़े पर चढ़कर पीछा करते हैं, परन्तु बहुत पीछे रह जाते हैं। पर वह आधे मील जाते-जाते हरिनको पकड़ ही लेता है।

इस जातिका प्रायः अन्त-सा हो गया है। भारतवर्षके उत्तरी प्रदेशोंमें सिवालिक पहाड़ियोंमें ये पाये जाते थे। कभी-कभी विन्ध्य-पर्वतोंमें और उसके दक्षिण ओर भी देखे गये हैं। ये ईरान व अफ्रिकामें भी पाये गये हैं।

बचपनमें पकड़े गये चीते कभी हरिनको नहीं पकड़ पाते। ये बड़े होने पर भी उतना तेज दौड़ नहीं सकते। जंगलमें ही पलने तथा बड़े होने पर ये हरिनोंको पकड़नेके लिए बड़ी उछाल सीख लेते हैं, और तब इनको पकड़ कर कुछ दिन पालनेके पश्चात् इनको हरिन पकड़ना सिखाया जाता है। अब तो इस प्रकारके शिकारका अन्त ही हो गया।

बन्तरेका तेंदुआ:

मिर्जापुर नहर विभागके एक इन्जिनियर मित्रने जून सन् १९३० में शेर, भालू व चीते आदि बड़े पशुओंका शिकार करनेके लिए राबर्ट्सगंजसे मुझे निमन्त्रण भेजा।

उस समय गर्मीका कहना क्या था, सायंका तापमान ११५ फा० था। कहीं भो बाहर निकलनेका साहस नहीं होता था। परन्तु शिकारका भी व्यसन ऐसा है कि उस समय कोई भी ऋतु नहीं सताती जबतक कि आप शिकारमें व्यस्त हैं।

दूसरे मैंने यह भो सुना था कि गर्मियोंमें बड़े जानवरोंका शिकार आसानोसे हो सकता है। कारण उस समय जंगल प्रायः सूखा रहता है। प्रत्येक स्थानोंमें पशुओंको पोने योग्य जल नहीं मिलता तथा हरियाली कम रहनेसे दूरसे हो जानवर दिख भी जाते हैं।

मिर्जापुरसे राबर्ट्सगंज पूरे पचास मीलपर है और वह वहाँकी एक

बड़ी तहसीलोंमें-से है। कुछ साल याने चालीस वर्ष पूर्व वहाँ एक्कोंसे जाया जाता था। सवारी और घोड़ेके अनुसार तीनसे पाँच दिनोंमें लोग वहाँ पहुँचते थे। यदि सवारी भारी न हुई और अच्छे और तेज हुए तो दो दिनमें भी पहुँच जाते थे। अब तो मोटरें, लारियाँ तथा ट्रेन भी जाने लगी हैं।

रास्ते भर दोनों ओर मैदान है तथा उन मैदानोंमें नाना प्रकारके वृक्ष और झाड़ियाँ हैं। इसीलिए एक समय वहाँपर झुण्ड-के-झुण्ड हरिन मिलते थे जो अब तो एक भी नहीं देख पड़ते क्योंकि प्रतिवर्ष वे सैकड़ोंकी संख्यामें मारे जाते थे। एक स्थानमें तो दोनों ओर घना जंगल है और बीचमें गहरा नाला बहता है। कुछ लोगोंका कहना है कि पहले वहाँ शेर भी आ जाते थे।

इधर दो वर्षोंसे अपनी गवर्नमेण्ट द्वारा वहाँके विविध प्रकारके वन्य-पशुओंके रक्षणार्थ कई मीलोंका सुरक्षित स्थान छुड़वा दिया गया है जिससे कुछ वर्षोंमें उनकी वृद्धि होनेकी सम्भावना की जा सकती है।

१४ जूनको प्रातःकाल मैं मोटरसे चल पड़ा और दो घण्टेमें मिर्जापुर पहुँच गया। परन्तु गर्मी बढ़ती देख और वहाँसे पचास मील लम्बे रास्तेका ध्यानकर वह दिन मिर्जापुर हीमें बिताना श्रेयस्कर समझा तथा सायंकाल पाँच बजे चलकर रात ग्यारह बजे राबर्ट्संगंज पहुँचे, जहाँ अपने मित्रके निकट ही वाले नहरके बंगलेमें ठहरे तथा तीन दिन वहाँ बड़े आरामसे रहे।

सिलहटका तेंदुआ :

राबर्ट्संगंजसे सिलहट लगभग अट्ठाइस मील है। वहाँ भी कर्मनासा नदीको बाँधकर नहर निकाली है तथा नहरका एक छोटा-सा बंगला नदीके ऊपर ही बना हुआ है। वहाँसे दृश्य भी बहुत ही सुन्दर है और स्थान भी रमणीक है। इसका वर्णन "सिलहटके सांभर" में आ चुका

है। परन्तु न जाने क्यों मुझे वह स्थान मनहूस ही लगता है। वहांका पानी भी अच्छा नहीं है।

वहांके ठाकुर साहेब एक प्रतिष्ठित जमींदार थे तथा हम लोगोंके भी परिचित थे। उन्होंने अपने जंगलमें शेरके शिकार हेतु भैंसा बँधवा दिया था। राबट्र्सगंजमें तीन दिन ठहरनेके उपरान्त सिलहटसे खबर आयी कि भैंसको शेरने तोड़ा है, अतः हमलोग शीघ्र तैयार होकर मोटरसे वहाँ पहुँचे।

वहाँ हँकवे इकट्ठे हो चुके थे तथा मचान भी बँध चुका था, अतः ठाकुर साहेब हमलोगोंको सीधे मचानपर लिवा ले गये और हाँका शुरू हो गया।

शिकार खेलते-खेलते कुछ ऐसा अन्तर्ज्ञान हो गया है कि इस समय जानवर मिलेगा अथवा नहीं, इसका कुछ बोध हो जाता है। अतः मचानपर बैठते ही मनमें सन्देह हुआ कि कदाचित् व्याघ्रका सामना न होवे और हुआ भी ऐसा ही। थोड़ी ही देरमें निकट ही एक ओरसे शेरका गर्जन सुना और ऐसा प्रतीत हुआ कि "ठौंक" को तोड़ाकर जानवर दूसरी ओर निकल गया। इस बातकी सूचना धीरेसे मैंने इन्जिनियर साहेब व ठाकुर साहेबको दे दी। इतनी देरमें हँकवे भी निकल आये और उनसे भी मेरे कथनकी पुष्टि हो गयी कि एक ओर समीपके नालेसे जानवर निकल भागा। मुझे सन्देह हुआ कि ठोंकवालेकी गलतीसे अथवा वह गलत जगहके वृक्षपर बैठाया गया था जिस कारण व्याघ्र हमलोगोंके सामने नहीं आ पाया। यद्यपि कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि ठोंक ठीक होनेपर भी जानवर उसकी उपेक्षाकर मचानके सामने न आकर दूसरी ओर चला गया।

ठोंक :

"ठोंक" शब्दके अर्थका यहींपर स्पष्टीकरण कर देना अनुपयुक्त न होगा। हँकवेके शिकारमें "ठोंक"का स्थान बहुत महत्त्व रखता है। हँकवोंमें-

से जो-जो अधिक अनुभवी होते हैं तथा जिनपर भरोसा किया जा सकता है उन्हीं लोगोंको चुन-चुनकर "ठोंक"के लिए विलग कर दिया जाता है। हांका आरम्भ करनेके पूर्व जिस जंगलके टुकड़ेको हँकाना है उसके दोनों ओरके वृक्षोंपर ये लोग चढ़ जाते हैं। इन लोगोंका कार्य यह होता है कि हांकेके समय में जब जानवरकी प्रवृत्ति सीधे निर्धारित मार्गसे न जाकर किसी ओर मुड़ जानेकी होती है, तब उस समय इस ओरके वृक्षारोही अपने वृक्षके तनेको धीरेसे एक छोटी लकड़ीसे ठोंक देते हैं। उस ठोंकका शब्द सुनकर और यह समझकर कि इधर कई मनुष्य हैं वह स्वभावतः पुनः सीधे जाने लगता है। इसी प्रकार जानवरको हँकाते हुए यथा-साध्य निर्धारित मार्गसे ही ले जानेका प्रयत्न किया जाता है कि वह पूर्व-निश्चित मचानके ही सम्मुख अथवा निकट ही निकले।

यदि एक सौ हँकवेवाले हैं तो आधेसे अधिक लगभग साठ-सत्तर व्यक्तियों कोठोंकके कार्यके लिए भेजा जाता है, शेष तीस-चालीसको हांकेके लिए पर्याप्त समझा जाता है। इनकी न्यूनाधिक संख्या जंगलके प्रकार पर भी निर्भर है। किसी-किसी जंगलमें अस्सी 'ठोंक'की आवश्यकता होगी तथा किसीमें केवल बीस 'ठोंक' और अस्सी 'हंकवों'की, जैसा जंगल हो। और यदि बहुत बड़े जंगलको हँकवाना है तथा एक मीलसे हांका करवाना है जैसा कि मिरजापुरके जंगलोंकी पद्धति है तो लगभग ५०० आदमियों तककी आवश्यकता पड़ जाती है। परन्तु प्रत्येक अवस्थाओंमें अच्छे ठोंककी परम आवश्यकता है और तभी जानवरके मिलनेकी अधिक सम्भावना हो सकती है। अतः हांकेके शिकारमें 'ठोंक'का स्थान महत्वपूर्ण है।

मरी :

दूसरा सांकेतिक शब्द 'मरी' है। जैसा कि पहले भी बतलाया जा चुका है, शेर अथवा चीता जिस जानवरको मारते हैं, उसके शवको 'मरी' कहते हैं।

घंघरौल :

राबर्ट्सगंज पहुँचनेके पहले बीचमें घनरौलका विशाल बाँध पड़ता है, जो घाघर नदीको बाँधकर बनाया गया हैं। भारतमें यह दूसरा सबसे बड़ा जलाशय कहा जाता है। इसका पानी "डोंगिया" तथा "मड़िहान" तक भेजा जाता है। इससे बहुत दूर-दूर तक नहरें निकाली गई हैं। प्राचीनकालमें इसी स्थानपर पहाड़ीके ऊपर विजयगढ़का एक किला था। उसके अवशेष अभी भी विद्यमान हैं। उसका पुराना दरवाजा और दिवालका कुछ हिस्सा अभी भी जलाशयके अन्दर है।

सिलहटसे लौटते समय इस किलेके एकाध टापुओं पर हमें मगर पड़े हुए देख पड़े। यदि शेर मिल गया होता तो कदाचित् इनपर गोली चलानेकी इच्छा भी न होती, परन्तु खाली हाथ लौट रहे थे अतः इंजीनियर साहबसे अनुरोध पर मोटरसे उतरकर उन्हीं पर निशाने लगाये। दो घण्टेमें दो मगर मिले और उन दोनोंको उन्हींको दे दिया।

संध्या होते-होते हम राबर्ट्सगंज लौट आये तथा दूसरे दिन राजा बड़हरसे आज्ञा लेकर उनके बन्तरेके जंगलमें भैंसा बँधवाया :

दूसरे ही दिन प्रातः हमें सूचना मिली कि एक तेंदुयेने उसको तोड़ा है। मैंने तो शेर मारनेकी इच्छासे भैंसा बँधवाया था अतः मैंने सोचा कि कदाचित् पड़वा छोटा रहनेसे तेंदुयेने मार दिया होगा। इस कारण दूसरी बार कुछ बड़ा भैंसा बांधनेको कहा। तीसरे दिन विदित हुआ कि इसको भी उसी तेंदुयेने मार डाला।

अब बड़ी चिन्ता हुई कि क्या करूँ। इस बार एक तीसरा भैंसा बँधवाया जो उन दोनोंसे भी बड़ा था। बहुत बड़ा भैंसा भी बंधवाना उचित नहीं क्योंकि शेर भी बहुत बड़े भैंसेके निकट नहीं जाता। चौथे दिन जब इस भैंसेको भी उस तेंदुयेने मार दिया तब इसका मारना अनिवार्य हो गया। वहांके शिकारियोंने भी कहा कि अब जबतक इसको मार न लीजिगेगा तबतक कोई शेर हाथ न आवेगा तथा यह जानवर

भी काफी बड़ा है। कुछ भैंसे मारकुण्डी घाटके नीचे भी बंधवाये थे, परन्तु उनके मारे जानेकी कोई सूचना न मिली जिससे इसी निष्कर्षपर पहुँचे कि उस समय आसपासके जंगलमें कोई शेर नहीं है।

इस बीच हमारे दोनों बड़े भाई, मामाजी तथा मेरे बड़े भतीजे हर्षबर्धन देव भी आ गये। इन दोनोंके साथ मढ़ियान तथा सेरुआ तक घूमे परन्तु न तो कोई दूसरे पशु ही हाथ आये और न शेर ही का पता चला। तब मैंने मामाजीसे अनुरोध किया कि कृपाकर आप अपने निरीक्षणमें एक बड़ी-सी और दृढ़ मचान बंधवायें जिसपर हम सब आरामसे निर्भय होकर बैठ सकें। मेरा भतोजा हर्ष भी कुछ सीखनेके ध्यानसे उनके साथ हो गया।

आखिरी भैंसेकी मरीके पास ही एक बड़ा वटवृक्ष था। पृथ्वीसे केवल आठ-दस फीट ऊपर उसी वृक्ष पर एक बड़ा मचान बँधवा कर जब वे लौट रहे थे तो एक बड़ी चट्टानके नीचे एक पतली दुम देख पडी। वह यह समझ कर कि पूँछ कदाचित कोई छिपकली अथवा गिरगिटानकी होगी उसकी उपेक्षा कर उस चट्टान पर पैर रख आगे बढ़े। इतनेमें बच्चेने जो पीछे था देखा कि बहुत बड़ा विषधर काला सर्प उसके नीचेसे निकल कर धीरे-धीरे दूसरी ओर चला। बच्चेके पुकारने पर मामाजीने उलट कर देखा तथा उस विशालकाय सर्पको देखकर स्तम्भित हो गये। परमात्माने उन्हें कालके मुखसे बचाया। दो कारणों से उन्होंने उस सर्प पर गोली नहीं चलायी। एक तो इसलिए कि बन्दूककी आवाज होनेसे तेंदुआ सावधान हो जाता तथा उसके आनेकी सम्भावना कम हो जाती। दूसरे उस समय उनके पास कोई छोटे छर्रेका कारतूस भी न था। बड़े छर्रेके कारतूससे सर्प नहीं मारा जाता। उसमें छर्रे बड़े-बड़े और कम रहनेसे छितरा अधिक जाते हैं। अतएव उससे सर्पोंपर निशाना नहीं लगता, इनके लिए छोटे छर्रे ही अपेक्षित हैं। अतः सर्पको छोड़ वह दोनों व्यक्ति सकुशल बँगले लौट आये तथा हमलोगोंको सब

वृत्तान्त सुनाया। कुछ लोग शिकारमें इस प्रकारसे सर्पके दर्शनको शुभ कहते हैं।

मचानपर बैठनेके लिए हमलोगोंको शीघ्र तैयार होना था। परन्तु भाई लोगोंने निर्णय किया कि शिकारमें केवल मैं ही जाऊँ तथा शिक्षण-हेतु हर्षको साथ लेता जाऊँ।

हमलोग तीन ही बजे बँगलेसे चल पड़े। एक तो गरमीका दिन, दूसरे बँगलेसे दो-तीन मील जाना, सो चलते-चलते हम दोनों एकदम क्लान्त हो गये। बीचमें मार्गमें एक स्थानपर बहुत बड़ा गोह देख पड़ा जो लगभग पाँच फुट लम्बा होगा परन्तु उसे मारा नहीं। हमलोगोंको देखते ही वह बड़े वेग से भागा। चार बजते-बजते हमलोग मचानके पास पहुँचे।

"मरी" मचानसे लगभग दस-पन्द्रह गज दूरीपर थी। मचान बहुत अच्छी, बड़ी दृढ़ बनी थी। पहले मैंने हर्षको चढ़ाया, तब मैं चढ़ा तथा शिकारी पीछेसे चढ़कर सीढ़ीके पास ही बैठ गया। चार-पाँच श्रमिक जो साथ आये थे वे बोलते हुए लौट पड़े और सम्भवतः तीन-चार सौ गज पीछे किसी पेड़ पर चढ़ गये। हमलोग भी आरामसे परन्तु सावधानीके साथ मचान पर बैठे तथा मचानको चारों ओरसे हरे पत्तोंकी डालियोंसे ढँक लिया, जिनके बीच-बीचमें छोटे मोखे बना लिये थे और उसीमें-से बाहर देखते जाते थे।

मचानकी एक ओर थोड़ी ही दूरपर एक पहाड़ी थी। सबका अनुमान था कि सम्भवतः उसी पहाड़ीको किसी कन्दरामें उस तेंदुयेका वास था, तथा यदि हमलोगोंके द्वारा किसी प्रकारका कोलाहल या शब्द आदि न हुआ तो वह सूर्य डूबनेके पहले ही निकल आयेगा और वह अनुमान सत्य ही निकला।

मचान पर हमलोग जल्दी ही पहुँच गये थे—जो सदैव उचित है, कारण विलम्बसे पहुँचनेमें जानवरके भड़क जानेका अन्देशा रहता है—

अतः हमलोगोंको पूरे डेढ़ घण्टे प्रतीक्षा करनी पड़ी, जो केवल सीधी-सादी प्रतीक्षा न थी वरन् पूरी तपस्या थी। उतनी देर तक एक ही आसनसे बैठना पड़ता है। शिकारी यदि थोड़ा भी हिला और जानवरको उसका कोई भी अंग दृष्टिगोचर हो गया अथवा मचान ही हिलने लगी तो वह तुरन्त भाग जायगा। चीते प्रायः दूरसे ही आहट ले लेते हैं। यदि उन्हें किसी प्रकारके भयका आभास हुआ तो वे तत्काल वहींसे लौट जाते हैं।

बच्चा बैठे-बैठे थक गया और उसको नींद आने लगी। उसने धीरे-से कहा कि "चाचाजी मुझे बड़ी जोरसे नींद आ रही है, मैं सो जाता हूँ, जब जानवर आवे तो मुझे उठा दीजियेगा। "मैंने भी देखा कि नींद-के मारे उसकी आँखें खुली नहीं रह पा रही हैं। दूसरे उसके सो जानेसे हिलने डोलनेकी आशंका भी कम हो जायगी। यह सोच समझकर मैंने उसको सोने दिया। किन्तु बीचमें भय हुआ कि यदि सोनेमें कहीं उसकी नाक बोलने लगे तो लेनेके देने पड़ जायँगे। फिर भी थोड़ी देर तक उसे सोने दिया किन्तु बीच-बीचमें जगा देता था।

सूर्यास्त हो चला, किन्तु तेंदुयेकी कोई आहट न लगी तो मुझे थोड़ी चिन्ता हुई, कारणमें वहाँ रात्रि बिताना नहीं चाहता था, अतः मैंने धीरेसे शिकारीसे कहा कि देर होती है अब लौटूंगा, क्योंकि यहाँ रात्रि नहीं करना चाहता। उसने कहा थोड़ी देर और ठहर जाइये, सूर्यास्त पूरा हो जाने दीजिये और यदि तबतक भी जानवर न आवे तब लौट चलेंगे। अतः कुछ देर और चुप बैठे मोखोंमें से दृष्टि लगाये देखते रहे। कहनेको तो मैं चुपचाप बैठा था किन्तु पूर्ण रूपसे सतर्क होकर एक ही आसनसे घण्टे भरके ऊपर बैठे रहनेमें तथा चारों और दृष्टि दौड़ाते रहने में बड़ा परिश्रम पड़ता है। इसलिए अब मैं थक भी चला था।

इतनेमें झाड़ियोंके बीच किसी पशुकी झलक देख पड़ी। मैंने धीरेसे बच्चेको जगाया तथा राइफलको सावधानीसे सम्भालकर उसी ओर

अपलक देखने लगा। बच्चा भी चौंककर नहीं उठा, अपितु सम्भलकर मोखोंमें से पुनः देखने लगा। सहसा मुझको जंगलके बीच झाड़ियोंमें से चलता हुआ तेंदुआ स्पष्ट देख पड़ा। जंगलमें पगडंडियाँ बहुत होती हैं और इस प्रकारके हिंस्रक पशु प्रायः उन्हीं पगडंडियों परसे चलते हैं कि जिसमें उनके मुलायम तलुओंमें काँटे आदि नहीं चुभें तथा सूखे पत्तों व डालियों पर पैर न पड़े कि कोई शब्द हो। इन मार्गोंको तभी छोड़ते हैं जब इन्हें किसी प्रकारका भय प्रतीत हो। वहाँ भी उस स्थान पर अनेकों पगडंडियाँ थीं परन्तु मैंने समझा कि वह अपने पासवाली पगडण्डी-से ही आवेगा। किन्तु मेरे देखते-देखते वह दृष्टिसे एकदम ओझल हो गया। कब और किधर चला गया कुछ पता नहीं चला। थोड़ी देर तक मैंने उसी मोखेसे बहुत इधर-उधर देखा, परन्तु जब कहीं नहीं देख पड़ा तो मैंने अनुमान किया कि कदाचित् उसने हम लोगोंको किसी प्रकार देख लिया और इसी कारण चला गया। परन्तु बात ऐसी न थी बल्कि वह जंगलमें छिपकर झाड़ियोंकी ओटमें बैठा हुआ चारों ओरकी आहट ले रहा था। दूसरे मैंने समझा था कि उसी पगडण्डीसे आवेगा, इसलिए उसी ओरके मोखेमें से राइफलकी नाल निकाले हुए मैं देख रहा था, अतः पगडण्डी छोड़कर जंगलमें प्रवेश कर जानेसे मुझे देख नहीं पड़ा। जब वह देख नहीं पड़ा तो स्वभावतः बहुत खेद हुआ। इतनेमें सौभाग्यवश जो दूसरे मोखेसे दृष्टि दौड़ाई तो सामने "मरी"के पास ही उस तेंदुयेको बैठा हुआ पाया। वह कब जंगलके बाहर निकल आया और किस पगडण्डीसे तथा कितनी देरसे बैठा हुआ चारों ओर निरीक्षणकर रहा था, इसका कुछ पता नहीं।

थोड़ी देर तक तो मैं चुपचाप उसको देखता रहा। यदि थोड़ा भी हिलता तो उसको तत्काल पता चल जाता क्योंकि अधिकतर वह हम लोगोंकी मचानकी ही ओर देख रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि उसके मनमें कुछ सन्देह हो रहा है कि इस वृक्षमें कुछ अस्वाभाविकता है तथा सदाकी भाँति नहीं देख पड़ता, अवश्य इसमें कुछ विशेषता आ

गयी है। परन्तु कोई असाधारणता उसकी समझमें नहीं आयी, क्योंकि हम लोगोंने अपने चारों ओर पत्तोंकी डालियोंको भी सीधा लगाया था। पेड़में जैसी डालियाँ रहती हैं यथा सम्भव उसी प्रकार लगानेका प्रयत्न किया था। थोड़ी देर तक तो मैं उसको मनोरंजक भावभंगिमाओं-का आनन्द लेता रहा। तेंदुआ अपनी पिछली टांगोंपर बैठा हुआ था, सामने उसकी सफेद छाती साफ झलक रही थी। मालूम होता था कि वह बड़े निश्चिन्तभावसे बैठा हुआ है, परन्तु बात ऐसी न थी। वह बड़ी सतर्कतासे बैठा था तथा चारों ओर गरदन घुमा-घुमाकर आहट लेता जाता था, पर जब कभी उसकी दृष्टि "मरी" पर पड़ती तो भोजनके पूर्वास्वादनसे ही उसकी जिह्वासे लार टपकने लगती और वह अपने ओठोंको चाटने लगता। थोड़ी देर तक तो मैंने इस मनोरञ्जक दृश्यका खूब आनन्द उठाया तथा इस विचारसे और विलम्ब किया कि जब वह अपने भोजनमें संलग्न हो जाय और उसकी दृष्टि हमलोगोंकी ओरसे हटे तब उसे मारूँ। परन्तु देखा कि जबतक उसको पूर्ण भरोसा न हो जायगा कि कहीं किसी प्रकारके भयकी बात नहीं है तबतक वह न "मरी" के पास ही आवेगा और न उसको खाना आरम्भ करेगा। उसको किसी बातकी जल्दी तो थी नहीं, भोजन सामने पड़ा था तथा भोजन करनेको सारी रात पड़ी थी, चिन्ता केवल अन्देशेकी थी। परन्तु मुझको तो अब इस बातका भय होने लगा कि कहीं उसके मनमें थोड़ी भी आशंका उत्पन्न हुई अथवा कहीं बच्चा-जी थोड़ा भी हिले तो वह तुरन्त भाग जायगा।

यह विचार आते ही जैसे ही उसने दूसरी ओर दृष्टि घुमायी कि झट मैंने उसकी ओरवाले मोखेमें राइफलकी नालकी, और बच्चेको इशारा कर ठीक उसकी छातीमें गोली मारी। बच्चेने भी तुरन्त गोली चलायी। दोनों गोलीके चलते ही उसने एक बारगी पीछेकी ओर बडी ऊँची उलटी कुदाल ली तथा उस घने जंगलमें ओझल हो गया।

गोली चलनेके उपरान्त एक बार कुछ क्षणके लिए जंगलमें बिलकुल

सन्नाटा छा जाता है। यहाँ तक कि सन्ध्या समय जो पक्षियोंका कलरव होता है वह भी शान्त पड़ जाता है। इस समय यदि घायल जानवर थोड़ा भी हिले-डोले तो उसका शब्द तत्काल सुनायी देगा अथवा यदि भागता जाय तब भी सुनायी देगा। परन्तु जब मुझे किसी प्रकारका शब्द सुनायी न दिया और न जानवर ही देख पड़ा तो कुछ समझमें नहीं आया कि वह हल्की चोट खाकर भाग गया अथवा गहरी चोट लगनेसे दुबक कर बैठा है। परन्तु निशाना खाली गया यह सन्देह मनमें नहीं उठा।

इतनी देरमें वह चार-पाँच कुली दो-दो गोलीका शब्द सुनकर आपसमें बोलते हुए मचानके निकट आ पहुँचे। हमलोगोंने संक्षेपमें उन्हें सब घटना सुनायी तथा जहाँ वह ओझल हुआ था उस स्थान पर चक्के फेंकनेको कहा। हमलोग बन्दूकमें गोली भरे तैयार थे कि यदि तेंदुआ आक्रमण करने निकला तो उसे तुरन्त दूसरी गोलीसे मारेंगे। परन्तु बहुत चक्के चलानेपर भी जब कुछ न हुआ तो हमलोग मचानसे उतरे और बड़ी सतर्कतासे आगे बढ़े। थोड़ी ही देर ढूँढनेके उपरान्त वह सामने पड़ा हुआ देख पड़ा, मैंने पुनः उसपर चक्के फेंकनेंको कहा। परन्तु वह निष्प्राण हो चुका था अतः जरा-सा भी नहीं हिला।

तेंदुआ बहुत ही बड़ा था। यहाँतक कि कलाई उसकी हमारे हाथोंमें नहीं जाती था और भारी तो इतना था कि दो आदमी भी उसे उठा नहीं सकते थे तथा साढ़े सात फुटसे कुछ अधिक ही लम्बा था। वहाँ उसको "कोदइलवा" कहते थे।

घर लौटकर उसका चर्म उतरवानेपर पता चला कि मेरी गोली उसकी छातीकी तीन-चार पसलियाँ तोड़ती हुई हृदय और फेफड़ेको पारकर पीठके चमड़ेमें अटक गयी। बच्चेकी गोलीका बाह्य शरीरमें कहीं पता नहीं चला। परन्तु चीरते समय एक गोली उसके पेटके अन्दर मिली मानो भोजनकी नली द्वारा पेटमें उतर गयी हो। बहुत सम्भव

है मेरी गोली लगते ही उसने मुँह खोला हो और बच्चेकी गोली जो उसी क्षण चली मुख द्वारा पेटमें उतर गयी।

इसके मारनेके उपरान्त चार दिनतक हमलोग वहीं रहे परन्तु भैंसे टूटनेकी सूचना कहींसे भी नही मिली। एक दिन सुना कि "सिलहट"में शेर है पर पुनः वहाँ जानेकी इच्छा नहीं हुई। फिर सब भैंसे खुलवा दिये और सबका हिसाबकर घर लौट आये। यह मेरा पहला हिंसक पशु था अतः मेरे मनमें इसे पानेका बड़ा आह्लाद था। बच्चेकी भी गोली लगनेकी हम सभीको बहुत प्रसन्नता थी। उस सोलह-सत्रह वर्षकी अवस्थामें शान्त स्थिर भावसे तेंदुयेपर गोली चलाना वस्तुतः प्रशंसनीय था अतः मैंने उसे भी खूब शाबासी दी। उसे मैं तेंदुयेका तमाशा दिखला सका तथा उससे भी गोली चलवा सका इसकी मुझे विशेष प्रसन्नता थी।

छातोंका तेंदुआ :

सन् १९३७ की गर्मियोंकी बात है जबकि अकर्मण्य ऐसे खसकी टट्टियोंमें पड़े-पड़े जी ऊब गया था। बच्चोंको भी स्कूलसे छुट्टियां मिल गयी थीं, अतएव मनोरञ्जनार्थ तथा जलवायु परिवर्तनार्थ मामाजीसहित सकुटुम्ब मिर्जापुरके जंगलोंमें घूमनेके हेतु १० जूनको हम पुरानी मोटर-पर चढ़कर निकल पड़े।

ग्रीष्म ऋतुके कारण प्रातः ही प्रस्थान किया। लगभग तीन घण्टेमें मिर्जापुर पहुँचकर अपने एक मित्रके बंगलेमें ठहर गये। उनके यहाँ बिजली, पानी आदिकी सभी सुविधाएँ थीं। उन्होंने एक कुञ्ज भी बना रक्खा था जिसके भीतर बैठ जानेसे बाहरकी ग्रीष्मकालीन उत्तप्त लू व गर्मीसे बहुत बचत हो जाती थी। किन्तु उस कुञ्जमें चारों ओरसे बन्द-बन्द कुछ घबड़ाहट भी होती थी तथा बंगलेमें तो ऐसा मालूम पड़ता था जैसे पांचों ओरसे अग्निवर्षा हो रही हो। मुझे तो एक सघन वृक्षके नीचे उसकी छायामें बैठना अधिक पसन्द था, खुला था तथा हरियाली

भी थी। किन्तु उन दिनों गर्मीकी प्रचण्डता देखते हुए वहाँसे शीघ्र ही पठार क्षेत्रोंमें जंगलोंमें जानेका विचार किया।

१२ तारीखके प्रातःकाल हमने राबर्ट्सगंजके लिए प्रस्थान किया। पूरे पचास मील जाना था और मोटर पुरानी थी। धीरे-धीरे चलाना पड़ता था अतः कहीं दोपहर तक पहुँच पाये। परन्तु यहाँ भी गर्मीने पिण्ड न छोड़ा। दिनमें तो अच्छी खासी लू बहती थीं। फिर भ। बनारस और मिर्जापुर शहरसे तो वहाँ अच्छा ही था, किन्तु वहाँ बर्फ मिलती नहीं थी, अतः उसका पूरा प्रबन्ध मिर्जापुरसे ही करना पड़ा कि प्रतिदिन आती रहे। बच्चे तो दिनभर यहीं गाते फिरते "चीनी, पानी, बर्फ, गुलाबजल" और बड़े रागसे गाते थे, जिससे उस ग्रीष्मकी लू भी उनके मधुर गानसे तरङ्गित हो उठती थी तथा हमारा ग्रीष्मजन्य कष्ट कुछ कालके लिए विस्मृत हो जाता तथा दिनभर ठण्डा पानी, शरबत पीते ही बीतता था।

दिनमें इतनी गर्मी होते हुए भी यहाँकी रातें ठण्डी तथा अत्यन्त सुखद होती थीं। अर्धरात्रिसे तो एक चादर ओढनेकी आवश्यकता पड़ जाती थी। फिर जब पछुवा हवा बहती थी तो पीनेका पानी घड़ेमें ही खूब ठण्ढा मिल जाता था, जिससे बर्फकी उतनी आवश्यकता न होती थी।

वहाँ बंगलेके समीप पीपल और वट मिला हुआ एक विशाल वृक्ष है, जिसके नीचे एक बड़ा-सा चबूतरा बना है। हमलोग प्रायः प्रातःकाल वहीं बैठते-उठते तथा भोजन भी वहाँ बनाते थे। किन्तु एक दिन वहाँ बहुत दुर्गन्ध प्रतीत हुई। हमने चारों ओर बहुत दृष्टि दौड़ाई पर कहीं कोई मृत पशु देख न पड़ा। कौतूहलवश उसी पेड़पर नौकरको चढ़ाया। वृक्षके तनेके ऊपर ही दो शाखाओंके बीच उसे एक मृत बछिया देख पड़ी। पता लगानेपर मालूम हुआ कि चार-पांच दिन पूर्व सायंकाल तेंदुआ एक बछियाको उठा ले गया था। जब दौड़ाया गया

तो भागकर उसको लिये-दिये शीघ्रतासे पेड़पर चढ़ गया। रात हो जानेसे गाँववालोंको उसका पता न चला।

तेंदुये प्रायः ऐसा करते हैं कि छोटे बछवे अथवा बकरीको मारकर सुरक्षाके निमित्त पेड़पर टांग देते हैं तथा अपनी सुविधासे खाते हैं। इसीसे उनके बलका भी अनुमान हो सकता है कि बछड़ेको अपनी पीठपर लिये हुए पेड़पर चढ़ जाते हैं। बाघ तो बड़े बछड़े अथवा भैंसके पड़वेको भी पीठपर लेकर पांच-छः फुट ऊँचे "खरके"[१] को लांघ जाते हैं।

गाँवसे चर्मकारोंको बुलवाकर हमने बछिया फेंकवायी, तब कहीं हवा शुद्ध हुई और हम वहां रह सके। चार दिन वहाँ बिताये परन्तु पुरानी मोटरके खराब हो जानेसे हम कोई आनन्द न उठा सके क्योंकि कहीं घूमने निकल ही नहीं सकते थे। फलतः मोटर बदलनेके निमित्त १७ के प्रातः ही मैं अकेले बनारस लौटा तथा उसी रात एक नयी "फोर्ड" खरीदी। परन्तु मोटर नयी होनेके कारण तथा रात्रि हो जानेसे उसी समय राबर्ट्सगंज लौटना उचित न समझ घरपर ही विश्रामकर दूसरे दिन चलना निश्चय किया। इन दिनों आमका मौसम था, अतः दूसरे दिन भोजनोपरान्त ढेरों लंगड़े आमसे गाड़ी भरकर चल पड़ा।

तेज चलनेवाली नयी "फोर्ड" को आनन्दसे चलाते हुए शामको ६ बजेके पहले-पहले राबर्ट्सगंजके बंगले पहुँच गया। नयी मोटरका भोंपा सुनते ही "पापा आ गये" कहते सब बच्चे बाहर दौड़ आये तथा आमोंसे भरी नयी मोटर देखकर बड़े प्रसन्न हुए। फिर क्या था दिनमें आम खाते तथा प्रातः-सायं खूब घूमते हमलोगोंके मजे चौगुने हो गये। नित्यप्रति चालीस-पचास मील चक्कर काटते, बड़े घने वृक्षोंसे

१. बाँस, बल्लों आदिसे बनाया हुआ गाय रखनेके बाड़ेको "खरक" अथवा "खरका" कहते हैं।

आच्छादित जंगलोंकी सड़कोंपर घूमना अत्यन्त प्रिय लगता था, जहाँ ग्रीष्मका प्रवेश कठिनतासे हो पाता था।

एक दिन कुछ दूर तक घूमनेके ध्यानसे २० जूनको "घंघरौल" और "सिलहट" जानेका विचार किया। सन्ध्या तक लौट आनेके विचारसे साथमें कोई विशेष सामान भी नहीं रक्खा।

घँघरौल :

घँघरौल राबर्ट्सगंजसे लगभग बारह मील है, जिसमें चार मील तो जिला बोर्डका कच्चा रास्ता है तथा आठ-नौ मील नहरके किनारेका रास्ता बहुत ही सुन्दर है। नहरके दोनों ओर बीसों मील तक हरे-भरे खेत देख पड़ते हैं तथा कहीं-कहीं घने जंगल भी मिल जाते हैं।

घण्टे भरके अन्दर ही हमलोग घँघरौलके बांधपर पहुँच गये। यहाँका कुछ थोड़ा-सा वर्णन इसके पूर्व कर चुका हूँ। इस बांधको बनवानेमें गवर्नमेण्टके लाखों रुपये लग गये। यह बांध बहुत ही लम्बा तथा सुदृढ़ बँधा है। इसका जल लगभग पचीस वर्ग मीलके घेरेमें है। इसके बीचमें कई गाँव जलमग्न हो गये हैं। यहाँ सबसे बड़ा गाँव घँघरौलका था जिसके ऊपर सम्पूर्ण स्थानका नाम घँघरौल पड़ गया।

जहाँ असली बांध बँधा है वहाँपर पुराने जमानेमें नदीके ऊपर पुल था और जैसा पूर्व परिच्छेदमें लिख आया हूँ, सटी हुई पहाड़ीके ऊपर राजा विजयगढ़का छोटा-सा किला था जिसकी आगेकी दीवालें पुल तक थीं और उसपर एक बुलन्द दरवाजा था जिसके टूटे-फूटे हिस्से अब भी देख पड़ते हैं तथा वह विशालकाय बीस फुट दरवाजेका ऊपरी भाग अब भी पानीमें देख पड़ता है। एक बार मैं उसी समय वहाँ पहुँचा जब कि मरम्मत हेतु बांध का सभी जल निकाल दिया गया था तब किलेका यह अग्रभाग देखनेमें आया।

उस जलाशयकी छोटी-सी पहाड़ीके ऊपरसे बड़ा ही मनोहर दृश्य है। एक ओर तो मीलों पानी ही पानी है, जिसमें बीच-बीचमें बहुत

दूर-दूर कुछ टापू भी देख पड़ते हैं। किसी-किसी टापूपर मगर व चिड़ियें भी बैठे देख पड़ते हैं, जो विशेषकर शीत ऋतुमें ही दिखते हैं। ग्रीष्म-ऋतुमें तो मगर रात्रिमें जलसे बाहर निकलते हैं। एक जगह एक शिवालेकी चोटी भी पानीसे निकली हुई देख पड़ती है। एक ओर सामनेका तो यह दृश्य, दूसरी ओर पहाड़ीके पीछे घना जंगल मीलों फैला हुआ है। परन्तु इनमें वन्य पशु बहुत ही कम रह गये हैं और वन्य पशुओंसे रिक्त वन वैसा ही व्यर्थ-वीरान लगता है जैसे बिना फूले-फले वृक्ष सूने लगते हैं।

दिन भर वहाँ व्यतीत करनेके उपरान्त अपराह्ण में हमने सिलहटके लिए प्रस्थान किया। समय कम रह जानेसे कदाचित् उसी रातमें लौटने की इच्छा न हुई तथा ठहरना पड़ा तो इञ्जीनियरसे जो उस समय घँघरौलमें ही उपस्थित थे, सिलहटके बँगलेमें रात भर ठहरनेकी अनुमति ले ली।

सिलहट :

यह स्थान घँघरौलसे लगभग बीस मीलपर कर्मनासा नदीके ऊपर है। इसका भी वर्णन इसके पूर्व "बन्तरेके तेंदुये" में किया है। यह भी स्थान बहुत रमणीक है तथा गर्मियोंमें यहाँ भी उतनी गरमी नहीं पड़ती। गरम लू भी यहाँ कम बहती है पर ऊमसकी गरमी अधिक प्रतीत होती है, कारण वहाँ भी कुछ कलकत्तेके ऐसा क्लिन्न-आर्द्र, गीला-मौसम रहता है। सम्भव है वहाँ बड़े-बड़े साल व अन्य प्रकारके बड़े-बड़े वृक्षोंके घने जंगलोंके कारण ऐसा है। परन्तु बँगलेके पीछे लम्बी पहाड़ीपर छोटे ही वृक्षोंका जंगल है और वहाँ तो सूर्यका बहुत ही अधिक ताप लगता है।

सिलहटमें पानीका क्लेश अधिक है। ऐसे तो इन सभी बँगलोंमें पानीका कष्ट होता है, पर यहाँ विशेष है। कारण यहाँ नदीका जल

बहुत ही दूषित है तथा कुआँ बँगलेसे बहुत दूर है तथा उसका जल भी बहुत अच्छा नहीं है।

पर यह क्या, वहाँ पहुँचनेपर देखा कि नदी एकदम ही जलविहीन है। गरमीके कारण सारा जल सूखा पड़ा है तथा जलके स्थानपर पीली रेत दिखायी दे रही है। केवल बांधकी जगहोंमें कहीं-कहीं थोड़ा-सा जल रह गया है।

उनमें-से एक स्थानपर एक छोटा-सा मगर पड़ा हुआ देख पड़ा, जिसको मारनेमें विलम्ब नहीं किया, कारण सन्ध्या भी हो रही थी और अवसर भी अच्छा था, अतः मेरी गोली लगते ही वह वहीं रह गया। उसको उठवा मँगवाने में विलम्ब लगता और रात हो जाती, अतः उसे वहीं छोड़ दिया कि दूसरे दिन प्रातः आरामसे मँगवायेंगे। जब लानेके लिए भी आदमियोंका समुचित प्रबन्ध हो सकेगा।

शाम हो गयी थो, बाँध से लौटकर बंगले पर आये। रातमें ठहरनेके विचारसे तो आये नहीं थे अतः कोई बिस्तर साथ न था तथा गरमीका मौसम होनेसे चादर भी साथ नहीं लाये। वहांके कमरेकी दरी बिछाकर साथमें जो खाना लाये थे वही कुछ खा-पीकर यों ही लेट गये। परन्तु रातमें वहाँ ठण्ड काफी लगी। चादरके अभावमें दरवाजेके परदों को निकाल-निकाल ओढ़ना पड़ा जो एक नया अनुभव था। इञ्जीनियर मिस्टर विलसनको जब इस बातका पता चला तो मिलने पर हमारी खूब चुटकियाँ ली।

हम सब बाहर बारामदेमें ही सोये थे। प्रातःकाल जब नींद खुली और दृष्टि जो नदीकी ओर गयी तो एक बारगी समझमें नहीं आया कि नदी सूखी है अथवा मटमैले पानीसे भरी है। बहुत आँखें मलमल कर देखा, फिर भी कुछ समझमें नहीं आया तब मामाजीको उठाकर दिखलाया। बहुत आँखें गड़ाकर देखनेके बाद उन्होंने कहा कि यह तो गदला पानी भरा हुआ है। रात्रिमें पूर्व दिशामें दूर जो बिजली चमकती

देख पड़ी थी और घने बादल बरसते प्रतीत होते थे वे सत्य ही निकले, जिसने सूखी नदीको रातों ही रात जलमग्नकर दिया। नदीमें पानी आ जानेसे वहाँका आनन्द चौगुना हो गया। बच्चोंने जो प्रातः उठकर नदी भरी देखी तो वे अत्यन्त प्रसन्नतासे नाचते हुए नदी देखने दौड़ गये। परन्तु उस बाढ़में मेरा मगर बह गया।

दिन भर वहाँ बिताकर सन्ध्याको हम राबर्ट्सगंज लौट आये तथा दूसरे दिन शामको वहाँसे प्रस्थान किया और घण्टे भरमें डोंगिया पहुँच कर डेरा डाला।

डोंगिया :

यहाँ चीतेका शिकार खेलनेकी इच्छासे शिकारीको बुलवाया तथा उससे कहा कि वह चीतेका पता लगावे और उसके निमित्त एक बकरीका भी प्रबन्ध करे।

गोबरहाँ :

२५ जून को प्रातः ही एक पुराने शिकारीने सूचना दी कि "गोबरहाँ"के पास एक बड़े तेंदुयेने जिसे वहाँके गाँव वाले "कोदइलवा" कहते हैं—रातमें एक बछड़ेको मारा है। "गोबरहाँ" बंगलेसे लगभग चार मील है। वस्तुतः उस स्थानका नाम "अमवा" है। पर वहाँ सैकड़ों गाय बैल रह जानेके कारण चारों ओर गोबर ही गोबर होने तथा सड़क भी गोबरसे छिप जानेके कारण मैंने उसका नाम "गोबरहां" रख दिया। तबसे हमलोगोंमें वह स्थान इसी नामसे प्रचलित है।

तेंदुआ शामके पहले आवेगा नहीं तथापि घटनास्थल पर समयके पहले ही पहुँचनेके हेतु गरमीकी अधिक उष्णता होते हुए भी हमलोग तीसरे पहर तीन बजेके पहले ही चल पड़े।

छातो :

वहाँ पहुँच कर देखा कि न तो वहाँ शिकारी है और न कोई अन्य ही आदमी है तथा न कोई मचान ही बँधी हुई है। अतः इसका कारण जानने के हेतु हमने उसकी कुटिया पर जानेका निश्चय किया जो वहाँसे घाट नीचे छातो गाँवमें सड़कके किनारे ही दो मील पर थी।

वहाँ पहुँच कर शिकारीसे पूछने पर पता चला कि कतिपय चर्मकार "मरी"की खाल व सब मांस भी उठा ले गये। ऐसी स्थितिमें वह पशु तो अब वहाँ आता नहीं इसलिए वह घर लौट आया। परन्तु, उससे यह ज्ञात हुआ कि वही तेंदुआ वहाँ नीचे भी आता जाता है तथा वहीं पहाड़ीके ऊपर कदाचित् उसकी मांद भी है। पहाड़ीके नीचेनीचे जानेसे हमलोग लगभग उसी स्थानपर पहुँच जायेंगे जिसके ऊपर एक ओर उसने वह बछड़ा मारा था तथा दूसरी ओर उसकी मांद थी। अब मचान बन्धवानेका समय तो था नहीं, अतः "पतवा" ही बनवा कर तथा निकटमें बकरी बाँधकर उस पहाड़ीके कन्दरेके नीचे ही बैठनेका हमने निश्चय किया। गाँव वाले चर्मकार उस मृत बछड़ेको उठा ले गये थे अतएव जानवर भूखा होगा ही, तो अपने मांदके निकट ही बकरीकी आवाज सुनकर जल्दी निकल आवेगा।

ऐसा अनुमान कर मोटरको सड़कके एक किनारे छोड़ हमलोग उस निर्धारित स्थानके लिए तीन चार शिकारियोंको साथ ले चल पड़े। सूखे खेतों के मध्य चलते-चलते उस ग्रीष्म ऋतुकी भीषण गरमी तथा प्रखर सूर्यातपके कारण हमलोगोंका बुरा हाल हो गया। डेढ़ मील पहुँचनेके लिए पूरे घण्टे भर लग गये। प्रतिक्षण हम पानी पीते जाते थे तथा धीरे-धीरे चलते जारहे थे तथापि बीच-बीचमें थोड़ी देरके लिए रुकना अनिवार्य हो जाता था। इतनी देर करने पर भी पाँच बजेके पहले ही हम उस कन्दराके नीचे पहुँच गये, जहाँ शिकारियोंके कथनानुसार जानवरके रहनेका स्थान था।

वहाँ पहुँच कर एक अच्छे मौकेकी जगह ढूंढ़कर "पतवा" बन्धवाया तथा पतवेसे लगभग नौ-दस गज दूरी पर सामनेकी ओर एक झाड़ीकी टहनीसे बकरी बंधवायी। इन कामोंमें भी आधे घण्टेके ऊपर लग गया तथा सन्ध्या हो चली, अतः जल्दी-जल्दी सब ठीक कर हम सब उस पतवेके अन्दर आ बैठे।

लगभग एक घण्टे बिलकुल शान्त बैठे, परन्तु जानवरका कुछ पता न लगा और अन्धेरा हो चला, अब और अधिक देर तक बैठना व्यर्थ होगा क्योंकि राइफलकी "मक्खी" (Sights) देख न पड़ेगी अतः वापस चलनेका विचार करने लगा।

महत्व की बात :

इतने में ध्यान आया कि चीतेकी मांद यदि इसी ऊपर वाली पहाड़ी पर है तो बहुत सम्भव है कि जानवरने हमलोगोंको लख लिया हो, इसीलिए छिपा बैठा हो कि ये लोग हटें तो अन्धेरेमें मौका मिलते ही बकरी पर चोट करे। यह ध्यान आते ही मुझे एक युक्ति सूझी कि अपने दो शिकारियोंको बोलते हुए—आपसमें बातचीत करते हुए—कुछ दूर पीछे भेज दिया जाय। इससे दो बात होगी। एक तो बकरी जो हम-लोगका सामीप्य जानकर चुप बैठी थी, अपनेको अकेली समझ चिल्लाना आरम्भ कर देगी। अतः यदि जानवर कुछ दूर भी होगा तो उस निर्जन नीरव स्थानमें सायंकालकी बेलामें उसकी बोली उसे अवश्य सुना जायगी और वह अतिशीघ्र आ जावेगा। दूसरे, जानवरोंको गिनती तो आती नहीं कि इतने आदमी आये थे, इतने चले गये और अब इतने रह गये, इससे जब बाकी लोग छिपे शान्त बैठे रहेंगे तो वह सोचेगा कि सभी वापस चले गये और बकरी छोड़ गये।

और वास्तवमें हुआ भी यही। उन शिकारियोंको गये दस मिनट भी नहीं हुए होंगे कि साथियोंने कुछ दूर पर एक ओरसे आता हुआ एक विशालकाय तेंदुआ संकेत द्वारा दिखलाया।

जिधरसे वह आ रहा था उधर कोई भी बड़े वृक्ष अथवा घनी झाड़ियाँ नहीं थीं, केवल छोटी-छोटी छुटपुट झाड़ियाँ ही चारों ओर बिखरी पड़ी थीं। उन लता गुल्मोंकी ओटमें छिपते हुए, क्षणिक रुकते हुए तथा चहुँ ओर दृष्टि दौड़ाते हुए बड़ी सतर्कतासे वह धीमे-धीमे आगे बढ़ता हुआ चला आरहा था।

ऐसा अनुपम दृश्य कभी देखा न था, जो रोमांचकारी होते हुए भी अति शोभनीय था।

उल्टी ढाल होनेसे हमलोग नीचेकी ओर थे तथा जानवर ऊपरकी ओर होनेके कारण बहुत बड़ा प्रतीत होता था। सायंकाल हो गया था, कुछ-कुछ अन्धेरा सा हो चला था, जानवर सन्मुख होनेसे उसके समस्त अंग देख नहीं पड़ते थे, केवल मुख और सामनेका श्वेत विशाल वक्ष.स्थल दिखता था, जिससे हमलोग भ्रममें पड़ गये कि यह तेंदुआ ही है अथवा कोई युवा शेर, क्योंकि उसको लम्बी-लम्बी काली रेखायें देख नहीं पड़ती थीं। परन्तु, क्षणभरमें ही जब वह एक दूसरी झाड़ीमें छिपनेके लिए घूमा तो स्पष्ट देख पड़ा कि एक बड़ा तेंदुआ ही है, और तब हमारी जानमें जान आयी। नहीं तो उस सन्ध्या समय पृथ्वी परसे ही, पतवेमें तथा उससे नीचेकी ओर बैठे रहकर मारना भयका कारण अवश्य था। वैसे भी उन परिस्थितियोंमें तेंदुयेका भी शिकार खतरेसे खाली तो नहीं ही था।

कुछ तो दूर होनेके कारण, दूसरे सन्ध्या भी हो गयी थी, तीसरे झाड़ियोंमें छिपे रहनेके कारण भी गोली चलानेमें जानवरको न लगनेका सन्देह था। अतः उसके बकरीके अति निकट आ जानेके अवसरमें मैं एकदम शान्त बैठा था।

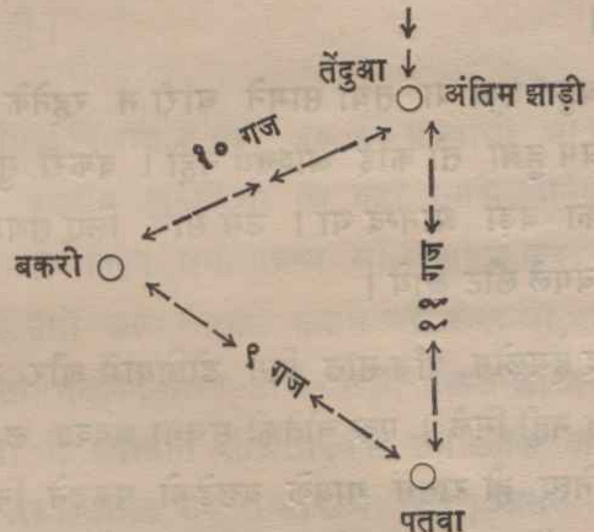
आक्रमण का ढंग :

उसका बकरीके ऊपर आनेका ढंग दर्शनीय था, जिसको पूर्णरूपेण व्यक्त करनेमें मेरी लेखनी असमर्थ है। वस्तुतः उस दृश्यका यथार्थ

वर्णन सरल नहीं। उस तेंदुयेकी दृष्टि ज्योंही बकरी पर पड़ती थी उसकी समस्त आकृति भयंकर रूपमें परिणत हो जाती थी। उसकी लाल-लाल आँखोंसे चिगारियाँ-सी निकलने लगतीं। उसके चेहरेसे ऐसी विकरालता टपकती थी कि जैसे वह उस बकरीको सद्यःनिगल ही जायगा। जमीनसे पेट सटाये हुए वह तत्क्षण बिजलीकी भाँति पाँच-सात गज दूर बकरीकी ओर दूसरी झाड़ीकी ओटमें पल मारते पहुँच जाता। उतनी दूरके लिए उसकी वैसी ही द्रुतगति होती जैसी एक सर्पकी होती है। अर्थात् उसकी अवसर्पण अथवा संसर्पण क्रिया तीव्र थी। कभी भी वह पूर्ण खड़ा होकर दौड़ता नहीं था, वरन् अपने सारे अंगोंको धरतीमें छिपाते हुए महावेगसे रेंगकर दूसरी झाड़ीकी ओटमें छिप जाता था और जब वहाँ पहुँच जाता तब उसकी आकृति एकदम शान्त पड़ जाती। पहले जो ओंठ पीछेको खिचे हुए थे और अर्द्ध खुले हुए मुखसे विकराल दांत देख पड़ते वे अब स्वाभाविक स्थितिमे आ जाते और वह एकदम शान्त मुद्रामें आ जाता था। किन्तु हाँ, पूर्वास्वादनके ध्यानसे ही जीभ निकाल कर अपने ओठोंको बड़े चावसे चाटने लगता था। उस समय उसकी आकृति पूर्ण शान्त प्रतीत होती थी मानों वह बड़ा ही सीधा पशु है। परन्तु तब भी थोड़ी देर तक वह चारों ओर बड़ी सावधानीसे दृष्टि दौड़ाता था कि कहीं कुछ किसी बातका अन्देशा अथवा भय तो नहीं है तथा सन्तुष्ट हो जाने पर अथवा सन्देह निवारण हो जाने पर जब उसकी दृष्टि पुनः बकरी पर पड़ती तो तत्काल उसकी वही दशा हो जाती, पुनः आँखोंसे चिनगारियाँ निकलने लगतीं और पुनः विद्युत् गतिसे दस पाँच पद बकरीकी ओर बढ़ जाता।

इधर मैं इस उधेड़बुनमें पड़ा था कि तेंदुआ अपनी तीव्र दृष्टिसे कहीं हमलोगोंको देख न ले। मारनेका अवसर मिल नहीं रहा था। यद्यपि मेरी राइफलकी नली उसके साथ-साथ घूमती जाती थी, परन्तु झाड़ियोंकी ओटमें बैठे हुए जानवरको न लगकर किसी डालसे टकराकर गोलीका निशाना चूक भी सकता था, फिर उन झाड़ियोंके बीच बिजलीकी

तरह भागते हुए पशु पर गोली लगना असम्भव सा था। इतनेमें उसकी तीसरी चालमें तो वह बकरीके अतिनिकट आ पहुँचा। अब उससे केवल दस ही गजका अन्तर रह गया होगा तथा हमलोगोंसे भी अब उसकी दूरी दस-बारह गजकी ही रह गयी थी। नीचे दिये हुए रेखा-चित्रसे उसका किंचित् अनुमान किया जा सकता है :—



यह अन्तिम झाड़ी थी जिसकी आड़में वह क्षणभर दुबका छिपा बैठा तथा दूसरे ही क्षण धीरेसे झाड़ीकी एक ओर सरक कर चारों पैर समेट कर जैसे ही कूदना चाहता था कि मैंने गोली चलायी। गोली गरदनमें लगते ही वह उछलकर चित लेट गया और हाथ पाँव ऊपर फेंकने लगा।

गोली सटीक लगने पर उसके भागनेकी अथवा चोट करनेकी आशंका तो न थी, फिर भी मैंने अपनी पत्नीसे छोटी राइफल २२ बोर एच० व्ही० (२२ Bore H. V.) से दोहरानेको कहा। उनकी गोली लगते ही वह तुरन्त शान्त हो गया। फिर भी हमलोग थोड़ी देर तक चुप-चाप बैठे थे कि यदि अभी भी उसमें प्राण हों तो फिरसे गोली चलायी जाय। प्रायः ऐसा हुआ है कि ऐसे समय असावधानी या धैर्य न होनेके कारण, अपनी उत्सुकतामें जानवरके निकट पहुँचते ही शिकारी ही शिकार हो जाता है—"मरतिउ बार कटक संहारा"

चरितार्थं हो जाता है। मरते-मरते शिकारीको भी ले बीतता है अथवा घायल तो अवश्य कर देता है। अतः दो चार पत्थर फेंकनेके उपरान्त जब भलीभाँति समझ लिया कि अब उसमें जान नहीं रह गयी है तब सब लोग उसके निकट पहुँचे। और तब यह भी देखा कि पत्नीकी गोली भी गरदनके मध्यमें ही लगी है, जिससे हमें बहुत प्रसन्नता हुई।

जानवर बहुत बड़ा था तथा सामने धारी न रहनेके कारण यदि हमें शेरका भ्रम हुआ तो कोई आश्चर्य नहीं। बकरी सुरक्षित-अक्षत रह गयी इसका बड़ा आनन्द था। उसे साथ लिए तथा जानवरको भी उठवाकर बंगले लौट आये।

इसके बाद हमलोग पाँच-सात दिन डोंगियामें और ठहरे, परन्तु पुनः कोई चीते नहीं मिले। एक चीतेकी सूचना अवश्य लगी जो बंगले-के आस-पास नित्य ही रातमें गायके बछड़ेको पकड़ने निमित्त आता जाता था। हाथमें आया हुआ शिकार एक देहातीके भूलसे कैसे खो दिया उसका वर्णन संक्षेपमें आगे पढ़िये।

बहुत खोज करने पर तथा पदचिह्नोंसे भी पता चला कि एक चीता प्रति रात मोटर "गराज", अहीरकी झोपड़ी तथा रसोईघरकी ओर आया जाया करता है। अतः आपसमें विचार विमर्श करके हम-लोगोंने यह निश्चय किया कि वहीं मोटरखानेके पीछे बकरी बांधकर उसी छत पर बैठकर हमलोग उसके आनेकी प्रतीक्षा करें। चीतेके शिकारके लिए वहीं छतपर बैठनेका सुनकर बच्चोंने बहुत शोरगुल मचाना तथा अनुनय विनय करना प्रारम्भ किया कि इस शिकारमें उनको भी साथ रक्खा जाय। हमलोगोंने भी विचारा कि बच्चोंका यह आग्रह अनुचित नहीं अपितु मानने योग्य है, कारण उनको लेकर छतपर बैठनेमें कोई भय नहीं। अतः हमने सहर्ष स्वीकृति दे दी जिससे उनकी खुशीका पारावार न था।

उपरोक्त निश्चयके अनुसार अब हम प्रबन्धमें लग गये। दो तीन कारणोंवश छत पर ही रात्रि व्यतीत करनेका निश्चय किया। एक तो गरमी बहुत थी अतः खुली छतपर आनन्दसे सो सकेंगे, दूसरे रात्रिमें किस समय चीता आयेगा इसका निश्चय नहीं, तीसरे वन्य पशु व सर्प आदिके कारण अन्धेरी रात्रिमें बच्चोंको उतार कर बंगलेमें दूर भेजना भी खतरेसे खाली नहीं।

सन्ध्यामें अधिक विलम्ब न था। अब जब बच्चोंको भी साथ लेकर छतपर ही रात्रि व्यतीत करनी थी तो वहाँ उनके सोनेका, पीनेके जलका, रोशनी इत्यादिका सभी प्रबन्ध सोच समझ कर करना था, रात्रि भोजन भी उसी अल्प समयमें समाप्त कर लेना था, अतः हममें से एक यानी मैं तो बन्दूक, गोली, टार्च, सीढ़ी, बकरी आदि-आदि ठीक करनेमें लगा तथा मेरी पत्नीने शीघ्रतापूर्वक उस छतके ऊपर बिस्तरे भेजना तथा बच्चोंको भोजन कराना प्रारम्भ किया, जिससे सभी कार्य सुचारु रूपसे बिना कुछ भूले शीघ्रातिशीघ्र हो जाय।

आधे घण्टेके भीतर हम यह सभी प्रबन्ध पूर्ण करके उस छतरूपी मचान पर बैठनेको पूर्ण साज सज्जासे सुसज्जित हो गये। छतमें सीढ़ी तो थी नहीं, अतः जल्दीजल्दी काम चलाने लायक बांसकी एक लम्बी सीढ़ी बनवाकर एक-एक कर सब बच्चोंको तथा मामाजी व पत्नीको ऊपर चढाया।

तत्पश्चात् एक ग्रामीणकी सहायतासे मैंने उसी छतके नीचे बगलकी ओर जिधर कुछ झाड़ियाँ भी थीं एक खूंटेसे बकरीको बंधवाया। उस समय शिकारीके न रहनेसे एक ग्रामीणसे ही काम लेना पड़ा। शीघ्रतापूर्वक बकरीको एक सुदृढ़ खूंटेसे बंधवाया कि जिसमें आसानीसे न तो रस्सी टूटे और न खूंटा ही उखड़ जाय, जिसमें जानवर आने पर मारनेका कुछ समय मिल सके। परन्तु इतना सब करनेमें सन्ध्या तो

हो ही गयी तथा अन्धकार भी हो चला, अतः उस ग्रामीणको लेकर मैं भी शीघ्र ऊपर चढ़कर यथास्थान बैठ गया। अन्धेरा हो जानेसे मैं टार्चको राइफलमें लगाने लगा और ग्रामीणसे कहा कि वह बकरीके ऊपर ध्यान रखे।

मैं यह सब ठीक भी नहीं कर पाया था कि चीतेने एकाएक बकरी पर छापा मार दिया। वह कब आया, किधरसे आया, उस अन्धेरेमें कुछ पता न चल सका। विलम्ब हो जानेसे उसको आते हुए देखनेका आनन्द न ले पाये। बकरी एकदम मिमिया उठी और जानवर गुर्राता हुआ उसे पकड़े था।

जब तक मैं राइफल नीचेकी ओर घुमाऊँ कि वह ग्रामीण चिल्ला उठा "आगयल, आगयल, आगयल।" मैंने जल्दीसे उसे पकड़ कर खींचा कि शान्त रहे, पर उसके बोल देनेसे हानि तो हो ही गयी। मनुष्यका शब्द कानमें पड़ते ही चीता एक झटकेमें रस्सी-खूँटे सहित बकरीको लिये-दिये भागा। उसी समय राइफलके टार्चने भी धोखा दे दिया अतः हमलोगोंने अँधेरेमें ही दनादन गोली चला दी, जिससे घबड़ा कर उसने बकरी तो छोड़ दिया और स्वयं कुछ दूर जाकर बैठ गया। फिर भी भागा नहीं, कारण वह जानवर लागू था, जो दूसरे टार्चकी रोशनीमें लगभग चालीस गजपर बैठा हुआ देख पड़ा। जल्दीमें मैंने फिर गोली चलायीपर यह भी निशाना खाली गया। जानवर भी अब जीवन संशयसे भाग गया। हमारे मनमें दोहरा दुःख हो रहा था कि जानवर भी खोया और बकरीकी भी व्यर्थमें जान गयी।

इधर तो यह सब काण्ड हो रहा था, उधर देवराज इन्द्रने पावसकी प्रथम बूँदोंसे हमारा स्वागत प्रारम्भ कर दिया जिसके लक्षण सन्ध्यासे ही अवगत हो रहे थे। सामने नदीपर, आषाढ़ मासके इन्द्र-धनुषी रंग-विरंगे बादल तथा उनके मध्य विद्युत्-नर्तनका मनोहर दृश्य हमारा मन मुग्ध किये था, बीचमें बादलोंकी गड़गड़ाहट भेरी-मृदंग-सा ताल दे

रहा था। उधर प्रकृतिका यह नृत्य था, इधर उन सुन्दर रंगीन बादलोंको देख-देख कर बच्चे ताली बजा-बजाकर नाच रहे थे। वस्तुतः उस समयका समस्त वातावरण काव्यमय या रसमय हो रहा था, जब कि उस चीतेकी सूचना मिली थी, जिसके कारण हमें उस माधुर्य रसानुभूतिको भूल कर आखेटकी ओर उन्मुख होना पड़ा था।

हाँ, तो वर्षाकी बूँदोंने हमें छतपरसे अपना-अपना बिस्तर समेट कर बँगलेके लिए पलायन करनेको बाध्य किया, जिसे मैंने मामाजी तथा पत्नीके ऊपर छोड़ा कि वे बच्चों सहित बँगले चलें और मैं अपनी बकरी खोजने जाऊँ तथा यदि वह जीवित मिल जाय तो उसे बचा लाऊँ, साथ ही उसके काल चीतेको भी यदि वह मिल सके तो उसे भी लेता जाऊँ। अतः मैं राइफल लिये उसी वर्षामें वहाँके चपरासीको लिये बकरी तथा चीतेकी खोजमें लालटेन लेकर चल पड़ा, यद्यपि उस समय जंगलमें जाना बुद्धिमत्ता न अपितु दुस्साहस था जो अनुकरणीय नहीं था। किन्तु मुझे तो अपनी बकरी बचानेकी धुन थी, अतः चलनेको तो मैं चल पड़ा पर उस घनघोर अन्धकारमें क्योंकर कुछ देख पड़े। दो-एक स्थानपर रक्तके कुछ छींटे अवश्य देख पड़े जिससे यह सन्देह हुआ कि सम्भवतः चीता बकरीको उठा ले गया।

इतनी देरमें एक आदमीने जो मोटरखानेमें ही थी, बगलवाली कोठरीमें बकरीकी आवाज सुनकर हमलोगोंको पुकारा। ऐसा प्रतीत होता है कि उस हल्लेमें तथा गोलीकी आवाजसे घबड़ा कर चीता बकरी को छोड़कर भागा और तब बकरी भागकर बगलवाली कोठरीमें घुस गयी तथा आहत होनेके कारण मिमिया रही थी।

बकरी तो साफ बच गयी परन्तु उसके गलेमें दो छिद्र देख पड़ते थे जिससे रक्त निकल रहा था और गला फूला भी था। उसी समय "परमांगनेट आफ पोटाश (Permanganate of potash) के

पानीसे खूब धोकर उसकी मलहमपट्टी कर दी। फिर भी तीन-चार दिन तक उसको खाने-पीनेमें काफी कष्ट था। उसकी जान बच गयी यही बड़ी बात थी। साक्षात् कालके मुखमें जाकर भी बच जाना एक आश्चर्य-जनक घटना थी। "जाको राखे साइयाँ मार सके नहिं कोय" वाली कहावत चरितार्थ हुई। पर यही कहावत चीतेपर भी लागू हो सकती है कि अब हम दो-दो आदमी तीन-तीन चार-चार बार गोली चला रहे हैं फिर भी उसको तनिक भी क्षति नहीं पहुँची।

हमलोगोंको इस बातकी अत्यन्त प्रसन्नता थी कि बकरीकी जान तो बच गयी और बच्चोंको बड़ा आनन्द आया।

दूसरे दिन पुनः उसको मारनेका उचित प्रबन्ध करता, पर वर्षाका आरम्भ देख जल्दी घर लौट आने हीमें कुशल समझा। यद्यपि ग्रीष्म ऋतुके अन्तिम दिनके प्रचण्ड आतपके उपरान्त वर्षाका आगमन इतना सुहावना और मधुर लगा कि सभीकी इच्छा हुई कि ऐसे मनोरम स्थानमें कमसे कम दो दिन तो और आनन्द उठाया जाये। परन्तु ऐसा करनेमें पूरा भय था कि फिर महीने-पन्द्रह दिन वहीं अटक जाना पड़ता, जब तक कि वर्षा खुल जानेपर ५-६ दिन तक धूप लग जानेसे जमीन सूख न जाय। कारण, वहाँकी मिट्टी बहुत ही चिकनी है और थोड़े भी पानीसे मोटरकी पहिया एकदम फिसलने लगती है।

यदि घनघोर वर्षा हो तो कई स्थान की सड़कें भी बह जाती हैं। फलतः वहाँका आवागमन चार-पाँच महीनेके लिए बिल्कुल बन्द हो जाता है। जब वर्षा बन्द होनेपर मरम्मत होती है तब कहीं वे मार्ग जाने योग्य होते हैं और तब उन नहरकी सड़कोंपर मोटर चलानेकी पुनः अनुमति दी जाती है। नियमानुसार वर्षाकाल आरम्भ होनेपर उन सड़कोंपर मोटर चलाना निषिद्ध है।

चूनादरी का चीता :

बच्चोंको अपने-अपने स्कूलोंसे ग्रीष्मावकाश होनेपर ही प्रायः हमारा वन-भ्रमणका कार्यक्रम बनता था। यद्यपि जंगलोंमें भी गर्मीका काफी सामना करना पड़ता है, लेकिन वहाँ उसकी प्रचण्डता कम प्रतीत होती है। बंगलेमें तो वहाँ भी बहुत कष्ट होता है। परन्तु जंगलमें घने वृक्षोंके नीचे अथवा 'कटलही' पर अर्जुनके वृक्षोंकी छायामें दो-चार घण्टे सुखसे बिताये जा सकते हैं। चारों ओर घने वृक्षोंकी झाड़ियाँ तथा सामने बहते हुए झरनेकी फुहारें हवाके साथ मिलकर यदाकदा अपने ऊपर पड़नेसे बड़ी सुखद प्रतीत होती थीं तथा गर्मीका आभास भी नहीं होने देती थीं।

ता० ९ मई १९३९ के प्रातःकाल ही हम मोटरसे चलकर ९ बजते-बजते डोंगिया पहुँच गये। दो दिन तक हमलोग वहाँ पूर्ण विश्राम तथा प्रकृतिके आनन्दमें और शिकारी पशुओंकी खोजमें थे।

हमारे प्रमुख शिकारीकी इच्छा थी कि एकाएक बड़े पशु पर न जाकर पहले छोटे जानवर पर ही अपनी नयी राइफल ३६५ बोरकी परीक्षा कर लेनी चाहिए। इसमें हम कहाँ तक सफल हुए उसका वर्णन पहले 'अमवांका चिकारा व सांभर'प्रकरणमें भली-भाँति कर चुके हैं। चीता मारनेके उपरान्त भालू भी इसी पर्यटनमें इसी राइफलसे मारा, जिसका वर्णन पहले [पृ० १८९] में दिया है।

११ मईके प्रातःकाल ही शिकारीने सूचना दी कि चूनादरीमें चीता जाते हुए वह देखकर आया है। दरी बहुत ही बड़ी और विस्तृत है, यदि निर्धारित स्थानका पता न हो तो जानवरका साक्षात्कार होना कठिन है। फिर भी घूमने तथा राइफलकी परीक्षा निमित्त तीसरे पहर मामाजी व अपनी पत्नीके साथ शिकारियोंको लेकर निकल पड़े। मार्गमें चिकारा व सांभर पर राइफलकी मारसे सन्तुष्ट हो आगे बढ़े।

चूनादरी :

यह दरी अमवांसे लगभग डेढ़ मील जंगलके अन्दर है, पर चार साढ़े चार होते होते हमलोग दरीके ऊपर पहुँच गये। ग्रीष्म ऋतुके कारण इस समय सूखा होनेसे तथा नहर बन्द रहनेसे केवल रस-रस कर थोड़ा पानी आ रहा था।

मिर्जापुरमें अथवा प्रान्तभरमें ऐसा सुन्दर स्थान व जलप्रपात देखनेमें नहीं आता था। मेरा अनुमान है कि लगभग ३०० फुटकी ऊँचाईसे यहाँ पानी गिरता है। मैंने उस समय वहाँका दृश्य देखा है जिस समय डोंगिया नहरका पानी एक फुट खुला था। उस समय वह विशाल दरी लगभग २०० गज चौड़े जलसे परिपूर्ण थी जो दूरसे देखनेसे एक विशाल श्वेत चादर सी बिछी प्रतीत होती थी तथा एक साथ इतना जल गिरनेका घोर रव हो रहा था। १०० गज दूर खड़े हुए हमलोगों पर जलके फौवारे गिर रहे थे, किन्तु इस समय तो केवल एक सोता ही धीमे-धीमे गिर रहा था। फिर भी इतनी ऊँचाईसे गिरनेके कारण पानीका थोड़ा घर-घर निनाद तो हो ही रहा था। ऐसे विशाल जल प्रपातके निरन्तर प्रवाहित होते रहनेसे उसके नीचे एक बड़ा भारी कुण्ड बन गया था। वहीं नीचे उस जलकुण्डके पास एक टूटी-फूटी पत्थरकी कुटिया अभी भी देख पड़ती है। सुननेमें आया कि कुछ वर्ष पूर्व वहाँ कोई महात्मा रहते थे। ऐसे विषम और निर्जन स्थानमें जहाँ कभी-कभी शेर भी आ टिकते हैं, कोई सिद्ध पुरुष ही रह सकता है।

शिकारीके पीछे-पीछे दरीके ऊपर ही ऊपर झरनेको लांघते हुए हमलोग उस पार पहुँचे तथा वहाँसे किनारे-किनारे वहाँ तक पहुँचे, जहाँ कुण्डका गोलाकार अन्त होकर नदी सीधे बहना आरम्भ होती है। वहाँ बगलसे पहाड़के ऊपरसे नदीकी ओर बरसाती पानी बहनेका रास्ता है। सूखे दिनोंमें इसके सहारे शेर चीते तथा भालू दरीमें आते जाते रहते हैं। शिकारीके कहनेसे हमलोग वहीं ठहरे, क्योंकि वहाँ

बगलसे आते जाते कोई भी जानवर देख पड़ते तथा वहाँसे नीचेका कुण्ड भी उस पार तक सुस्पष्ट दृष्टिगोचर होता था।

जानवरोंके उस आने जानेके मार्गको लगभग १० गज एक ओर छोड़कर हम लोग एक वृक्षकी छायामें चट्टानके ऊपर आरामसे बैठ गये। पानीके निकटस्थ होनेसे तथा चारों ओर घने वृक्षोंके कारण वहाँ गर्मीकी अनुभूति कम होती थी तथा सन्ध्या भी हो चली थी। हम लोग शान्तिसे लगभग घण्टे भर तक स्थिर भावसे बैठे रहे। पर जब कुछ देख न पड़ा और सूर्यदेव भी अस्त हो चले तो लौटनेका विचार कर रहे थे कि इतनेमें दूसरे शिकारीने उस पार दरीके नीचे कुण्डके समीप एक चीतेका पानी पर आते देख उसे हम लोगोंको दिखलानेकी चेष्टाकी, किन्तु बहुत आँख गड़ागड़ा कर निर्निमेष दृष्टिसे देखने पर भी हम लोगोंको, यहाँ तक मामाजीको भी, जो बहुत दूर देख सकते थे, कुछ देख न पड़ा। यह बात नहीं थी कि जिस स्थान पर वह बता रहा था उसको हमलोग समझ न सकनेके कारण देख नहीं सकते थे, परन्तु दूरी इतनी अधिक थी कि सामान्य दृष्टिसे उतना छोटा जानवर उतनी दूरी पर देखा नहीं जा सकता था। जहाँ दूसरा शिकारी दिखला रहा था वह स्थान हमलोगोंसे लगभग ४०० गज रहा होगा। यहाँ तक कि पहला शिकारी भी नहीं देख सकता था। हमलोगोंमें मामाजी व चाचाजीकी निगाहें दूर देखनेमें सबसे तीक्ष्ण कही जाती थीं पर इस दूसरे शिकारीने तो सबको मात किया मानो 'गृद्धहि दृष्टि अपार' 'हम देखत तुम नाहीं'। जब "सम्पातीने वानरोंसे कहा उस पार लंका में सीताजीको बैठे वह देख सकता है।

मैंने दुरबीनका सहारा लिया तथा उसके द्वारा एक चीतेको पानी पीते देखा तथा बारी-बारीसे मैंने सबको दिखलाया पर जब दुरबीन हटाकर सादी आँखोंसे देखनेकी चेष्टा करूँ तो वहाँ कुछ भी देख न पड़े और न समझमें आवे कि वह चीता कहाँपर है। अब तो

मैं बड़े असमञ्जसमें पड़ा कि अब क्या करूँ। जानवरके पास आनेका तो प्रश्न ही नहीं रह गया या तो जानवर और किसी ओरसे निकल गया और अपने लोगोंकी असावधानीके कारण पहले पता न चला। अथवा वह दूसरा जानवर है जो वहीं कहीं नीचे दिनकी गर्मी बिताने छिपा बैठा अथवा सोया रहा हो तथा सन्ध्या होते पानी पीने निकला है और पानी पीकर भोजनके चक्करमें रात भर टहलेगा।

रोशनाईका धब्बा :

जो भी हो शिकारीने कहा कि जानवर पानी पीकर अब उसी ओर ऊपर चढ़कर जंगलमें चला जायगा। मैंने सोचा कि कदाचित् फिर ऐसा भी अवसर न मिले इसलिए पुनः दुरबीनसे इस आशयसे देखा कि कुछ भी दृष्टिगोचर हो तो उसपर निशाना अवश्य लगाना चाहिए। इस बार दुरबीन हटानेके बाद बहुत सावधानीसे देखनेके उपरान्त नीचे पत्थरपर काली रोशनाईके रंगका एक छोटा-सा केवल धब्बा मात्र दिखलायी पड़ा। सबलोगोंकी सलाह हुई उसी धब्बेमें लक्ष्य करके गोली चलायी जाय। लग गयी तो अच्छी बात है नहीं तो लौटना तो है ही।

राइफलमें २६० "ग्रेन"के वजनकी गोली चढ़ाकर (जो इतनी दूरीके लिए विशेष उपयुक्त थी) चट्टानपर लेटकर बड़ी सावधानीसे निशाना लगाया। पर निशाना लगानेके लिए जब एक आँख बन्द करूँ तो वह धब्बा भी ओझल हो जाता था। बड़ी कठिनाईसे दुरबीनका सहारा लेते हुए राइफलकी नली उसी धब्बेमें सीधी मिला कर "मक्खी" (Forsight) में धब्बा छिप भी गया तो भी लबलबी दबा दी।

बन्दूककी गड़गड़ाहटसे सारी दरी गूँज उठी तथा जानवर जो चिपका बैठा था वह गोली लगनेसे एकदम उछल पड़ा और धीरे-धीरे उसी पार लौटने लगा। उसके खड़े होनेपर समझमें आया कि वास्तवमें वह चीता ही है, पर फिर भी दूरी होनेके कारण बनविलाव ऐसा मालूम पड़ता था। मामाजीने तो शिकारीसे कहा कि "क्या बनविलाव मरवा

दिया"। यद्यपि जानवर धीरे-धीरे चला जा रहा था फिर भी दूरीके कारण उसपर पुनः गोली चलाना असम्भव-सा था।

दुरबीनसे देखनेपर पता चला कि उसको चोट गहरी लगी हुई है। कहीं पीठकी रीढ़की हड्डीपर गोली बैठती तो जानवर वहाँसे हिल भी नहीं सकता था। एक ओर कुछ और नीचे गोलीने बड़ा भारी छिद्र किया था और आँतें निकल आयी थीं, जिसे देखकर मुझे बड़ा क्लेश हुआ विशेषकर जब मैं दूसरी गोली शीघ्र दोहरा नहीं सकता था। मेरा लक्ष्य सदा यही रहता था कि गोली ऐसी लगनी चाहिए जिसमें तत्क्षण जानवरकी मृत्यु हो जाय। जिस पत्थरपर वह बैठा था वहाँ रक्त और मांसके टुकड़े बिखरे पड़े थे जिसे देखनेसे स्पष्ट प्रतीत होता था कि अधिक देर तक वह जीवित न रह सकेगा और न दूर ही जा सकेगा फिर भी मैंने प्रमुख शिकारीको अपनी दुनाली बन्दूक देते हुए कहा कि जल्दी नीचे जाकर उसका अन्त करो और दोनों आदमी मिलकर उसको ले आओ।

नीचे जानेमें पहले तो उन दोनोंने थोड़ी आनाकानी की। उन्हें यह सन्देह था कि कदाचित् जानवरको घातक चोट न आयी हो तो वह उनपर हमला कर बैठेगा। परन्तु मेरे ढाढ़स देनेपर और बहुत समझानेपर वे जानेको उद्यत हो गये। मैंने बन्दूकके साथ बड़े छर्रेके कारतूस भी दिये जिससे उनको और भी धैर्य हुआ। फिर भी चलते-चलते उसने कहा यदि जानवरने हमला किया तो ऊपरसे आप गोली अवश्य चलाइयेगा। मैंने वादा किया और फिर समझाया कि जानवरको चोट बहुत गहरी लगी है न वह हमला कर सकता है और न भाग ही सकता है। बहुत सम्भव है कि नीचे जो एक बड़ी चट्टान दीख पड़ रही थी उसी के पीछे पड़ा हो अतः पहले उसपर चढ़ कर देख लेना तब जरूरत समझना तो गोली चलाना।

नीचे जाते समय तो दोनोंने बड़ी शीघ्रता की, पर नीचे पहुँचनेपर उनकी चाल बहुत मन्द पड़ गयी। उन्होंने बहुत ही धीरे-धीरे नदी पार

की तथा जहाँ जानवरने पानी पिया था वहाँसे कुछ दूर हटकर वे आगे बढ़े। मैंने जिस चट्टानका संकेत किया था उसपर वे धीरे-धीरे चढ़ गये पर तुरन्त ही दुबककर उलटे पाँव भागनेका प्रयत्न किया। किन्तु दोनों ही चार पदपर रुक गये और जिसको मैंने बन्दूक दी थी उसने उसे उठाकर चलाया। यह सब तमाशा हमलोग ऊपरसे देख रहे थे। परन्तु वह चीता कहीं देख नहीं पड़ रहा था। इतनेमें देखा कि वे दोनो बेधड़क आगे बढ़े और दो चट्टानोंके नीचेसे चीतेको घसीटते हुए मैदानमें लाये।

उन्होंने हमलोगोंकी ओर संकेत किया कि वे जानवरको लेकर उसी पारसे ऊपर चढ़ जाते हैं और हमलोग भी ऊपर ही ऊपर अब उसी पार लौट आवें।

जबतक हमलोग झरनेको पारकर उसपार पहुंचे वे दोनों भी चीतेको लिये-दिये ऊपर पहुँच गये थे। पाससे देखनेपर पता चला कि जानवर काफी बड़ा लगभग ७ फुट लम्बा था जो उतने ऊपरसे देखनेमें बिल्लीके इतना बड़ा प्रतीत होता था। नयी राइफलकी मार व इतनी दूरका निशाना देखकर हम सब बहुत प्रसन्न हुए।

जब मैंने शिकारीसे पूछा कि तुमलोग पीछे क्यों भागे, तो उसने कहा कि उसको ऐसा भान हुआ कि जानवर अभी जीवित है। इसीलिए उसने "फायर" भी किया, परन्तु जब वह हिला भी नहीं तब उसके मृत हो जानेका विश्वास होते ही वे बेधड़क आगे बढ़े। किन्तु शिकारीका निशाना खाली गया था, क्योंकि जानवरके शरीरमें छर्रेका एक भी छिद्र नहीं था। केवल एक गोलीका निशान था जो पीठके बीचोंबीच लगकर पेटकी ओरसे पार हो गयी थी। इतनी दूरीपर इतना छोटा जानवर मैंने कभी नहीं मारा था। यद्यपि एकबार इससे भी दूर एक साँभर मारा था जिसका वर्णन "भलदरिया का सांभर"में [पृ० ४५] किया है।

बंगले लौटते समय एक भालूसे भिड़न्त हुई जो उस समय भाग गया और तीसरे दिन कैसे उसे मारा यह "चूनादरीका दूसरा भालू" [पृ० १८९] में लिखा है।

यह यात्रा पूर्णतया सफल रही। नयी राइफलने पूरा आनन्द दिया।

कटलहीका तेंदुआ :

"चूनादरीका तीसरा भालू"के प्रकरणमें [पृ० १९१] मैंने लिखा है कि ३१ मार्च १९४१ को जब शिकारीने आकर सूचना दी कि चूनादरीमें बाघ आया है तो यह समाचार सुनकर हम रुक नहीं सकते थे। इस कारण इस यात्रामें मामाजीका साथ नहीं हो पाया, क्योंकि वे अपनी जमींदारीपर थे और गुरुतर कार्यके कारण आ नहीं सकते थे। अतः मैं अपनी पत्नी और एक मित्रको लेकर दूसरे ही दिन चल पड़ा। बाघ न मिलनेकी निराशा तथा वहाँ भालू किस प्रकार मारा, इसका वर्णन उपरोक्त प्रकरणमें कर चुका हूँ। पर चलते चलाते किस प्रकार एक भारी तेंदुआ मिल गया उसका वर्णन यहाँ दे रहा हूँ।

भालू मारनेके दूसरे दिन यानी २ अप्रैलको सोचा कि अब घर लौट चलना चाहिए पर कटलहीमें स्नान और भोजनके उपरान्त लौटनेका निश्चय किया। नौ बजे प्रातः जब हमलोग स्नान करनेके लिए तैयार होकर चलने लगे कि शिकारोने आकर कहा कि जहाँ आप स्नान करने जा रहे हैं, वहाँ एक बड़ा तेंदुआ जाते देखा है। यह सुनकर फिर वहाँ स्नान करने कौन जाता? यदि जिद करके हम जाते भी तो तेंदुआ अवश्य भाग जाता। ऐसी हालतमें घरपर ही स्नान किया।

तीसरे पहर उस स्थानपर बैठनेके निमित्त हम बकरी लेकर चले। पत्नीके अस्वस्थ हो जानेके कारण उनको बंगलेपर ही छोड़ देना पड़ा पर मित्र साथमें हो लिये।

एक अच्छे स्थानपर पतवा लगाकर हमलोग बैठे। बकरीको कुछ दूर बांधकर शिकारी भी हमारे साथ आकर बैठा। परन्तु दो घण्टे बैठनेके उपरान्त भी हमें जानवरकी कुछ आहट न लगी। जगह विस्तृत थी तथा पानीकी हल्की कलकल ध्वनि होनेसे कदाचित् चीतेको बकरीका पता ही न चला। अथवा उसने हमलोगोंको देख लिया हो इसलिए बकरीपर आनेसे घबड़ाया। जो भी हो सन्ध्या होते देख विवश होकर हमें उठना पड़ा। पर लौटते समय विचार किया कि उसकी मांद तक उन दोनों शिकारियोंके द्वारा एक प्रकारका चुप्पा हाँका करवाते हुए तब घर लौटा जाय। सम्भव है हांकेसे जानवर निकल पड़े। तब तेजीसे भागता भी नहीं रहेगा जिससे मुझे गोली चलानेका अवसर मिल जायगा। जोरसे चिल्लाते हुए हकानेमें जानवर दौड़ता हुआ निकलता है और किधर भी भाग सकता है।

चुप्पा हांका :

चुप्पा हाँका अथवा (Silent drive) उसे कहते हैं कि हँकवेवाले आपसमें धीरे-धीरे बोलते हुए अथवा बहुत हलकी खट-खटकी आवाज जैसे दो पत्थर हाथ में लेकर बीच-बीचमें ठकाठक करते हुए आगे बढ़ते चले जाते हैं। इससे यह होता है कि जानवर घबड़ाकर भागता नहीं और वह भी धीरे-धीरे बढ़ता चला आता है।

पर यह बात विशेषकर शेरके हाँकेमें होती है और उसी शेरका चुप्पा हाँका होता है जो आदमखोर न हो। यदि वह आदमखोर हुआ तो मौका देख किसी न किसीको पकड़ लेनेका भय होता है। ऐसी अवस्थामें तो ढोल, कनस्टर आदिके साथ बहुत हल्लेदार हाँका होता है तथा अधिकतर लोग साथ ही रहते हैं।

हाँकेमें तेंदुआ बहुत कम निकलता है। कभी कहीं दुबक कर छिपा रह जाता है या कभी मौका देख किसी कोने-अँतरेसे निकल भागता है।

हाँकेमें उसका फँसना बड़ा कठिन होता है। जब छिपनेकी जगह नहीं रहती तो विवश होकर निकल जाता है।

हम दोनोंको मांदके ऊपर कुछ दूरपर अलग-अलग खड़ा करके वे दोनों शिकारी चुप्पा हाँका करते हुए आनेके लिए वापस गये।

अपने मित्रके हाथमें मैंने अपनी दुनाली बन्दूक दे दी थी। शिकारियोंने मुझे उनसे तीन गज पीछे खड़ा किया। पर हम दोनों दरीके ऊपर ही थे जिससे नीचेकी ओर देख भी सकते थे और ऊपर तो दूर तक देख पड़ता ही था। पर मित्र साहबको कुछ घबड़ाया हुआ देख मैंने उनका हाथ पकड़ कर पास बुला लिया तब कहीं उनकी मुख-मुद्रा भी शान्त पड़ी।

उधर वे दोनों शिकारी आपसमें धीरे-धीरे कभी बात करते और कभी खट-खट करते आगे बढ़ते सुनायी दे जाते थे। इधर मैंने मित्रका हाथ पकड़ कर खींचा है कि क्षण भर बाद ठीक उसी स्थानके केवल दो गज आगे जहाँ मेरे मित्र खड़े थे, एक बड़ा तेंदुआ एकबारगी नीचेसे उछल कर ऊपर आ गया, परन्तु उसकी दृष्टि हँकवे वालोंकी ओर थी।

यह तो बड़े सौभाग्यकी बात थी कि वे मुझसे अलग उसके समीप नहीं खड़े थे अन्यथा पता नहीं क्या होता। जानवरको सन्निकट देख वे धीरे-धीरे बैठने लगे जिसमें मेरा सामना खुल जाय और मैं उसपर गोली चला सकूँ। इतनेमें मैंने गोली चला ही दी।

जानवरका कूदना, उनका बैठना और मेरा फायर करना सब क्षण भरमें हुआ परन्तु गोली चलते ही जंगलमें ऐसा सन्नाटा छा गया कि एक प्रकारसे वह निःशब्दता भारी प्रतीत होने लगी। हँकवे वालोंकी बोली एकदम बन्द। मैं चुप। मेरे मित्र चुप और जानवरका न कुछ पता तथा न कोई शब्द ही सुन पड़ता था। उसको गोली लगी अथवा वह भाग गया कुछ समझ में नहीं आया। एक क्षण तो जानवर

वहाँ खड़ा अथवा बैठा देख पडा, परन्तु दूसरे ही क्षण गोली लगते ही जैसे वह अन्तर्धान हो गया हो।

थोड़ी देर तक हमलोग एक दम स्तब्ध खड़े थे कि कहींसे कुछ आहट मिले तो कुछ पता चले। उस समय एक-एक पल एक-एक घण्टेके समान बीत रहा था। पर जब कोई भी शब्द कानमें न पड़े तो मनमें सन्देह हुआ कि कदाचित् निशाना खाली गया। इसका कारण यह है कि बहुत पासका निशाना प्रायः ऊँचा जाता है या घबड़ाहटमें शीघ्रता करनेसे बहुत सम्भव है कि गोली इधर-उधर चली जाय। जो भी हो जानवरके ओझल हो जाने और कोई शब्द न सुनायी देनेके कारण हम किसी निश्चयपर न आ सके कि क्या बात है। यदि वह भागता तो भागनेकी कुछ न कुछ आवाज अवश्य होती। इन जातियोंके पैरकी आवाज तब नहीं होती जब ये धीरे-धीरे या दुबक कर चलते हैं पर जब ये दौड़ते हैं अथवा भागते हैं तो रास्तेकी सूखी पत्तियों अथवा टहनियोंको बचानेको कौन कहे ऊपरसे सब तोड़ते-फोड़ते भागते चलते चले जाते हैं।

इसलिए गोली चलते ही तेंदुएका पलक मारते ओझल हो जाना और कोई भी शब्द न होना कुछ समझमें नहीं आ रहा था।

इतनेमें दूरपर जंगलकी झाड़ियोंकी आड़से शिकारियोंको झाँकते हुए देखा। वे संकेतसे पूछ रहे थे कि क्या करें। मैंने संकेतसे पूछा कि जानवर कहाँ है। तब उन्होंने इशारेसे बतलाया कि वह वहीं गिरा पड़ा हुआ है। वे लोग जानवरको स्पष्ट देख रहे थे, क्योंकि उनके सामने कोई रुकावट न थी।

हमलोगोंके आगे दो बड़ी चट्टानें थीं जिनके पीछे गिरकर वह मृत पड़ा था। पर हमलोगोंको दिखलायी नहीं पड़ रहा था। हमलोग इशारेसे बारम्बार पूछें कि वह कहाँ है और वे अंगुलियोंसे बतलाते कि आपके पास ही गिरा हुआ पड़ा है।

उस समय बोलना व हटना ठीक न समझकर इशारेसे मैंने उन लोगोंसे जानवरके ऊपर ढेले फेंकनेको कहा और राइफल कन्धेपर चढ़ा ली कि यदि वह जीवित हो और ढेले पड़नेसे झपटे तो कमसे कम तैयार तो रहना चाहिए। इतनेमें कई ढेले बरसे और एक बड़ा ढेला ऊपर भी गिरा। फिर भी जानवर जब हिला नहीं तो शिकारियोंने कहा कि "ई तो मर गयल हौ" और पास आने लग गये। तब हमलोग भी आगे बढ़े। किन्तु हम दो कदम भी न बढ़े होंगे कि सामने बड़ा-सा तेंदुआ मृत पड़ा हुआ देख पड़ा। भारी गोली एकदम पाससे लगनेसे "बन्द" (कन्धे) पर बैठने पर भी पार हो गयी थी और वह तत्क्षण मर गया था। इसीलिये कुछ भी आवाज नहीं कर सका।

इतना बड़ा जानवर देखकर हमलोग बहुत ही प्रसन्न हुए। परन्तु उसी रात हमलोगोंको घर लौट आना पड़ा क्योंकि पत्नीकी तबियत विशेष खराब हो गयी थी। अतः जानवरको उसी प्रकार मोटरपर रखकर शिकारीको भी लिये हुए आधी राततक हम घर पहुँच गये।

दूसरे दिन प्रातःकाल तेंदुआको नापा तो पूरा ७.६ लम्बा निकला और तेंदुआकी भांति इसकी दुम उतनी लम्बी न थी पर इसका माथा और शरीर बहुत भारी था। यहाँ तक कि उसकी कलाई मेरे हाथोंमें नहीं आती थी। वहांके अहीरके कई बछेड़ोंको यह खा गया था। अतः उसको मृत देखकर उस अहीरकी प्रसन्नताका पारावार न था।

मिठुआका चीता :

जिस प्रकार रेलवे इन्जिनको उसकी शक्ति क्षीण होनेपर कोयले तथा पानीकी आवश्यकता होती है, पेट्रोल समाप्त हो जाने पर मोटरको पेट्रोलकी आवश्यकता होती है, उसी प्रकार मुझे भी अधिक परिश्रम करनेके उपरान्त नवीन जीवनी-शक्तिकी आवश्यकता होती है। मेरी वह शक्ति है प्रकृति-विचरण। पावन प्रकृतिकी उस मुक्त तथा मनोरम

गोदमें कुछ काल विश्राम तथा भ्रमण कर लेनेसे शरीर, मन तथा मस्तिष्क सभी नवीन तथा शक्ति-संयुत हो जाते हैं।

३० मार्च, १९४५ को सूचना मिली कि चूनादरीमें एक शेर आया हुआ है। ३१ मार्चसे "ईस्टर"की चार दिनोंकी छुट्टियाँ थीं। मैं कार्याधिक्यसे श्रान्त भी हो गया था। "एक पन्थ दो काज" स्वास्थ्य-लाभ भी हो जायगा तथा शेर भी हाथ लग जायगा। यह विचार कर अच्छा अवसर देख पत्नी बच्चों सहित ३१ मार्चकी शामको मैंने प्रस्थान कर दिया।

सन्ध्या हो चली थी। मोटरकी "बैटरी" भी मेरी ही भाँति क्लान्त हो रही थी, अतएव मैं मोटरको द्रुतिसे चलाता हुआ चला जा रहा था। पर सूर्यकी गतिको कौन पा सकता है। वे अतिशीघ्र अस्ताचलको पहुँच ही गये और रात्रिने अपना पूरा अधिकार जमा लिया। फल-स्वरूप मुझे कृत्रिम बत्तियाँ जलानी ही पड़ी जिस कारण "बैटरी" और निःशेष हो चली तथा आधे मार्ग जाते-जाते उसने एक प्रकारसे जवाब दे दिया, बहुत तङ्ग किया। बड़ी कठिनाईसे हमलोग किसी प्रकार डोंगियाके बंगले पहुंचे ओर थोड़ा बहुत खा-पीकर निद्रा देवीका प्रश्रय लिया।

दूसरे दिन प्रातःकाल शिकारीने यह कहकर सारी आशाओंपर पानी फेर दिया कि शेर चला गया। इस समाचारका कुछ-कुछ भय मुझे था भी, क्योंकि मेरे २० वर्षोंके शिकारमें मैंने सदा यही देखा कि वहाँ दो-तीन दिनसे अधिक कभी शेर ठहरता नहीं। चूनादरीमें भी शेरके ठहरनेका स्थान नहीं। केवल आने-जानेका मार्ग होनेके कारण एक-दो दिनके लिए रुक जाता है सो भी यदि उसे छेड़ा न गया हो तथा उसे शान्तिसे भोजन मिल गया हो। अपने मनके क्षोभको रोककर दो-तीन दिन प्रकृति पर्यटनमें ही मन लगानेका सोचा और सब परिवार कटलहीमें स्नान करनेके हेतु नौ बजे तैयार हुए।

मेरे मनका भाव समझते हुए मेरे चित्तको शान्त करनेके निमित्त शिकारीने कहा कि शेर तो चला गया परन्तु मिठवापर तेंदुआका ताजा पंजा वह देखता आया है अतः सन्ध्या होनेके पहले बकरी बांधकर वहाँ बैठा जाय और इस बीच वह पुनः शेरको खोजमें जाता है। यह अन्तिम वाक्य तो उसने केवल मेरी प्रसन्नतार्थ कहा, क्योंकि वह जानता था कि शेर वास्तवमें चला गया था तथा उन जंगलोंमें इस समय वह था ही नहीं।

यह सुन मैं बड़े असमञ्जसमें पड़ा कि यदि निश्चयानुसार कटलहीमें सब साथ स्नान करने चलें तो बहुत सम्भव है कि जानवर हमलोगोंको आहट पाकर कहीं अन्यत्र भाग जावे, क्योंकि कटलही और मिठुआमें बहुत थोड़ा केवल २०० गजका अन्तर होगा।

थोड़ी देर तक मैं किंकर्तव्यविमूढ़ रहा। इतनेमें ही मेरे ज्येष्ठपुत्र श्री प्रतापवर्द्धनने कहा कि इसी समय मिठुआपर चलकर तेंदुआका हाँका क्यों न किया जाय। बात बहुत अच्छी थी और हम सभी लोगोंने उसका तुरन्त समर्थन किया। कारण उससे हमारी सारी समस्या भी हल हो जाती थी। फिर हमलोग आराममें कटलहीमें स्नान, भोजन कर सकते थे। क्योंकि इन दोनों कार्योंके लिए इससे अच्छा कोई अन्य मनोरम स्थान नहीं था!

इस बीचमें एक बात यहाँपर पुनः कह देना उचित समझता हूँ कि तेंदुएका हाँका मैंने कभी नहीं कराया था, क्योंकि जहाँ तक मुझे ज्ञान है बहुत कम तेंदुए हाँकेमें फँसते हैं कारण ये बहुत ही चालाक जानवर होते हैं। कहीं दबे छिपे रह जाते हैं अथवा अवसर देखकर निकल भागते हैं।

एक ओर तो यह बात थी, दूसरे मुझे यह भी सन्देह था कि वास्तवमें जानवर है भी या नहीं। शिकारीने जानवरको जाते तो

देखा नहीं था केवल पंजोंके निशानके आधारपर ही उसने अनुमान किया था।

परन्तु वहाँपर छिपनेका स्थान ही कम था तथा मेरी दुविधा भी दूर हो जाती थी। अतएव छः-सात आदमीको ले हमलोग तुरन्त चल ही पड़े।

कटलही पहुंचकर पत्नीने कहा कि छोटा बच्चा लेकर वह कहाँ धूपमें चलेंगी। इसलिए वह वहीं मोटरमें बैठ गयी।

हाँका वहींसे आरम्भ होनेवाला था, अतः कोई डरकी बात ही न थी फिर भी मैंने शिकारीसे कहा कि हमलोगोंको यथास्थान बैठाकर तुममें-से दो आदमी इनके पास रहना तब हाँका शुरू करना।

हमलोगोंको मुश्किलसे २०० गज आगे जाना था अतः वहाँ तुरन्त पहुँच गये। एक पेड़के नीचे जमीन ही पर मेरे साथ मेरा पुत्र प्रताप भी बैठा तथा मामाजी थोड़ा आगे एक दूसरे पेड़की झुरमुटकी आड़में बैठे। मामाजीको तो झाड़ीकी आड़ भी थी, परन्तु हमलोग एकदम खुले मैदानमें और जंगलसे बिल्कुल सटे थे, अतः मनमें थोड़ा भय था कि जानवर सहसा हमारे सरपर भी आ सकता है। इस भयके कारण मैं बार-बार बगलमें सटे हुए जंगलकी ओर दृष्टि दौड़ाता जाता था।

हमलोग पांच मिनट भी न बैठे होंगे कि हांका बोल दिया। अतः हम और भी सतर्क होकर बैठ गये। दो-तीन मिनट तक तो कुछ आहट न लगी। प्रत्युत थोड़ी देरमें दो हँकवेवाले भी आते हुए देख पड़े। उनको देखकर स्वाभाविक सन्देह हुआ कि कदाचित् जानवर दरीमें है ही नहीं अथवा पहले ही निकल गया हो, क्योंकि वहाँ दुबकने अथवा छिपनेका विशेष स्थान नहीं था।

इतनेमें नीचे जंगलमें बायीं ओर जिधरसे हांका आ रहा था झाड़ियोंमें-से एक पीली झलक देख पड़ी और तुरन्त ही एक बड़ा-सा

तेंदुआ झाड़ियोंमें-से निकलता हुआ हल्की-दुल्की चालसे भागता हुआ दूसरी ओर जंगलमें जाने लगा।

मेरे मुँहसे अनायास 'सी' शब्द निकल पड़ा जिसका भान प्रतापको भी न हुआ होगा, परन्तु उस चौकन्ने जानवरने सुन लिया, जिससे क्षणभरके लिए उसकी चाल ढीली हुई और उसने मेरी ओर गर्दन घुमायी। गर्दन वह पूरी तरह घुमा भी न पाया होगा कि मुझे अपनी राइफल चलानेका अवसर मिल गया तथा गोली चलते ही वह तेंदुआ तत्क्षण वहीं लेट गया।

थोड़ी देर तो हमलोग चुप बैठे थे कि यदि जानवर हिले तो पुनः गोली चलाऊँ कारण इसबार सामने पड़ा हुआ देख पड़ता था पर जब वह बिल्कुल ही हिला नहीं तो हमलोग उसके पास पहुँचे। हल्की-दुल्की चाल होनेपर भी गोली उसकी गर्दनमें लगी थी और भारी होनेके कारण पार हो गयी थी, किन्तु उसी समय उसको थोड़ा हिलता देख मुझे पुनः दूसरी गोली चलानी पड़ी, यद्यपि उसकी कोई आवश्यकता न थी।

हमलोगोंको बिल्कुल आशा न थी कि तेंदुआ निकलेगा, नहीं तो पत्नी और छोटे पुत्र राज्यवर्द्धनको भी साथ अवश्य रख लेता।

लौटकर जब कटलहीपर आया तो पत्नीको छोटे लड़केके साथ अकेली बैठी पाया। मेरे पूछनेपर कि शिकारी व दूसरा आदमी कहाँ है तो उत्तर मिला कि वे हांकेके साथ चले गये। यह सुनकर स्वभावतः मुझे शिकारी पर बहुत क्रोध आया, क्योंकि कभी-कभी उस दरीमें शेर भी आ जाते हैं। दूसरे यदि चीता केवल घायल होकर ही पीछे लौट पड़ता तथा इनको अपने सामने देख लेता तो बिना मारे छोड़ता नहीं। डाँट-डपट कर आगेके लिए शिकारीको आगाह कर बात समाप्त कर दी क्योंकि जानवर मिल जानेका हर्ष था।

जब मैंने पत्नीसे पूछा कि मैंने क्या मारा होगा तो उन्होंने कहा कि कोई सांभर चिंकारा मारा होगा कारण किसीको विश्वास ही नहीं

था कि दिनके समय तेंदुआ निकलेगा। परन्तु जब पीछे आते हुए हंकवे वालोंको चीता लाते देखा तो वह बहुत आश्चर्यचकित तथा प्रसन्न हुई। परन्तु साथ ही उन्हें भी कुछ दुःख हुआ कि थोड़ा ही दूर व देरके लिए वे भी क्यों न मेरे साथ रहीं।

इसके बाद तो हमलोग खूब शोरगुल मचानेके लिए स्वतन्त्र थे अतः हम सब खूब नहाये धोये और वहीं भली-भाँति भोजन कर तब बंगले लौटे।

शूकर झुण्ड।

शाम तक जब शेरका पता बिल्कुल ही नहीं लगा तब बंगलेके पीछेसे जानेवाली सड़क जो रापटगंज जाती है उस पर हम मोटरसे घूमने निकले। लगभग तीन मील जानेपर एक आंवलेका पेड़ देख पड़ा, जिसमें बहुतसे आँवले लट्टू ऐसे लटक रहे थे। यह देख सबकी तबीयत ललच उठी। अतः तुरत मोटर रोककर उन्हें तोड़ने व बटोरनेमें सभी लग गये। आँवलेकी चटनी अत्यन्त सुस्वादु व गुणकारक होती है। इसके बनानेमें हमारे मामाजी बहुत सिद्धहस्त थे।

परन्तु थोड़ी ही देरमें शाम हो चली तो हमलोग लौट पड़े। श्रीसूर्य-देव भी बड़ी शीघ्रतासे अस्ताचलकी ओर भागे चले जा रहे थे कि दिनमें प्रचण्ड ग्रीष्मातप वितरणके बाद वह भी कुछ विश्राम करें। समय बड़ा सुन्दर था। वायु भी शीतल मन्द तथा अनेक जड़ी बूटियोंसे सौरभपूर्ण होनेसे अत्यन्त लाभदायक भी थी। जंगलोंके बीचसे मन्दगतिसे मोटर चली जा रही थी। दृश्य अत्यन्त मनोरम था। हरिऔधके शब्दोंमें—

दिवसका अवसान समीप था, गगन था कुछ लोहित हो चला।
तरुशिखा पर थी अब राजती कमलिनी-कुल-वल्लभकी प्रभा॥

इसी प्रकार प्रकृतिका आनन्द लेते हुए हमलोग बंगले लौटे आ रहे थे कि इतनेमें शूकरोंका एक झुण्ड सामने कुछ दूरपर दिखायी दिया।

उस समय मेरा बड़ा पुत्र प्रताप ही मोटर चला रहा था। उसने मोटरकी गति खूब तेज बढ़ाई तथा शीघ्र ही हमलोग झुण्डके पास पहुँच गये। शूकर सड़क लांघते हुए भागते चले जारहे थे। उनके पास पहुँचते ही मैंने मोटरमें खड़े होकर सबसे मोटे शूकरको लक्ष्य कर उसपर तुरत गोली चला दी। मेरी गोली लगते ही वह वहीं उलट गया।

मामाजोको मेरा यह निशाना भी बहुत पसन्द आया, कारण एक तो अन्धकार काफी हो गया था दूसरे मोटर बड़े धक्केके साथ रुकी थी और साथ ही इंजिन चलनेसे कुछ हिल भी रही थी, फिर सर्वोपरि जानवर अपने पूरे वेगसे दौड़ रहा था। फिर भी निशाना लग गया इसकी प्रसन्नता थी। दूसरे दिन भी जब शेरका पता न चला तो हमलोंग घर लौट आये।

शेर

सिंह सिंहनी



शेर

शेरकी जाति :

शेरजातिके प्राणियोंको अंग्रेजीमें The great cats कहते हैं। इनकी जातिको Cat tribe अथवा Feline tribe यानी बिल्लीकी जाति कहा जाता है। ऐसा इसलिए कहते हैं कि इनका सारा सृजन रूप, आकार अथवा बनावट आदि सब बिल्लीसे मिलते-जुलते हैं। यहाँ तक कि मैंने अपने पूर्वजोंसे बिल्लीको शेरकी मौसी कहते सुना है। अंग्रेजोंमें कोई बड़ी कलहप्रिय स्त्रीको (Cat) कहकर सम्बोधित करते हैं क्योंकि बिल्लियाँ अक्सर बड़े विराव अथवा उच्चस्वरके साथ लड़ती हैं। वैसे ही कोई-कोई स्त्रियाँ अति विप्रलापप्रिय होनेके नाते अथवा वाग्युद्धके कारण, तात्पर्य यह है कि कलहप्रिय होनेसे Cat कही जाती हैं। बिल्लियोंकी क्रूरता भी प्रसिद्ध है।

भिन्न प्रकार :

शेरकी जातिमें लगभग ४०-५० विविध प्रकारके पशु होते हैं। परन्तु सबकी बनावट एक ही प्रकारकी होती है। उसी प्रकारका गोल माथा, उसी प्रकारके जबड़े तथा दांतोंकी बनावट और उसी प्रकार भीतर घुस जानेवाले नख।

तेंदुयेके प्रकरणमें मैं कह आया हूँ कि हिंस्र जन्तुओंमें बिल्लीकी जातिवालोंकी बनावट हर प्रकारसे परिपूर्ण होती है, और इनकी गणना क्रमशः सिंह, शेर, तेंदुआ और चीता इस प्रकार होती है।

सिंहसे अन्तर और सुन्दर :

यद्यपि सिंहको पशुओंमें राजा कहते हैं और वास्तवमें एक नर सिंहका मुखाकार अवश्य विशाल और भव्य मालूम पड़ता है, तो भी

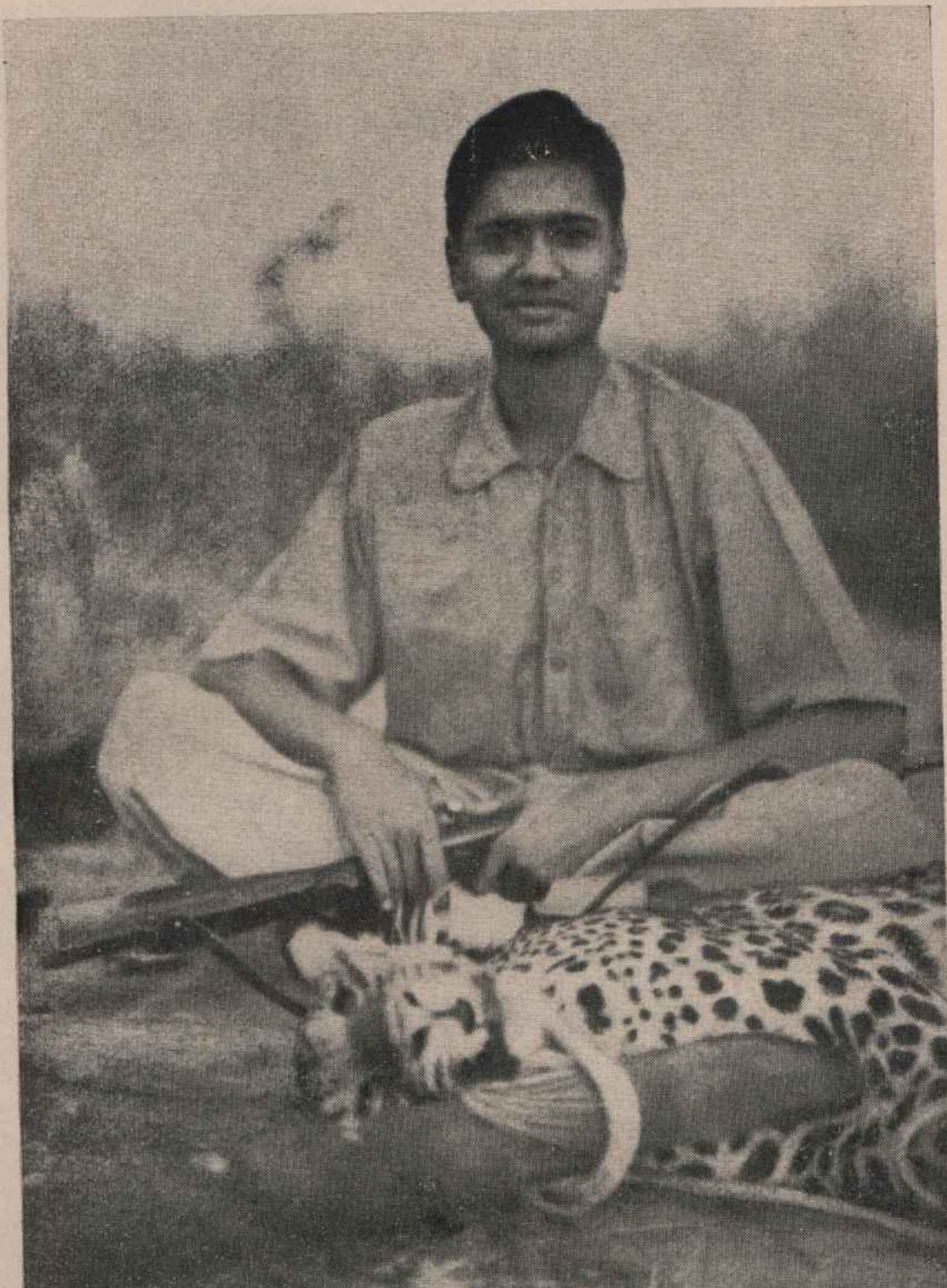
मेरी दृष्टिमें इससे भी अधिक चित्ताकर्षक सौन्दर्य एक (प्रौढ़) व्याघ्रमें होता है जिसके सम्पूर्ण अंग पूर्ण रूपसे विकसित हो गये हों। इनको ऊँचाई लम्बाई तथा वजन भी बहुत कुछ मिलते जुलते है। परन्तु इनके रूप और रंगमें बहुत अन्तर है। सिहके समूचे शरीरका एक ही रंग होता है पिंगल अथवा मैला पीला। इसके विपरीत व्याघ्रके सुनहरे अथवा नारंगी रंगके शरीर पर लम्बो-लम्बी कालो धारियाँ बड़ो सुन्दर प्रतीत होती हैं। इसके अतिरिक्त गले और पेटके हिस्से धवल होते हैं तथा काली रेखायें उन पर भी होती हैं। अतएव सब मिलकर व्याघ्र सिहसे अधिक सुन्दर अवश्य कहा जा सकता है। सिहकी गर्जनाको "चुक्कार" कहते हैं।

सिहसे बली :

एक ही परिमाणके होते हुए भी व्याघ्र प्रायः सिहसे अधिक बलवान् सिद्ध हुए हैं। मैंने कई बार समाचारपत्रोंमें पढ़ा है कि चिड़ियाघरोंमें भूलसे अथवा जानकर ये दोनों एक ही पिंजड़ेमें कर दिये गये। फलस्वरूप दोनोंमें घण्टों घमासान युद्ध हुआ और अन्तमें शेरने सिहको मार ही डाला। तो सौन्दर्य और बल दोनोंमें वे सिहसे अधिक ही हुए।

सिहोंका वासस्थान :

भारतवर्षमें तो सिह प्रायः लोपसे ही हो गये। अब केवल काठिया-वाड़में महाराज जूनागढ़के "गीर" जंगलोंमें कतिपय रह गये हैं। वह भी उनकी कृपा, दूरदर्शिता तथा कुशाग्रबुद्धिके कारण बचने पाये हैं। ये अनुमानतः लगभग एक सौ होंगे। एक समय था जब कि सिह देहलीके आसपास उत्तर प्रदेशमें तथा विन्ध्य प्रदेश तकमें पाये जाते थे। मुगल बादशाह "बाबर" तकके जमानेमें इनका शिकार फतेहपुरसीकरीके जंगलोंमें होता था। इसके पूर्व इतिहास और पुराणोंमें भी इनकी चर्चा हुई है।



कनिष्ठ पुत्र श्री राज्यवर्धन देव अपने आखेट चीते के साथ

महादेवी श्री दुर्गाका वाहन सिंह ही है :—

विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवाल - खेट - विलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्र-गदासि खेट-विशिखाँश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

परन्तु अभी भी अफ्रीकाके जंगलोंमें ये बहुतायतसे पाये जाते हैं। यद्यपि वहाँ भी इनकी संख्या घट रही है। यदि ईरानमें कुछ रह गये हों तो मुझे पता नहीं। एक समयमें ये यूरोपमें भी थे। पर अब वहाँ एक भी नहीं रह गये हैं, क्योंकि उनके भोज्य जन्तुओंके सहित वे मार डाले गये।

शेरोंका वासस्थान :

शेरोंका निवासस्थान मध्य एशियासे भारतवर्षके दक्षिण तक है। बंगालके सुन्दर वनमें भी ये बहुतायतसे पाये जाते हैं।

पानीसे डरना :

लोगोंका कथन है कि ये पानीसे भागते हैं परन्तु यह भ्रम है क्योंकि सुन्दरबनमें छोटे-छोटे टापू बहुत हैं और ये एक टापूसे दूसरे टापूपर आसानीसे तैरकर चले जाते हैं। मिर्जापुरके जंगलोंमें गर्मीसे बचनेके लिये यह घण्टों पानीमें बिताते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे भैंसें ग्रीष्ममें प्रायः जलमें बैठी रहती हैं। "रीवां" "सरगुजा" आदि दक्षिण प्रान्तोंमें भी ये प्रचुर संख्यामें पाये जाते हैं। पूर्वमें आसाममें भी इनकी संख्या बहुत है फिर वर्मासे होते हुए सुमात्रा, जावा तकमें पाये जाते हैं।

बर्फीले प्रदेशके शेर :

उत्तरमें साइबेरियाके बर्फीले स्थानोंमें भी पाये जाते हैं पर यहाँके शेर हिन्दुस्तानके शेरोंसे अधिक बड़े होते हैं। इनकी लम्बाई लगभग १३ फुट होती है एवं भारतवर्षके बड़े-से-बड़े शेरकी लम्बाई लगभग

११ फुट होंती है। फिर उत्तरप्रदेश यानी बर्फीले स्थानोंके शेरोंके अजिन (Coat = त्वचा) लम्बे और ऊनकी तरह होते हैं जिसमें ठण्डसे बचाव हो सके। (यहाँ) अपने देशके भी जाड़ोंके मारे हुए जानवरोंकी त्वचा मोटी और चिकनी होती है जो गर्मियोंमें शुष्क हो जाती है।

वासस्थान : चुनावके कारण :

अपनी सुगमताके अनुसार शेर अपने-अपने रहनेका स्थान भी चुन लेते हैं। इसके विपरीत सिंह खुले मैदानमें रहना अधिक पसन्द करते हैं। जो मानव जातिको उपेक्षादृष्टिसे देखनेके हेतु उनके कोपभाजन होकर फलस्वरूप एक प्रकारसे लोप हो चले। पर शेर घने जंगलोंमें ही रहना पसन्द करते हैं। ये यथाशक्ति मनुष्योंसे दूर ही रहते हैं अतएव कुछ मात्रामें बचे भी हैं। फिर इनको गर्मी भी कम सह्य है। घने जंगलोंमें साया भी रहती है। गर्मीसे बचाव भी होता है एवं मनुष्योंसे भेंट भी कम होती है। ये ऊँची-ऊँची सरपत घासों (Elephant grass) में भी रहते हैं जहाँ सूर्यदेवकी प्रचण्ड किरणोंका प्रवेश भी नहीं होता।

इनके रंगकी भी विशेषता इनके वासस्थानके कारण है। जहाँ ये आसानीसे दृष्टिगोचर नहीं हो सकते। बड़े वृक्षोंके नीचे झुरमुटी सायामें अथवा बड़ी-बड़ी घासोंके बीच जहाँ धूपछाँह पड़ती हो और इन लम्बी घासोंकी लम्बी काली लकीर ऐसी छाया पड़ती हो वहाँ यदि ये शान्त खड़े रहें तो सहसा पता नहीं चल सकता कि घासोंका अंग या झुट्टा है अथवा व्याघ्र है।

प्रकृतिमें प्रायः सभी जानवरोंकी ऐसी बनावट होती है कि वे परिसरस्थ-परिसर (Surroundings) में मिल जायँ ताकि दूसरे उन्हें शीघ्र पँहचान न सकें।

भोज्य जन्तु :

घने जंगलोंमें शेरोंको आहार भी प्रचुर मात्रामें मिल जाता है। ये स्वयं बड़े होते हैं अतएव भेड़, बकरी अथवा छोटे हिरनसे इनका पेट नहीं भर सकता। शाकाहारी पशु ही इनका मुख्य भोजन हैं। जैसे सांभर, घोड़रोज अथवा नीलगाय, जंगली अरने भैंसे, जंगली शूकर तथा गाय-बैल इत्यादि।

यदि अवसर मिला तो छोटी हथनियाँ तथा इनके बच्चे भी इनके आहार बन जाते हैं। ये प्रायः भालूसे भी लड़ जाते हैं और चीतोंको भी मार देते हैं। परन्तु चीते प्रायः भाग ही जाते हैं। कभी-कभी तो ये आपसमें भी लड़ जाते हैं।

शव खाना :

भूख लगनेपर तो कभी-कभी ये कुणप (तीन-चार दिनके गले शव) भी खा लेते हैं। पर वे ऐसा बहुत कम करते हैं। इसके विपरीत ये दुर्गुण सिंहमें अधिक पाये गये हैं। ऐसे तो अपनी आत्माके रक्षार्थ मनुष्य ही क्या नहीं कर बैठता। शास्त्रोंमें तो यहाँतक लिखा है कि अकालके समय यदि कुछ नहीं मिले तो मनुष्य कुत्तेका भी मांस खाकर अपने प्राणोंकी रक्षा कर सकता है।

प्रकृतिमें सन्तुलन :

सब जानवरोंमें एक प्रकारका सन्तुलन बनाये रखना प्रकृतिका नियम है। यह कभी किसीको अधिक बढ़ने नहीं देती। अपनी भ्रान्त बुद्धिके कारण अपने स्वार्थके लिए मनुष्य इस नियममें परिवर्तनकी चेष्टा करता है और धोखेमें पड़ जाता है जिससे अपना अपकार अथवा हानि ही कर बैठता है। एकको हटानेसे दूसरेकी वृद्धि होती है। दूसरेको हटानेसे तीसरेका नाश होता है। फलस्वरूप सब अव्यवस्थित हो जाता है।

उद्भिज जीवनका बाहुल्य शाकाहारी जन्तु अधिक :

प्रकृतिमें उद्भिज (वनस्पति) जीवन (Plant life) का बाहुल्य है और इनपर निर्वाह करनेवाले शाकाहारी जन्तुओंकी संख्या क्रव्याद् (कच्चा मांसाहारी) पशुओंकी अपेक्षा स्वभावतः अधिक होगी। क्योंकि उद्भिज जीवन (Plant life) संसारमें व्यापक रूपसे फैलनेसे शाकाहारी जन्तुओंको पर्याप्त मात्रामें आसानीसे भोजन मिल जाता है। जो कि क्रव्याद् पशुओंको कठिनाईसे मिलता है क्योंकि इनको अपनी समस्त बुद्धि और बल इन शाकाहारी जानवरोंको पकड़नेमें लगानी पड़ती हैं इसलिए क्रव्याद् पशुओंकी बुद्धि भी शाकाहारी पशुओंसे अधिक होती है।

शाकाहारी जन्तुओंकी संख्यामें वृद्धि भी अधिक होती है और फिर जितने छोटे जातिके पशु होते हैं उनकी उतनी ही अधिक वृद्धि होती है तथा ये अवस्था भी शीघ्र प्राप्त कर लेते हैं। क्रमशः बड़ी जातिवाले पशुओंकी वृद्धि कम होती जाती है। सम्भव है कि भोज्य पदार्थ कम मिलनेके कारण ऐसा होता है। शाकाहारी पशुओंमें इस वृद्धिको रोकनेके लिए छोटे-बड़े क्रव्याद् पशुओंका निर्माण परमात्माने किया है जिनकी जीविकाका निर्वाह एकसे दूसरेपर निर्भर है।

मनुष्य द्वारा प्रकृतिके सन्तुलनमें विषमता :

इसीपर कहनेमें आता है कि मनुष्य अपनी मूर्खताके कारण स्वार्थवश यदि एक प्रकारके भी जन्तुका नाश करता है तो प्रकृतिके सन्तुलनमें विषमता पैदा करता है क्योंकि फिर उसपर निर्वाह करनेवाले पशुओंका लोप हो जाता है। बहुधा देखा गया है कि घने जंगलोंमें भी जहाँ एक समय बाँघोंकी प्रचुरता थी परन्तु अब वहाँ एक भी दृष्टिगोचर नहीं क्योंकि उनके भोज्य अन्य-जन्तुओं जैसे सांभर आदिका अन्त कर दिया गया है। फलस्वरूप विवश होकर उनको भी अपना स्थान छोड़ देना पड़ा है। आजकल तो जंगल-के-जंगल कटते चले जा रहे हैं और

शिकारियोंकी संख्या भी प्रचुर मात्रामें बढ़ रही है जिससे प्रायः सभी पशुओंका अविविक्त हनन हो रहा है इसकी रोक तो एक समझदार गवर्नमेण्ट ही कर सकती है।

व्याघ्रवृद्धिके न्यूनींकरणके कारण

इस प्रकृतिके सन्तुलनमे एक प्रश्न यह भी उठता है कि व्याघ्रकी वृद्धि कैसे रुकती है। इसका ठीक कारण तो बताना अत्यन्त कठिन है पर जैसा पहले कह आया हूँ भोजन पर्याप्त मात्रामें आसानीसे न मिलने पर स्वभावतः इनकी संख्या कम रहेगी। कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है नरव्याघ्र अवसर मिलने पर जब बाघिन न हो तो अपने बच्चोंको ही मार डालता है। फिर ये बच्चे भी कम देते हैं। एकबारमें दो या तीन होते हैं। ऐसे ही कभी-कभी दो, चार या पाँच भी हो जाते हैं और इनके गर्भ धारण कालमें कमसे कम दो वर्षका अन्तर अवश्य होता है। यहाँ पर एक श्लोक याद आता है :—

सिंहो बली द्विरदशूकरमांसभोजी संवत्सरेण रतिमेति किलैकबारम्।
पारावतः खरशिलाकणमात्रभोजी कामी भवत्यनुदिनं वद कोऽत्र हेतुः॥

जीवनसंगिनी :

कहावत यह भी है कि व्याघ्र अपने जीवनमें एक ही संगिनी करता है। साथ ही यह भी देखा गया है कि बच्चे होनेके समय वह बाघिनको छोड़ देता है। परन्तु सिंह और तेंदुये प्रायः साथ ही रहते है। यद्यपि बच्चोंकी देख भाल उनकी माँ ही करती है तो भी रक्षणार्थ वे समीप ही रहते हैं तथा बच्चोंके बड़े होने पर भोजन प्राप्त करनेमें सहायता देते हैं।

बच्चोंका दो वर्ष तक बाघिनके साथ रहना :

यह तो कहना कठिन है कि बाघिन कबतक दूध पिलाती है। पर प्रायः देखा गया है कि लगभग दो वर्ष तकके बच्चे मांके साथमें ही रहते हैं।

शिशुकी शिक्षा :

इस बीच इन बच्चोंको अपनी माँसे हर प्रकारकी शिक्षा मिलती है। किस प्रकार छिपना, किस प्रकार छिप-छिपकर धीरगतिसे अपने भोज्य जन्तुओंका पीछा करना, कैसे उनपर हमला करना आदि-आदि सारी बातोंकी उन्हें शिक्षा दी जाती है। इस समयमें बाघिनकी प्रकृति सर्वथा विध्वंसक अथवा क्षयकारी हो जाती है। बच्चोंको शिक्षा देनेके हेतु वह संहार पर तुल जाती है। भोजनकी आवश्यकता न होते हुए भी वह एक प्रकारसे निष्प्रयोजन ही मारती है। फलस्वरूप शिशु अथवा किशोर-वयस्क व्याघ्र भी अनायास ही मारनेके हेतु ही संहार करते हैं परन्तु यह प्रकृति कुछ अवस्था प्राप्त करनेपर छूट जाती है। फिर तो वे क्षुधार्त होने पर ही मारते हैं।

पशुओंको पकड़नेकी रीति :

ये किस प्रकार पशुओंको पकड़ते और मारते हैं यह निश्चय करके नहीं कहा जा सकता। प्रथम तो जानवरोंके आकारपर निर्भर है। यदि वे बहुत बड़े न हुए तो प्रायः उनकी पीठपर कूदकर ऐसा झटका देते हैं कि उसकी गर्दन टूट जाती है अथवा गला पकड़कर नीचेकी ओर खींच लेते हैं। परन्तु भोज्य पशु यदि बड़ा हुआ तो वे उसकी पिछली टांग अथवा जांघकी नस तोड़ देते हैं।

फिर इनका यह भी स्वभाव है कि अपने भोज्य पशुको मारनेके बाद कभी तो उसे कुछ काल तक छोड़ देते हैं तथा स्वयं कहीं थोड़ी दूर जाकर विश्राम करते हैं और तब आकर खाते हैं और कभी उसी समय थोड़ा खाकर चले जाते हैं। और दूसरे दिन आकर आरामसे भोजन करते हैं परन्तु हर हालतमें ये अपने मारे हुए जानवरको पत्तियोंसे ढक देते हैं कि जिससे अन्य पशुपक्षियोंसे वह सुरक्षित रहे और इसी रक्षाके लिए बड़ेसे बड़े पशुओंको भी ये बड़ी दूर तक घसीटते हुए कोई घन

जगह अथवा नालोंमें डाल देते हैं जिससे इनके अतुलित बलका कुछ थोड़ा सा परिचय मिल जाता है। कभी-कभी "खरके" (जंगलमें की गौशाला जो सरपत और खरोंसे घिरी होती ही) में से एक बड़े बछड़ेको अपनी पीठ पर लादकर आसानीसे कूद जाते हैं। इस खरके की ऊँचाई लगभग छः फुट होती है।

नरभक्षी और कारण :

कभी-कभी व्याघ्र नरभक्षी हो जाता है परन्तु अधिकतर यह दुर्गुण बाघिनमें ही पाया जाता है। कदाचित् अपने बच्चोंको खिलानेके हेतु इसके साधारण भोज्य जन्तु आसानीसे न मिलनेके कारण प्रकृतिमें सबसे निर्बल जन्तु मनुष्यको ही पकड़कर ये अपना और अपने बच्चोंका पोषण करती हैं। जो भी हो, यह अवश्य है कि भोजनकी कमीके कारण ही ये नरभक्षी हो सकते हैं। अन्यथा मनुष्योंसे तो प्रायः सभी जानवर दूर भागते हैं। कभी ऐसा भी होता है कि सहसा सामना हो जानेसे यदि किसी कारण वे भागते चले आ रहे हों तो अपने बचावके हेतु आदमीको पकड़कर एक ओर फेंक देंगे और अपने निकल भागेंगे। भले ही उस फेंकसे मनुष्यकी मृत्यु हो जाय। एकबार जब जानवरको पता चल गया कि मनुष्य कितना निर्बल जन्तु है जिसे बिल्कुल आसानीसे मारा जा सकता है तो फिर उस जानवरको मनुष्यका डर हट जाता है। जब बाघ बहुत वृद्ध हो जाता है तब उसमें सांभर आदि वन्य पशुओंको पकड़नेकी शक्ति नहीं रह जाती। ऐसी अवस्थामें वह गाय बैल फिर भी आसानीसे पकड़ लेता है। क्रमशः फिर मनुष्यको पकड़नेमें देर नहीं होती। नये गोली चलानेवाले अनभिज्ञ शिकारियों द्वारा केवल आहत हुए जानवर प्रायः नरभक्षी हो जाते हैं। परन्तु यह कोई निश्चय नहीं कि केवल वृद्ध अथवा अपाहिज व्याघ्र ही नरभक्षी हों। कभी-कभी अच्छे स्वस्थ तथा बली प्रौढ़ एवं युवा व्याघ्र भी नरभोजी हो जाते हैं।

कदाचित् यह व्यसन परम्परासे मिला हो। बहुत सम्भव है कि एक युवा बाघको अपनी मातासे इसकी शिक्षा मिली हो।

जो भी कारण हो यह निश्चित है कि ऐसे जानवरोंकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण हो जाती है। स्वाभाविक है कि मनुष्यसे अधिक सम्पर्क रखनेके कारण इनको अपनी समस्त बुद्धि लगानी पड़ती है क्योंकि एक बुद्धि-वालेसे मोरचा लेना है।

शेर द्वारा मृत मनुष्योंकी आत्मा :

गाँव वालोंमें यह प्रसिद्धि है कि शेर द्वारा मृत प्राणीकी आत्मा उसीके साथ-साथ रहती है और समय पर आसन्न संकटकी सूचना उसे पहले ही दे देती है जिससे वह बच जाता है। कई स्थानों पर लाल रंगे हुए पत्थर देखनेमें आते हैं। वहाँ शेर द्वारा मारे हुए प्राणियोंका स्थान माना जाता है। गाँव वालोंका विश्वास है कि इन स्थानों पर आराधना करनेसे उनकी वह गति न होगी। कहीं-कहीं यह भी सुननेमें आया है कि किसी विशेष जंगली जातिमें बाघोंको बचानेकी शक्ति है जिससे शिकारीका निशाना चूक जाता है। इसमें सत्यका अंश कितना है यह तो कहा नहीं जा सकता परन्तु यह देखा गया है कि एक अच्छे, निपुण, अनुभवी, अचूक शिकारीसे भी अनायास ही उसका निशाना किसी अज्ञातकारणवश विफल हो गया।

चतुरता :

एकबार गोली लगा हुआ व्याघ्र पुनः जल्दी हाथ नहीं आता। उसीके लिए बंधे हुए दूसरे पड़वे (भैंसके नर बच्चे) पर भी शीघ्र नहीं आता। किसी-किसी चतुर व्याघ्रकी आदत होती है कि कोई पशु मारा, तत्क्षण थोड़ा भोजन किया और फिर तुरत ही मीलों दूर चला गया। एक रात्रिमें ये २५–३० मीलका धावा आसानीसे कर लेते हैं।

वन और उद्यानगृहके बाघोंमें अन्तर :

वनमें विचरण करनेवाले व्याघ्रकी मांसपेशियाँ एक जन्तु उद्यान-गृहमें पले हुए बाघकी अपेक्षाकृत बहुत पुष्ट और अत्यन्त विकसित होती हैं जिसकी कोई तुलना नहीं हो सकती। उसके रोयें भी बहुत चिकने व स्वच्छ होते हैं जैसे उनपर बराबर कंघो ब्रश फेरा जाता हो। ऐसे नर व्याघ्रोंका वजन जो पूर्ण युवावस्था प्राप्त हों, लगभग चार मन और बाघिनका लगभग तीन मन होता है। परन्तु कोई-कोई प्रौढ़ व्याघ्र जो युवावस्था पार कर चुका हो वह बहुत ही मोटा और चर्बियों-से भरा होता है। उसका वजन ५ और ६ मन तक होता है। खड़े होने पर उसकी छाती और पेट जमीनसे सटे हुए लगते हैं जिसमें मुश्किलसे एक बित्तेका अन्तर हो। इतने मोटे और भारो होते हुए भी इनमें स्फूर्ति और शक्ति दोनों ही अत्यधिक होती हैं। सम्भव है कि अपनी इसी गरुआई (स्थूलता) के कारण ये पेड़ों पर कम चढ़ते हैं। ऐसा नहीं कि ये चढ़ न सकते हों, पर यदाकदा ही चढ़ते हैं।

चर्बी :

इनकी चर्बी बहुत काममें आती है। विशेषकर गठियेके रोगमें तो अत्यन्त लाभप्रद होती है। इनकी छाती और कन्धेके पास अलगसे रखी हुई २–२॥ इंच लम्बी दो पतली-पतलो गलेकी प्राथमिक हड्डियाँ होती हैं जिन्हें अंग्रेजीमें (Lucky bones) अथवा मंगलकारी शुभ हड्डी कहते हैं। इनको अपने यहाँ 'सन्तोषी-मन्तोषी' कहते हैं। ऐसा विश्वास है कि इनको पहन लेनेसे प्राणो सन्तुष्ट रहता है। ये आभूषणके भी काममें आती हैं। इनके ब्रूच, लाकेट तथा टाइपिन इत्यादि भी बनते हैं। शेरको मूँछें प्रेमपाश अथवा तीक्ष्ण विषके काममें आती हैं।

आयु :

बाघोंकी आयु लगभग ३० बर्षकी कही जाती है।

नाम :

इनके मुख्य नाम नाहर, शार्दूल, व्याघ्र, चित्रकाय, शेर, बाघ, पुण्डरीक, मृगपति तथा द्वीपिन् इत्यादि हैं।

सिहसे भ्रम :

बहुधा लोग अज्ञताके कारण सिंह और व्याघ्रमें अन्तर नहीं करते। वास्तवमें जनसाधारण इन दोनोंके भेदसे अनभिज्ञ होते हैं। जिससे दोनोंको एक ही नामसे सम्बोधित करते हैं। कई सौ वर्षोंसे भारतवर्षमें सिंहोंके एक प्रकारसे लोप हो जानेसे और जनसाधारणको दृश्य न होनेसे वे बाघको भी सिंह, बब्बर, केहरी इत्यादि नामोंसे सम्बोधित कर देते हैं। परन्तु जैसा आरम्भमें लिख आया हूँ इन दोनों ही जानवरोंके रूप और रंगमें विशेष अन्तर है। जिस प्रकारके बाल घोड़ोंके गर्दन पर होते हैं उसी प्रकारके घने बाल "अयाल" अथवा "केशर" प्रत्युत उससे भी अधिक गहन सिंहके माथे और गर्दनके चारों ओर होते हैं। यही कारण है कि जिससे सिंहको "केहरि" अथवा "केशरि" कहते हैं। परन्तु यह अयाल सिंहनीको नहीं होते। वे इतनी सुन्दर भी नहीं होती।

नरपशुओंकी अधिक सुन्दरता :

प्रायः देखा गया है कि प्रकृतिमें बहुतसे नरपशु अथवा नरभक्षी अधिक सुन्दर होते हैं। एक उच्चतम उदाहरण सिंहका ही है। दूसरा हरिणोंमें भी देखा जाय तो काले अथवा विशेष सुनहले मृग नर ही होते हैं। और नर हरिणोंको ही सींगें होती हैं। तीसरे नीलगायको लीजिये। इनमें भी नर ही नीले तथा सींगदार होते हैं। इसी प्रकार पक्षियोंमें सबसे ज्वलन्त उदाहरण मयूरका है। इसका कण्ठ बहुत ही सुन्दर लम्बा और नीला होता है। तथा इसकी लम्बी-लम्बी सुन्दर पूछोंपर चन्द्रक बने रहते हैं। जिस समय वह अपनी पूछोंको पंखेके समान चौड़ा करके

अथवा फैलाकर नाचता है तो वह दृश्य बहुत ही सुन्दर लगता है। उसके सामने मयूरी नितान्त असुन्दर होती है।

रंग :

सिंहका रङ्ग मटमैला पाण्डुरङ्गी होता है। उसका समस्त अङ्ग एक ही रङ्गका होता है। इसके विपरीत बाघके शरीरका रङ्ग सुनहला तथा उसपर काली-काली लम्बी रेखायें होती हैं जिससे बाघको चित्रकाय भी कहते हैं। कहीं-कहीं गाँववाले बाघको "किरौना" कहकर सम्बोधित करते हैं जिसमें भय न लगे।

आंखें :

इन बिल्लीकी जातिवाले पशुओंको आंखोंकी बनावट बड़ी विचित्र होती है। साधारण बिल्लीकी आंखकी पुतली "तारा" दिनमें सूर्यको कान्ति के कारण एकदम पतली लम्बी हो जाती है और वही पुतली रात्रिमें अन्धेरा पाकर गोल-गोल तथा बड़ी होती है जिससे रात्रिमें बड़ी आसानीसे इन्हें सब चीजें स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाती हैं। इसी प्रकार शेरोंकी भी आंखोंकी पुतलियाँ दिनमें सकुचकर छोटी हो जाती हैं पर इनकी पुतलियाँ आकारमें गोल ही रहती हैं। व्याघ्र अधिकतर अपनी आंखोंके ही बल शिकार करते हैं। यद्यपि और भी इन्द्रियोंको काममें लाते हैं।

जिह्वा :

इनकी जिह्वा बिल्कुल रेती ऐसी होती है। हमलोगोंकी जिह्वा तो स्वाद लेनेके लिए होती है परन्तु इनकी जिह्वाकी बनावट ऐसी है कि हड्डियोंपर लगे हुए मांसको ये चाटकर निकाल ले सकें। इसी कारण पालतू शेरको बहुत सावधान होकर अपने अङ्ग चटाने चाहिए। गायकी जीभ भी इसी प्रकार खुरदरी होती है। पुराणोंमें दधीचि ऋषिका कथा प्रसिद्ध है कि इनका समस्त अङ्ग गाय द्वारा चटवा डाला गया। केवल अस्थि मात्र बच गयीं जिससे इन्द्रका वज्र बना।

शव खानेवाले मरीसे दूर :

जिस समय जंगलमें शेर "मरी" करता है—किसी जानवरको मारकर छोड़ देता है—उसपर गृद्धोंका झुण्ड सहसा टूट नहीं पड़ता क्योंकि बाघ "मरी" के समीपस्थ झाड़ीमें श्रान्ति मिटानेके लिए बैठा रहता है और जबतक बाघ "मरी" के निकट बैठा है, गृद्धोंका साहस नहीं कि वे "मरी" के पास भी जायँ। परन्तु जिस समय बाघ थोड़ा भी खाकर पानी पीने अथवा और किसी कारण कुछ दूर चला जाता है तब इनको अवसर मिल जाता है।

शिकारके भिन्न प्रकार :

बाघके शिकारकी मुख्य रीति दो ही तीन प्रकारकी है। एक तो हाथी-परसे। परन्तु इस प्रकारका शिकार केवल राजा-महाराजाओंको ही उपलब्ध है अथवा था और दूसरा जो साधारणतया प्रचलित है वह यह है कि शिकारीको "मचान" पर बैठा दिया जाता है, "मचान" के विषयमें तेंदुआ प्रकरणमें मैं पूर्व ही लिखा जा चुका है किन्तु पाठकोंके लाभार्थ उसका उल्लेख यहाँ पुनः कर देता हूँ। यह "मचान" दस-से-पन्द्रह फुटतककी ऊँची होती है अधिकतर दस-बारह फुटसे ऊँची बनायी ही नहीं जाती क्योंकि प्रायः ऐसा होता है कि उस स्थानपर ऐसे ही कभी बड़े पेड़ मिल जाते हैं नहीं तो छोटे पेड़ोकी ही सहायतासे मचान बनानी पड़ती है। यहाँ-पर एक बात और बता देना चाहता हूँ जिसका कि मुझे अनुभव हुआ वह यह कि सुरक्षाके अभिप्रायसे तो बहुत ऊँची मचान अच्छी लगती है परन्तु बहुत ऊँचे-से-नीचे मारनेमें प्रायः निशाना चूक जाता है। गोली प्रायः ऊपरसे होकर जानवरके पार गिरता है। इस ध्येयसे नीची मचान अच्छी होती है। यह अवश्य है कि उससे बचाव कुछ भी नहीं परन्तु थोड़ा-सा भी ऊपर रहनेसे एक तो दृष्टि दूरतक फैलती है जिससे सम्भव है कि जानवरको पहलेसे और दूरसे ही देख लें तथा सतर्क हो जायँ दूसरे निशाना भी यदि स्थिर होकर लगाया जाय तो चूकनेका

संशय नहीं रह जाय। मचान विभिन्न प्रकारकी होती है जो अधिकतर गोलुवां लकड़ोकी बनती हैं और अधिकसे अधिक तीन आदमी उसपर बैठ सकते हैं। कहीं-कहीं जल्दीमें गाँवसे खाट मँगाकर और उसको उलटकर पेड़में बाँध देते हैं।

शिकारी जब मचानपर बैठ जाता है तो शेरके लिए "हाँका" होता है। जैसा जङ्गल हो तदनुसार कम अथवा अधिक आदमियोंकी आवश्यकता होती है। बाघके शिकारके लिए कम-से-कम तीस-चालीस आदमियोंका होना अनिवार्य है। कभी-कभी तो तीन-चारसौ आदमियोंकी भी आवश्यकता पड़ जाती है। पर, साधारणतया सौ या सवासौ आदमी पर्याप्त हैं। इनमें आधेके लगभग तो दोनों ओर पेड़ोंपर बैठाये जाते हैं जो "ठोंक" का काम करते हैं। यदि बाघ ठीक मार्गपर चला आ रहा है तो कोई बोलते नहीं परन्तु यदि बाघकी इच्छा दाहिये-बायें करनेको हुई तो ये "ठोंक" वाले पेड़पर कुल्हाड़ी अथवा डण्डेसे प्रहार करते हैं यानी पेड़को ठोंकते हैं। यह शब्द सुनकर बाघ पुनः पलट जाता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि यदि वह क्रोधित हो अथवा अन्य किसी कारण हो तो इस ठोंककी परवाह नहीं करता, आदमीके ठोंकते रहनेपर भी वह तुड़ा जाता है परन्तु ऐसा अवसर कम होता है।

तीसरे मिर्जापुरके जङ्गल बड़े विस्तृत होते हैं अतः लगभग एक मीलकी दूरीसे हाँका शुरू होता है। कभी-कभी हाँका होनेके पूरे ४५ मिनट बाद तब हँकवे देख पड़े हैं और उनके ठीक आगे-आगे चला आ रहा बाघ।

परन्तु जब "मरी" होती है तभी इनका ऐसे हांकोंमें मिलना सम्भव हो पाता है और वह भी तब जब हँकवेवाले धीर तथा बुद्धिमान् हों।

बिना पड़वे बांधे इन शेरोंका पता लगना कठिन होता है। जब तक ये किसी बंधे हुए पड़वेको मार नहीं लेते तबतक इनका पता लगना सरल नहीं और हाथ आना तो और भी दुष्कर है। यदि बँधे हुए पड़वे न मारकर इन्होंने अलगसे भी कोई गाय, भैंस अथवा बैल मारा हो तो भी एक चतुर शिकारी उसका पता लगा सकता है और फिर उसी प्रकार हांकेका प्रबन्ध करके जानवरको हँकाते हुए उसी मचानके समीप ला सकता है जिसपर प्रमुख शिकारी बैठा हो। बहुधा ऐसा होता है कि चार-पांच मचाने होती हैं जिनपर भिन्न-भिन्न शिकारी बैठे रहते हैं। परन्तु जिस मचानपर व्यक्ति-विशेष बैठाया जाता है, एक तो वह मचान भी औरोंकी अपेक्षा अधिक ठीक जगह होती है दूसरे हांकनेकी और ठोंक बैठानेकी कलासे वे निर्देशित मचानके नीचे ही बाघको ला देते हैं। वह शिकारी मार सके अथवा नहीं यह दूसरी बात है किन्तु वे अपनी कला तो दिखला ही देते हैं।

तीसरा प्रकार "मरी" के निकट किसी पेड़पर मचान बनाकर सायं-कालसे ही रात्रिभरके लिए बैठ जाना होता है।

चौथा जीवित जानवर जैसे पड़वा, बकरी अथवा शूकर बांधकर समीपवर्ती वृक्ष पर अथवा उसी पर मचान बनाकर उसी प्रकार बाघकी प्रतीक्षामें रात भर बैठे रहना होता है। बाघ अधिकतर रात्रिमें ही शिकार करते हैं।

परन्तु उपरोक्त तीनों अवस्थाओंमें ही बड़ी सावधानीसे मचान बनवाना होता है। मचानके लिए लकड़ी दूरसे काटकर मंगवाना होता है, क्योंकि यदि बाघ निकट बैठा हो तो हल्ला सुनकर वह चला जायगा।

मनुष्यगन्धसे दूर :

फिर रात भर बैठनेके लिए जब मचानपर चढ़े तो मनुष्य-सम्बन्धी सभी वस्तुओंको वहांसे हटा देना चाहिए। उनके नाम व निशान भी

न रहें कि शेरको किसी प्रकारकी गन्ध मिल सके क्योंकि बाघ बहुत ही सावधानीसे इस बंधे हुए जानवर पर आता है। एक क्या कई बार चारों ओर प्रदक्षिणा करके जबतक अपना सन्तोष नहीं कर लेता कि किसी प्रकारका भय तो नहीं, तबतक वह उस पशु पर आक्रमण नहीं करता। यदि कहींसे भी उसे मानुष गन्ध मिल गयी तो फिर शिकारी-को उसके दर्शन नहीं। इसके विपरीत कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि गोली चलने पर भी वह दुबारा आया है, यदि उसके बाद हल्ला न किया गया हो और बाघको मनुष्य-गन्ध न लगी हो।

नीरव आगमन :

आश्चर्य इस बातका है कि इतना बड़ा और भारी जानवर होते हुए भी उस शून्य रात्रिमें जब हल्केसे हल्के शब्द भी तीव्रतासे श्रव्य होते हैं उस समय अखण्ड नीरवतामें भी इनका आना विदित नहीं होता। ऐसी अवस्थामें यदि शिकारी बहुत सतर्क न रहे तो धोखा हो जानेकी बहुत सम्भावना रहती है।

वृक्षों पर कम चढ़ना :

तेंदुओंकी अपेक्षा ये वृक्षोंपर कम चढ़ पाते हैं। अतएव वृक्षपर बैठे हुए शिकारीको इनसे कुछ न कुछ बचाव ही रहता है।

मचानसे न उतरना :

परन्तु जानवर आवे अथवा न आवे या घायल होकर पास बैठा हो अथवा दूर चला गया हो (जिसका ज्ञान अपनेको तो हो नहीं सकता) किसी भी हालतमें रात्रिमें मचानसे नीचे उतरना विषम विपत्तिका सामना करनेके अतिरिक्त कुछ नहीं कहा जा सकता।

रोमांचकारी शिकार :

इन्हीं सब अपनी हो असावधानियोंके कारण जब धोखा हो जाता है और बाघ चोट कर बैठता है तो बरबस हम भाग्यको ही

दोष देते हैं और यदि बच गये तो रोमांचकारी कहानी कहनेको रह जाती है।

यह भी निश्चित है कि कितना ही पूर्वोपाय किया जाय यदि इनका शिकार खेलना है तो कुछ न कुछ खतरेका सामना अवश्यमेव करना ही पड़ता है। कुछ बड़े शिकारियोंका कथन है कि यदि यथेष्ट निवारणोपाय किया जाय तो किसी प्रकारके धोखेकी सम्भावना नहीं रह जाती। यह एक विवादग्रस्त प्रश्न है पर इतना मैं अवश्य कह देना चाहता हूँ कि मनुष्योंके समान बाघोंकी प्रकृतिमें भी अन्तर रहता है। कौन बाघ किस समय क्या कर बैठेगा इसपर निश्चयेन कोई कुछ नहीं कह सकता।

मेरा नख्खी जानवरोंका सामना न होना :

भाग्यवश मुझे नख्खी (नखवाले) अर्थात् शेर आदि भयङ्कर हिंसक पशुओंसे अति निकटका या विशेष संकटकी स्थितिका अवसर कभी न मिला। यद्यपि किसी किसी प्रकारके संकट तो कई बार समक्ष आये, परन्तु ऐसा नहीं हुआ कि प्राण जानेकी दशा आ गयी हो। अतः उसका अनुभव न हुआ और न उसकी कभी लालसा ही था। परन्तु कभी-कभी यह इच्छा अवश्य जागृत हुई कि एकबार अपने हृदयको सबलता अथवा दुर्बलताके परीक्षणार्थ गर्जन करते हुए शेरका सामना करूँ। परन्तु परमात्माकी असीम अनुकम्पा थी कि उसने ऐसा अवसर मुझे कभी प्राप्त नहीं होने दिया। इस सम्बन्धमें मुझे अपने एक मित्रकी निम्नलिखित दशा याद आ जाती है।

इन्होंने शेरके शिकारका आयोजनकर अपने बड़े अफसरको निमन्त्रण भेजा। वे वरिष्ठ अधिकारी आये और पूर्व निर्धारित एक पहाड़ीके ऊपर अन्य सभी छोटे अफसरों सहित कुछ लोग दूर-दूरपर किन्तु एक लाइनमें बैठाये गये। यह पहाड़ी समतल जमीनसे लगभग ५० फीट ऊँची थी। शेरका हाँका सम्मुख नीचे मैदानमें हुआ। जब शेर नीचे सामने टहलता

हुआ आया तो उसका बृहत् आकार देखकर उन बड़े अधिकारीको भी गोली चलानेका साहस न हुआ। जब शेरने दो-चार बार आगे-पीछे चल कर देखा कि वह चारों ओरसे घिर गया है तथा बाहर निकलनेका कोई मार्ग नहीं रह गया है तो कई बार गर्जनके उपरान्त वह वहीं नीचेके मैदानमें आरामसे बैठ गया। उसकी वह गगनभेदी दहाड़ सुनकर प्रायः सभी शिकारी बेहोश हो गये और हमारे मित्र महोदय अर्द्धसंज्ञा-शून्य अवस्थामें अपने बचनेके हेतु एक छोटे कटीले खैरके वृक्षपर चढ़नेका असफल प्रयास करने लगे। बार-बार वे उस वृक्षपर चढ़ते, परन्तु प्रत्येक बार नीचे गिर जाते। पूरे दस मिनट तक उनकी यही अवस्था थी। खैरके काँटोंके कारण वे बहुत छिल भी गये तथा उनके वस्त्र भी विदीर्ण हो गये। अन्तमें वहाँ एक अनुभवी शिकारीने स्थिति सँभाली। उसने अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर हँकवे वालोंको आज्ञा दी कि वे तुरन्त हाँका बन्द करके उधरसे हट जायँ तथा इधर अपनी ओर आकर उल्टा हाँका कर दें जिसमें शेरको वापस जानेका मार्ग खुला मिल जाय। प्राणोंकी बाजी इसलिए कहा कि बहुत सम्भव है, इनकी आवाज सुन-कर शेर इनके ऊपर हमला कर बैठता। ऐसा करनेसे शेर वापस चला गया जिससे संकट हटा तथा मित्र महोदयको पकड़ कर होशमें लाया गया।

निशा आखेटके दोष :

रात्रिके शिकारको मैं कम अच्छा समझता हूँ। उसका सबसे बड़ा कारण यह है कि उस घनी अँधियारीमें कभी भी सच्चा निशाना नहीं लग सकता। यदि दैवात् मर्मस्थानपर गोली लग पायी तो इसको सौभाग्य ही समझना चाहिए। परन्तु बहुधा यह होता है कि घायल होकर बाघ भाग जाता है। यदि दूसरे दिनकी खोजमें संयोगसे वह मिल पाया तो बहुत अच्छा। परन्तु कई कारणवश शिकारी ऐसे घायल जानवरोंकी खोजमें उतनी तत्परता, परिश्रम तथा पराक्रम भी

नहीं दिखलाते जितना प्रारम्भिक मारमें। एक तो उतना साधन नहीं क्योंकि जब बाघ घायल होकर किसी घनी झाड़ी अथवा लम्बी घासोंके जुट्टोंमें छिपे बैठे रह जाते हैं तो ऐसी हालतमें भैंसोंके झुण्डकी सहायता लेनी पड़ती है। यही ऐसे पशु हैं जो बाघसे भी भय नहीं खाते और एकबारगी चारों ओरसे उसपर सहसा आक्रमण कर बैठते हैं। किन्तु सर्वदा तथा प्रत्येक स्थलपर यह उपाय सुलभ नहीं। ऐसी अवस्थामें साहस करके किसी शिकारीका ऐसे स्थानोंमें प्रवेश करना दुष्कर ही है। परन्तु इसके विपरीत यदि बाघ किसी ऐसे घने स्थानमें नहीं भी रहा तब भी कितने ही शिकारी कुछ न कुछ बहाना करके वहाँसे हट गये हैं।

घायल बाघोंको अवश्य मारना :

ऐसे किसी भी घायल पशुको उसी अवस्थामें छोड़ देना मेरे सिद्धान्तके सर्वथा प्रतिकूल है। परन्तु एक घायल व्याघ्रको छोड़ देना तो केवल निन्दनीय ही नहीं अपितु दण्डनीय भी होना चाहिए।

ऐसे व्याघ्र प्राय: नरभक्षी हो जाते हैं और कितनोंके प्राण ले बैठते हैं।

राइफल :

किसी-किसी शिकारीके पास बड़े रन्ध्र (Bore) वाली राइफल नहीं रहती, किन्तु बड़े जानवरोंको मारनेकी चेष्टा करते हैं, जिससे प्राय: धोखा खाते हैं। इसके विपरीत आजकल बहुत उच्चकोटिके शिकारीको हल्के रन्ध्रवाली राइफलसे अपने सच्चे निशानेके कारण बाघको भी मर्मस्थलपर मार लेनेसे सफलता प्राप्त हो जाती है। परन्तु ऐसे कितने शिकारी हैं ?

मेरा अपना मत है कि उच्च वेगवाली (High velocity) ३६६ रन्ध्रकी राइफलसे छोटी रन्ध्रवाली राइफल शेर मारनेके प्रयोगमें नहीं लानी चाहिए।

किसी-किसीका मत है कि दोहरी नालवाली राइफल (Double barrel H. V. rifle) अधिक उपयोगी होती है, क्योंकि उसे बिना कन्धेसे उतारे दाहिने-बायें दोनों ओर गोलियाँ शीघ्रतासे चलायी जा सकती हैं। यदि पहली गोली कुछ औचट हो पड़ी तो झट दूसरी चलायी जा सकती है।

परन्तु इसके विपरीत मेरा अनुभव है कि एक ही नालवाली राइफल यदि चार या पाँच गोलीकी हुई (Single barrel H. V. repeating rifle) तो अधिक बचावकी सम्भावना है, क्योंकि यदि किसी कारण दूसरी गोलीका निशाना खाली भी गया तो तीसरी और चौथी गोली भी उतने ही शीघ्र चला सकते हैं।

जो दोहरी नालके पक्षमें हैं वे यह भी कह सकते हैं कि यदि दूसरी भी गोली ठीक न लगा सके तो शिकार खेलने क्या चले और उसके लिए कोई भी बन्दूक किसी कामको नहीं। उसके उत्तरमें मुझे कहना है कि ऐसा देखा गया है कि प्रायः दूसरी गोली कभी ठीक नहीं लगती। इसके अनेक कारण हो सकते हैं। जैसे घबराहट तथा जल्दीबाजी। तीसरे पहली गोलीके धक्केसे निशाना गड़बड़ा सकता है जो फिर सावधानीसे जब तीसरी गोली चलायी जाय तो सफलीभूत होनेमें आता है। कमसे कम यह मेरा अपना अनुभव है।

फिर मूल्यके भी ध्यानसे एक नाली सस्ती पड़ती है तथा उतनी ही उपयोगी होती है।

यह विवादग्रस्त विषय है। उभयपक्षमें बहुत कुछ कहा जा सकता है। परन्तु उपरोक्त बातोंका ध्यान रखते जिसको जिसमें सुविधा हो वह वैसा अस्त्र प्रयोगमें ला सकता है। थोड़ी सावधानीसे चलानेमें सफलता अवश्य प्राप्त होगी। परन्तु एकनाली (Repeater magarjine rifle) होनेके कारण मैं कैसे बच पाया आगे "कालद्रंष्ट्राके सन्निकट" अथवा "पटवतकी बाघिन" में पढ़नेको मिलेगा।

१. "कालद्रंष्टाके सन्निकट" अथवा "पटवतकी बाघिन" :

एक बार शीत ऋतुके दिसम्बर मासमें केवल घूमनेके अभिप्रायसे हमलोग राबर्ट्सगंज गये थे। वहाँसे "सोन" नदी लगभग १६ मील दूरीपर है। सड़क प्रायः जंगलोंके बीचसे ही गयी है। तीसरे प्रहर हमलोग मोटरपर बैठकर "पटवत" गाँव तक पहुँचे। वहाँ सड़कका अन्त है। फिर नदीकी बालू शुरू हो जाती है। लगभग दो फर्लाङ्ग तक चलनेपर नदीका तट आरम्भ होता है। वर्षा ऋतुमें वह नदी करीब-करीब एक मील चौड़ी हो जाती है। इस समय धारा बहुत थोड़ी रह गयी थी। इस नदीमें भी पर्याप्त मात्रामें मगर घड़ियाल मिलते हैं। नदीके बाएँ तटपर यानी इधर ही कुछ पहाड़ोंकी श्रेणियाँ हैं। उसमें एक "खोड़वा" पहाड़ प्रसिद्ध है। इसीके नीचे मैंने बाघिन मारी थी जिसका वर्णन यहाँ कर रहा हूँ।

कुछ गाँववाले अपने सरल स्वभावके ही कारण हमलोगोंको घेरकर कुशल-मंगल पूछ रहे थे तथा हमें जल पिलानेके सत्कारमें लगे थे। फिर उनलोगोंका बड़ा आग्रह था कि हमलोग वहीं रुककर उस बाघिनका शिकार करें जो वहाँ उस समय भी काफी उत्पात मचाये थी। बातोंके सिलसिलेमें मालूम हुआ कि लगभग छः महीनेसे वह वहीं आसपासमें टिकी हुई है तथा १०० गाय-बैलोंका अन्त कर चुकी है।

परन्तु उस समय मेरे पास भारी राइफल नहीं थी, अतः मैंने अपनी विवशता उनके सम्मुख रखी तथा चार महीने बाद गर्मियोंके आरम्भमें पुनः आनेका वचन देकर उन लोगोंसे छुट्टी लेकर हम वापिस आये।

शेरका शिकार अधिकतर गर्मीके ही मौसममें अच्छा होता है। ऐसे तो बहुधा जाड़ोंमें भी होता है तथा जाड़ोंके मारे हुए जानवरोंके अजिन अथवा चर्म तथा रोएँ बहुत चिकने और मुलायम होते हैं परन्तु इन दिनों जंगल अधिक हरा-भरा होने तथा प्रत्येक



पटवत की बाघिन : लेखक सपरिवार

स्थलपर पशुओंके पीनेके लिए पर्याप्त जल होनेसे इनका मिलना आसानीसे संभव नहीं हो पाता। इसके विपरीत गर्मियोंमें जंगल बिल्कुल सूखे होते हैं, अतः जानवरके छिपनेकी जगह कम होती है तथा वह दूरसे आते-जाते दिखायी भी दे सकते हैं। फिर गर्मियोंमें बहुत स्थानोंके जल भी सूख जाते हैं। केवल मुख्य-मुख्य स्थानोंपर थोड़ा-बहुत जल रह जाता है। शेरोंको गर्मी भी बहुत सताती है। इसलिए गर्मियोंमें वे वृक्षोंकी छायामें और पानीके सन्निकट ही रहते हैं। जिससे उनका शिकार करनेमें बहुत सुगमता हो जाती है।

यही सब विचारकर मैंने गर्मीके आरम्भमें ही तदनुसार सन् १९३६ के अप्रैल महीनेमें सपरिवार प्रस्थान किया।

शेरके शिकारका यह मेरा प्रथम अवसर था। अतएव मैंने काफी लम्बा-चौड़ा आयोजन किया। हरप्रकारकी दवाइयाँ भी साथमें रखी गयीं। विशेषकर "टिंचराइडिन", रुईका बण्डल, सर्दी-खांसीकी दवा आदि-आदि। बहुत-सी प्राथमिक उपचारकी दवायें जिनमें एक "ब्राण्डी" की बोतल मुख्य थी। इन सबका तात्पर्य यह था कि 'दैवात् यदि शेर किसीपर हमला कर बैठे तो इतना प्राथमिक उपचार हो जाय कि कमसे कम अस्पताल तो पहुँचा जा सके।

तदुपरान्त मैंने राजासाहब बड़हरसे उनके जंगलोंमें शिकार करनेकी आज्ञा मांगी। कारण ये सब जंगल उन्हींके थे। उन्होंने न केवल सहर्ष अनुमति ही दी, मेरी पूरी मदद भी की। उन्होंने अपना एक हाथी और एक बनकठा भी मेरे साथ कर दिया जो शेरके शिकारमें बहुत कुशल था। ऊपरसे सारा प्रबन्ध करने तथा सूचना देनेके लिए एक घुड़सवार भी साथ दिया जिससे मुझे बहुत आराम मिला तथा जिसके लिए हम उनके बहुत आभारी हैं।

राबर्ट्सगंजमें नहरके बंगलेमें ठहरनेके लिए नहरके इंजीनियरसे मैंने पहले ही अनुमतिपत्र प्राप्त कर लिया था।

वहाँ पहुँचते ही मैंने भैंसे बांधनेकी आज्ञा दे दी। और उसकी देख-भाल व सानी-पानीके लिए एक चरवाहा भी नियुक्त कर दिया। मुख्य-मुख्य स्थानोंपर दूसरे दिन दो और भैंसे तथा तीसरे दिन पांच और बांधे गये। परन्तु जब मालूम हुआ कि वह बाघिन एक रातमें बीस-बीस मीलका चक्कर लगाती है तो उसके मुख्य-मुख्य रास्तोंपर चौथे दिन पांच भैंसे और बँधवाये। इस प्रकार कुल १३ भैंसे बँधवाये। अब उन्हें सानी-पानी देनेवाले चार-चार चरवाहे नियुक्त करने पड़े। वे भी जब सूर्यदेव अच्छी तरह निकल आते थे बहुत सतर्क होकर उन भैंसोंके निकट जाते थे। फिर वहाँ पहुँचनेके पहले दूरसे ही पेड़पर चढ़कर देख लेते थे कि भैंसा जीवित है अथवा शेरका भोज्य बन गया। यदि जीवित है तो उसके पास जानेमें कोई डर नहीं है पर यदि कोई भैंसा मृत देख पड़ जाय अथवा उस स्थानपर खूँटेसे बँधा देख न पड़े तो वहींसे उनको वापस आ जाना होता था।

जबसे हम राबर्ट्सगंज आये, दोपहरके पहले किसी दिन कहीं नहीं जाते थे। प्रतिदिन प्रतीक्षामें ही व्यतीत होता था। किन्तु सूचना मिलती कि आज भी "मरी" नहीं हुई तो थोड़ी निराशा होती। परन्तु फिर तीसरे पहर कारसे घूमने निकलते अथवा बच्चोंको हाथीपर चढ़वा कर घुमवाते।

छठे दिन प्रातः नौ बजे सवार घोड़ेको दौड़ाता हुआ इस भांति आ रहा था कि वह अवश्य कोई अच्छी सूचना लिए था। हमलोगोंने भी दौड़कर बरामदेमें ही उसका स्वागत किया। उसने बड़े हर्षके साथ सूचना दी कि आज पटवतमें "मरी" हुई है और जेबसे एक सींक निकाल कर अपनी हथेलीपर रखकर उसने बड़े गर्वके साथ पेश किया



पटवत की बाघिन : लेखक सपरिवार

मानो कोई बहुमूल्य उपहार सादर भेंट कर रहा हो। क्षणभर तो मैं स्तम्भित-सा खड़ा रहा पर तुरत ध्यान आया कि यह सींक बाघिनके पंजेकी नाप है। मैंने भी गम्भीर मुद्रासे स्वीकार करते हुए उसे नापा तो वह पूरे नौ अंगुल यानी लगभग छः इंच चौड़ा निकला। इसके माने कि बाघिन काफी बड़ी है। अतः मैंने उसे यथोचित पुरस्कार देकर बिदा किया और कहा कि मैं तुरत आता हूँ। जबतक तुम वहाँ हाँका एकत्रित करवा रखो।

पूरे पांच दिनकी प्रतीक्षाके बाद यह सुसंबाद सुनकर आनन्दका अतिरेक होना स्वाभाविक ही था। परिणामस्वरूप मैं अपनेको अधिक देरतक रोक न सका और तुरत चलनेको उद्यत हो गया।

पत्नीने आग्रह किया कि मुझे भी ले चलिये परन्तु शेरको शिकारका मेरा यह प्रथम ही अवसर था और वे ऐसे किसी शिकारमें कभी भी साथ नहीं बैठी थीं, अतः मैंने इनको साथ रखना उचित नहीं समझा। यह भी सोचा कि यदि जानवर मचानके अतिनिकट आ जाय और गर्जन कर बैठे तो ऐसे समयमें इनकी क्या दशा होगी। फिर मुझे राइफल चलानेका अवसर मिल पायेगा, इसका भी मुझे सन्देह था। इन्हीं सब कारणोंसे मैंने उन्हें साथ चलनेकी अनुमति देनेमें असमर्थता प्रकट की यद्यपि उन्होंने कहा भी कि आपके रहते मुझे भय लगनेकी आशंका भी नहीं तो भी मैंने उन्हें साथ ले जानेका साहस नहीं किया। चलते समय उन्होंने बहुत-सी सलाहें दीं जिनका सारांश यह था कि अपने उन्मादमें मैं कोई ऐसा कार्य न कर बैठूँ, जिससे मेरे प्राणोंपर आ जाय, क्योंकि वे जानती थीं कि आखेटके समय मैं अपनेको भूल-सा जाता हूँ और इतने साहसका काम कर बैठता हूँ कि जिससे धोखा होनेकी पूरी सम्भावना हो जाती है।

मैंने मोटर उठायी और १६ मीलका रास्ता बातकी बातमें तय कर लिया।

पहुँचते ही मुख्य शिकारीने प्रश्न किया कि मेमसाहब कहाँ हैं। इसके प्रश्नसे मैं बड़ा चकित हुआ और उसे रूखा सा उत्तर दिया कि उनको साथ रखनेका तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। इसपर उसने तत्काल प्रत्युत्तर दिया कि मेम साहबको भी साथ रखें, वह शिकार नहीं खेल सकेगा। मैंने उसे बहुतेरा समझाया परन्तु उसने मेरी एक भी न सुनी तथा उल्टे मुझे बहुत आश्वासन दिया कि मचान काफी ऊँची और सुदृढ़ रहेगी। फिर मुझे सम्मानित पद देते हुए, जिसे कहते हैं उसे मुझे "जंगपर चढ़ाया" कि आप तो साथ रहेंगे ही, तो क्या भय है।

विवश होकर मुझे लौटना पड़ा। चलते-चलते उसने कहा कि आप-लोग आरामसे भोजनकर दो बजेके लगभग आ जाइये। तबतक वह हाँका भी इकट्ठाकर रखेगा और हाथी भी आ जायेगा। क्योंकि सड़कसे लगभग दो मील जंगलके भीतर नदी नाले डांकते हुए जाना है। मुझे तो इस बातका भय हुआ अधिक विलम्ब होनेसे शेर कहीं चला न जाय। शेरके शिकारके लिए उस समय मैं नव छात्र (Tyro) था। मुझे यह पता नहीं था कि "मरी" करनेके उपरान्त जानवर प्रायः दिनभर कहीं जाता नहीं जबतक कि दूसरे दिन शाम अथवा रातको उसपर पूरा भोजन न कर ले। फिर गर्मीका भी दिन था। ऐसे कोई-कोई ही शेर बहुत चतुर अथवा नरभक्षी होता है जो जानवर मारे और चलता बने। कुशल यह थी कि वह शेरनी अभी तक नरभक्षिणी नहीं थी। अतः शिकारीने बहुत आश्वासन दिखाकर मुझे विदा किया। मुझे शिकारीको रुष्ट भी नहीं करना था। उसको प्रसन्न रखनेमें ही अपना काम हो सकता था। अतः उससे अब विशेष बहस करना युक्तिसंगत न देख मैं लौट पड़ा और आकर पत्नीको सारा वृत्तान्त सुनाया। शिकारीकी इस

ना-समझो पर मैं कुड़बुड़ा भी रहा था। परन्तु वे यह सब सुनकर कुछ मुस्कुरायीं और मुझे शान्त कर भोजन करनेके लिए कहा।

उनकी वह मन्द मुस्कान देखकर मुझे कुछ ऐसा प्रतीत हुआ कि इसमें कोई रहस्य अवश्य है। परन्तु उस समय कोई खोद-विनोद करना मैंने उचित नहीं समझा। पीछेसे इसका भेद खुला कि पत्नीने शिकारीसे कह रखा था कि बिना उसके साथ रहे वह मुझे अकेले शिकार कदापि न खेलने देगा। कारण उन्होंने सुन रखा था कि शेरके शिकारमें जान जानेका बहुत भय है और यथार्थमें मैं आवेशके कारण बुद्धिसे काम नहीं लेता हूँ। अतः ऐसी अवस्थामें उनका साथ रहना अनिवार्य है। उनके कहनेको भला एक छोटा सा शिकारी कैसे टाल सकता था। फलस्वरूप मुझे ही झुकना पड़ा।

मनमें उद्विग्नता तो थी ही, फिर भी जैसे तैसे अपनेको शान्त रखकर मैंने कुछ भोजनका नाम किया। यों ही शिकारके पहले बहुत हल्का भोजन करना चाहिए। नहीं तो तबियत भारी हो जाती है और ठीक समय पर झपकी आ जानेका अन्देशा रहता है। दूसरे शौचादिकी भी आवश्यकता पड़ सकती है। एक बार मचानपर बैठ जानेके उपरान्त उसका निवारण करना कठिन हो जाता है।

शिकारीके कथनानुसार भोजनके उपरान्त थोड़ा विश्रामकर एक बजते-बजते हम निकल पड़े। आध घण्टेमें पटवत पहुँच गये। वहाँ सारी तैयारी पूर्ण थी। लगभग डेढ़सौ हँकवे भी उपस्थित थे और हाथी भी उपस्थित था।

इस बार पत्नीको देख शिकारीका चेहरा प्रसन्न था। उसने सामने आकर सलाम किया और कहा कि सारी तैयारी ठीक है। अब आप लोग हाथी पर बैठें और प्रस्थान करें तथा वह भी हम लोगोंके साथ हो लिया। दूसरे एक और चतुर शिकारीको उसने हँकवे वालोंके साथ

कर दिया। हँकवे वाले ढ़ोल, टीन, कनस्टर आदि नाना प्रकारके ग्रामोण गाजे-बाजेसे लैस थे।

कोलाहलकी इतनी सामग्री देख मैंने शिकारीसे अनुरोध किया कि यथासम्भव "चुप्पा" हाँका हो तो अच्छा हो, जिसमें बाघिन गरजती भागती हुई न आवे। परन्तु वे सब इस बातसे सहमत नहीं हुए और ठीक ही नहीं हुए, क्योंकि यह बाघिन सैकड़ों गउओंको खा चुकी थी जिससे बहुत चतुर हो गयी थी। उसके नरभक्षिणी होनेमें विशेष विलम्ब भी न होता। अतः बहुत सम्भव था कि अधिक हल्ला न सुनकर ऐसा चालाक जानवर अवसर देख हँकवे वालोंकी ओर ही लौट पड़ता और मार्गमें किसीको घायल करते हुए भाग जाता। ऐसो अवस्थामें आरम्भमें ही खूब कोलाहल करनेमें ही कल्याण था। उनकी युक्तिसंगत बातें सर्वथा मानने योग्य थीं। फिर मेरा भी तो उत्तरदायित्व था। यदि मेरे आग्रह पर किसीको चोट लग जाती तो मुझे ही लज्जित होना पड़ता। परन्तु वे इस पर सहमत हो गये कि हाँका एक मीलसे उठेगा। शुरूमें तो वे खूब शोरके साथ हाँका आरम्भ करेंगे और क्रमशः हलका करते आयेंगे।

इस समझौतेके उपरान्त हमलोग अपने-अपने रास्तों पर चल पड़े। कहीं-कहीं मार्ग बहुत ही बीहड़ था। नदीके करारेपर उतरते और चढ़ते समय बड़ी कठिनाईसे कसकर पकड़कर बैठे रहना पड़ता था। नहीं तो हाथी परसे सरककर गिरनेमें देर न लगती। उस "खोड़वे" पहाड़के नीचे हमें जाना था। जाते-जाते हमलोगोंको एक घण्टा लग गया तथा उसके आसपास ही शेरनीने भैंसेको मारा था इसलिए अब हाथीको और आगे ले जाना ठीक न था, अतः हमलोग हाथीसे उतर पड़े और बहुत शान्तिसे धीरे-धीरे आगे बढ़ते गये। शिकारीने पूछा कि "मरी" देखनेकी इच्छा हो तो दूरसे दिखला दें परन्तु जानवरके भड़क जानेके अन्देशसे मैंने देखना अस्वीकार कर दिया। थोड़ी ही देरमें वह

पहाड़ पास आ गया और हमलोगोंको उस पर चढ़ना पड़ा। गर्मीके कारण उस चढ़ाईमें थोड़ी थकावट अवश्य हुई परन्तु हम आधा पहाड़ भो न चढ पाये होंगे कि मचान देख पड़ गयी जिसपर हमें बैठना था।

चूँकि ढालवेंदार आधे पहाड़ पर मचान बनी थो इसलिए सामनेका हिस्सा तो जमीनसे लगभग बारह-तेरह फोट ऊँचा था परन्तु पीछेका हिस्सा पाँच फीट ऊँचा भी न था। आधे पहाड़ परकी मचानोंमें यह दुर्गुण सदैव रहता है। विशेष भय तो तब होता है जब कि जानवरके आनेकी सम्भावना पीछेसे हो।

शिकारीने वहीं एक रोचक कहानी सुनायी कि वहाँके एक कलेक्टर साहब बीस फीटसे एक इञ्च भी कम ऊँची मचानपर नहीं बैठते थे। और पैदल चलना बिल्कुल पसन्द नहीं करते थे यहाँ तक कि हाथी परसे ही वे मचान पर चढ़ते और उतरते थे। परन्तु जैसा मैं पहले कह आया हूँ कि इतनी ऊँची मचान होनेसे वह शेर नहीं मार सके। यदि एक मारा भो हो तो वह नहींके समान है।

पहले मैंने पत्नीको चढ़ाया। फिर अपनी दोनों बन्दूकें तथा पानीकी कुप्पी इत्यादि उनको दी और तब मैं स्वयं चढ़ा। पीछेसे शिकारी भी चढ़ा जो वहाँ तहसीलका चपरासी भी था।

पत्नीको मैंने अपने बायें, कुछ पीछेकी ओर बिठाया कि जिसमें सामना खुला रहे तथा राइफलकी नाल घुमानेमें कोई अटकाव न रहे। शिकारीको मैंने पीछे बैठाया और मनमें निश्चय कर लिया कि शेरके शिकारका मेरा यह प्रथम अवसर होने और पत्नीके साथ होनेसे जानवरको निकट न आने दूँगा। दूरसे ही गोली चला दूँगा। साथ ही अपने पीछेकी ओर तो किसी भी हालतमें नहीं ही आने दूँगा।

मचान तक पहुँचनेके थोड़ी दूर पहलेसे ही शिकारीने पत्तों सहित पांच-सात टहनियाँ तोड़ली थीं, जिसे मचानके चारों ओर लगा देनेसे कुछ प्राकृतिक ओट रहे। मचानके स्थानपर पहुँचकर इसलिए नहीं तोड़ते कि इसमें जानवरको किसी प्रकार हमलोगोंका भान न होने पावे। वहाँ पर तो बहुत ही शान्त रहनेकी आवश्यकता है। उन टहनियोंको हमलोगोंने अपने चारों ओर खोंस लिया तथा उन्हें इस प्रकार लगानेका प्रयत्न किया कि पत्तियोंके सामनेका हिस्सा बाहरकी ओर रहे जिससे वे पेड़के ही हिस्से लगें। ऐसी सावधानी तेंदुओंके शिकारमें विशेष करनी पड़ती है क्योंकि वह जानवर बहुत ही चालाक होता है। उसको यदि थोड़ा सा भी सन्देह हो जावे कि यह स्वाभाविक नहीं है, प्रकृतिके विरुद्ध है तो वह वहींसे तत्क्षण अन्तर्ध्यान हो जाता है। यह सब उपक्रम करते-करते हमें पाँच-सात मिनट लग ही गये। फिर १० मिनट शान्त बैठनेके उपरान्त हाँका बोल दिया। बड़ी दूरसे गाजे बाजेका शब्द व हँकवे वालोंको कोलाहल सुनायी पड़ा। मैं तुरत सँभलकर बैठ गया तथा राइफल भी सम्भाल ली। परन्तु भारी राइफल १० मिनट तक लिए हुए थक गया। शिकारीने धीमेसे कहा कि अभी विलम्ब है। अतः मैंने राइफल सामने बेड़बानीपर खड़ी कर दी। चित्तोद्वेगके कारण हृदय थोड़ा धड़कने तो लगा था परन्तु तुरन्त ही शान्त पड़ गया। धड़कते हुए हृदयसे कभी सच्चा निशाना नहीं लग सकता।

लगभग २०–२५ मिनट तक हम बिल्कुल शान्त बैठे रहे। हांका जब निकट आने लगा तब मैंने पुनः राइफल सँभाली, और सतर्क होकर बैठ गया। इतनेमें दूरपर जानवर आता हुआ देख पड़ा, जो लम्बी-लम्बी डगें मारता हुआ हल्की-दुलकी चालसे चला आ रहा था। उसे देखते ही हमारा हृदय आनन्दसे भर गया।

प्रचण्ड गर्मीके कारण हांकेवाले भी अब बहुत श्रान्त थे। केवल धीरे-धीरे बढ़ते आ रहे थे। इसलिए जानवरकी गति भी मन्द थी। क्षण

भरके लिए बीच-बीचमें रुककर वह अपनी गर्दन पीछेकी ओर घुमाकर हँकवेवालोंकी आहट लेता जाता था कि वे अभी कितने पीछे हैं। यदि अभी भी हँकवेवाले रुक जावें और आगे न बढ़ें तो वह भी किसी वृक्षकी छांहमें विश्राम कर ले। एक तो गर्मीका दिन, तीसरे पहरका समय, फिर सर्वोपरि भैंसा खाये हुए। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता था कि उससे भागा ही नहीं जाता था। जीभ लटकाये हांफती-हांफती एक चिरौंजीके वृक्षके नीचे पुनः उसी मुद्रासे वह खड़ी हो गयी।

यह वृक्ष मेरी मचानसे लगभग ४० गज दूर रहा होगा। वहाँ उसने कुछ देर ठहरनेका विचार किया, ऐसा मुझे अनुमान हुआ। वहींसे दो मार्ग और जाते थे। एक तो सीधा बिल्कुल दूसरी ओर और दूसरा अपनी ही ओर परन्तु मचानसे दाहिनी ओर निकलता हुआ ऊपर चला जाता था। यदि उसने पहले रास्तेपर पग रखा तो हाथसे निकल जायगी। उस समय मुझे पता नहीं था कि उस मार्गपर जानवर जानता कि आवाज लगी तो जा ही नहीं सकता था। एक तो उसके लिए उधर आगे चलकर कोई मार्ग न था दूसरे वहीं निकट अन्य वृक्षोंपर निपुण "ठोंक" बैठाये हुए थे कि उधर जानवर पग ही नहीं रख सकता था। दूसरे यदि अपनी ही ओर और निकट आने दिया जाय तो फिर कोई ऐसा वृक्ष नहीं जिसके नीचे वह क्षणभरके लिए भी रुक सके। फलतः मुझे दौड़पर ही गोली चलानी पड़ेगी जिससे निश्चयेन यह नहीं कहा जा सकता कि निशाना सच्चा लग ही जायगा। फिर वह मेरे दाहिनी ओर भी होती, जिससे राइफल घुमाने और लगानेमें और भी कठिनाई होती। सर्वोपरि पत्नीके ध्यानसे उसका अतिनिकट आना उचित न समझ मैंने वहींपर उसे गोली मारनेका निश्चय किया।

परन्तु इसमें भी कठिनाई हो रही थी। यों तो जबसे मेरी दृष्टि उसपर पड़ी तभीसे राइफलकी नाल बराबर उसके शरीरसे मिलती चली आ रही थी। फिर भी मेरी कठिनाइयोंका ज्ञान एक अनुभवी शिकारी

ही कर सकेगा, जबकि मैं यह कहूँ कि जानवर बिल्कुल मेरी हो ओर रुख करके खड़ा था, जिससे केवल उसका मुख ही देख पड़ता था। दूसरे ढालपर होनेसे सिवाय मुखके और कोई भी अंग देख नहीं पड़ता था। और यदि यह कहें कि माथेका निशाना बहुत अच्छा होता है तो बाघका ललाट कभी उन्नत नहीं होता वह भी बिल्कुल ढालुवां होता है जिसपर गोली छटक जानेका पूरा भय रहता है। इसी उधेड़बुनमें पड़ा था। यद्यपि ये सारी बातें पलभरमें ही मेरे माथेमें घूम गयीं। परन्तु इतनेमें जानवरने गर्दन मोड़कर पुनः कुछ आहट लेनेकी चेष्टा की, कि मुझे बगली निशानेका अवसर मिल गया। यद्यपि अभी भी उसका मुख बगली ही देख पड़ता था इसलिए गोली गर्दनपर लगे यह अधिक सम्भव नहीं था। किन्तु, यह भी सम्भव न था कि उसकी इस मुद्राकी उपेक्षा की जाय और उसपर गोली न चलाई जाए। मेंने उसी मुद्रामें उसपर गोली दाग दी।

गोली लगते ही जानवर लौट पड़ा और तीन ही पग पीछे एक झाड़ीकी ओटमें बैठ गया। फलस्वरूप मुझे दूसरी गोली चलानेका अवसर ही न मिला। जब जानवर उसके पीछेसे नहीं निकला और न उसने कोई शब्द ही किया तो मैंने अनुमान किया कि सम्भवतः गोली ठीक ही लग गयी होगी और मृत पड़ा होगा। परन्तु जानवरके दृष्टिगोचर न होनेके कारण निश्चय रूपसे मैं कुछ नहीं कह सकता था।

राइफलकी ध्वनिके बाद कुछ देरके लिए बनमें पूर्ण निस्तब्धता छा गयी। हँकवेवाले भी एकदम चुप हो गये। किन्तु उत्सुकताके साथ-साथ वे भी जाननेका प्रयत्न कर रहे थे कि जानवर कहाँ है, गोली लगी अथवा नहीं इत्यादि। जब उन्हें दुबारा गोली चलनेकी आवाज न लगी और न जानवरकी ही आवाज लगी तो द्विगुणित रूपसे उन्होंने कोलाहल आरम्भ किया कि यदि जानवर जीवित हो तो वह लौटनेकी चेष्टा न करे, बल्कि

उसे मचानकी ही ओर भागना पड़े और वे लोग भी बचे भी रहें। इसी प्रकार हल्ला करते तथा उस स्थानको चारों ओरसे घेरते हुए वे मचानके निकट आ गये और हमने परस्पर एक दूसरेको देखा।

संकेत द्वारा मैंने उन्हें जानवर दिखलानेका प्रयत्न किया तथा पेड़पर ही चढ़े रहनेका भी संकेत किया।

मैं पहले ही बता चुका हूँ कि वह स्थान पहाड़ो था। अतएव उस समय जानवरके दोनों ओर यानी मेरी और हँकवेकी ओर कुछ ऊँची पहाड़ी थी। इसलिए हँकवे वाले भी जानवरसे काफी ऊँचे पर होनेसे और उनकी ओर आड़ न होनेसे वे उसको स्पष्टतया देख सकते थे।

जानवर बिल्कुल शान्त पड़ा देखकर और उसके मुखसे रुधिरकी धारा बहते देख आपसमें वे जोर-जोरसे कहने लगे कि जानवर तो मर गया। कोई कहता था "मुँहवै टूट गयल हो" तो कोई कहता था कि "एक टांग टूट गयल हो"। यह सुनकर मेरे भी कान खड़े हो गये कि क्या बात है गोली तो मैंने एक ही चलायी और वह भी अपनी समझमें गर्दनके ऊपर। तो किसीका कहना है कि मुँह टूट गया, किसीका कहना है कि टांग टूट गयी कुछ समझमें नहीं आया। इनकी बातोंसे तो यही प्रतीत हुआ कि गोली गर्दनपर नहीं लगी। अपने-अपने दृष्टिकोणसे जिसको जो अंग स्पष्ट देख पड़ता था उसपर ही टिप्पणी करता था।

चूँकि जानवरके मरनेकी बात निश्चय नहीं हुई थी, इसलिए मचान-परसे मैं बोल नहीं सकता था। परन्तु अब मुझे पूरा सन्देह होने लगा। हँकवे वालोका कहना था कि जानवरको चोट इतनी गहरी बैठो है कि वह हिल भो नहीं सकता तो उसके समीप जानेमें उन्हें कोई अँदेशा नहीं होना चाहिए। परन्तु मैं इसके कई किस्से पढ चुका था कि गहरी चोटके कारण थोड़ी देरके लिए सभीको मूर्छा आ जाती है, जो दूर होनेपर दूसरोंके लिए घातक सिद्ध हुई है। अतएव संकेत द्वारा ही मैंने उन्हें जानवरके ऊपर ढेले फेंकनेके लिए कहा।

बहुतेरे ढेले वर्षाये गये परन्तु वह टससे मस न हुई। फिर भी मुझे सन्तोष न हुआ। यद्यपि वे कहने लगे कि वह मर गयी है। मैंने कहा कि ढेला ऐसा फेंको कि उसे लगे। संयोगवश एक बड़ा-सा ढेला ठीक उसीके ऊपर गदसे गिरा और वह गरजकर उठी तथा उल्टे पाँव ही जिधरसे आयी थी केवल तीन ही टाँगोंसे परन्तु हरिणकी ऐसी छलांगें मारती हुई उधर ही भागी। साथ ही मैंने यह भी देखा कि उसके मुखका निचला हिस्सा टूटा हुआ लटका था और उससे रुधिर टपक रहा था। एक ओर तो यह सब बातें मनपर अंकित-सी हुई दूसरी ओर मैंने सोचा कि गजब हो गया। जब जानवरमें अभी भी इतनी तेज दौड़नेकी शक्ति है तो बहुत सम्भव है कि वह किसी न किसी हँकवे वालेको ही मार डाल सकती है और यदि बचकर निकल गयी तो नरभक्षिणी अवश्य हो जायगी।

फिर तो एक बारगी जोरसे चिल्लाकर मैंने हँकवे वालोंसे कहा कि वे सबके सब तुरत पेड़पर चढ़ जाएँ। देखते-देखते वे लोग बन्दरोंकी तरह पेड़ोंपर चढ़ गये। इधर पत्नीको भ्रममें डालकर कि मैं अभी आता हूँ और शिकारीको बन्दूक थमाकर तथा सावधान करके मचानसे अपनी राइफल लिये मैं तुरत नीचे उतर गया। जब तक कि वे लोग कुछ कहें मैं जानवरको ओर निकल गया। पत्नीने पुकारा भी किन्तु मैंने उन्हें आश्वासन देते हुए उत्तर दिया कि आप घबड़ायें नहीं मैं अभी आता हूँ और मचान परसे किसी भी हालतमें उतरनेकी चेष्टा न करें।

इतनेमें पास ही एक दूसरी मचानपर राजा साहब द्वारा नियुक्त दूसरा शिकारी जो अपने दो साथियोंके साथ बैठा था मुझे नीचे जाते देख तुरत उतर आया और मुझे समझानेका प्रयत्न किया। परन्तु जब मैंने उसकी एक भी न सुनी तब वे तीनों भी मेरे साथ हो लिये तथा जिधर जानवरके जानेका अनुमान था हम उधरकी ही ओर बढ़े।

एक तो गर्मीका दिन, दूसरे राइफलकी गोली लगनेसे बाघिन अधिक दूर तक गयी नहीं थी। केवल सौ-डेढ़ सौ गज जाकर एक बाँसके जुट्टोंके नीचे छाँहमें बैठ गयी थी।

कुछ हँकवेवाले जो आस-पासके पेड़ोंपर थे, उसे देख सकते थे। उन्होंने कहा कि इस मेरे पेड़पर चढ़ जाइये तो आप आसानीसे देख भी सकियेगा और मार भी सकियेगा। दूसरे उसके आक्रमण करनेका भय भी न रहेगा।

मैंने पेड़पर चढ़नेका बहुतेरा प्रयत्न किया परन्तु नहीं ही चढ़ पाया तब मैंने कहा कि मुझे जानवर जमीन परसे ही दिखलाओ। एक बार तो उन लोगोंने मेरी ओर देखा। परन्तु उस समय मेरे तो सरपर खून सवार था और मारनेकी धुन थी, साथ ही विलम्ब होनेसे यह भी भय था कि कहीं वह भाग न जाय और किसी हँकवे वालेको न मार दे। इसलिए मैं बार-बार जल्दी करनेको कह रहा था। तब उनमें-से एकने इशारेसे मुझे अपने पास बुलाया जो एक जगह बैठकर दिखला रहा था। उसने धीमेसे कहा कि यहाँसे बाघिन स्पष्ट देख पड़ती है तथा आप निशाना भी लगा सकेंगे। बाघिन वहाँसे केवल तीस गजकी दूरीपर बैठी थी तथा हमी लोगोंकी ओर देख रही थी। परन्तु खड़े रहनेसे तथा पेड़ोंकी आड़ होनेसे हम सब उसे स्पष्ट नहीं देख सकते थे।

मैं उन ५–७ आदमियोंकी प्रशंसा करूँगा जो मुझे घेरकर खड़े थे। जैसे ही मैं उस व्यक्तिके पास जाकर बैठा और निशाना साधा कि मेरी ओर बाघिनकी निगाहें चार हुई। फिर क्या था। वह वहाँसे तड़पी। उसके तड़पते ही मैंने गोली चला दी जो उसके उछलनेके कारण छातीमें न लगकर पेटमें लगी और पार हो गयी जिसका कोई परिणाम न हुआ यानी वह गोली उसको रोकनेमे बिल्कुल असमर्थ हुई। फिर तो वह उसी प्रकार तीन टांगोंपर बिजलीकी तेजीसे हमारे ऊपर टूट पड़ी।

मैंने जल्दीसे तीसरी गोली चलायी जो जल्दोके कारण और जानवरके छलांगोंके कारण उसके एक इञ्च ऊपरसे होती हुई निकल गयी। इतनेमें तो बाघिन बिल्कुल ही निकट आ गयी थी। अब मेरी नालमें चौथी तथा अन्तिम गोली शेष रह गयी थी जिसको मैंने बड़ी शान्तिसे चलाया जबकि बाघिन हमसे केवल पाँच-सात गजको ही दूरीपर रह गयी थी। सौभाग्यसे यह गोली ठीक उसकी गर्दन पर बैठी तथा छाती तक उतर गयी। गोली लगते ही उसके मुँहसे एक ही आवाज निकली और उसके धक्केसे वह एकदम उलट कर वहीं गिर गयी जो फिर नहीं उठी।

फिर तो सब लोग प्रसन्नतासे प्रशंसासूचक शब्दोंमें एकबारगी ही चिल्ला उठे। अभी तक मुझे तो किसी ओर ध्यान न था केवल उसे मारनेकी ही धुन थी। परन्तु उनके शब्दोंको सुनकर थोड़ा संकोच हो आया। वे लोग पूछने लगे सरकार आप शेर मारने आये थे अथवा कुत्ता-बिल्ली।

इतनेमें देखता क्या हूँ कि पत्नी भी चली आ रही हैं। मालूम पड़ता है कि सब बातें समझ कर वे मचान पर अधिक देर रुकना न पसन्द कर जबरदस्ती शिकारीको लेकर उतर आयीं क्योंकि वह बेचारा तो केवल मना ही कर सकता था। मैं जब शिकारीको डांटने चला तो वे हँसकर बीचमें बोल उठीं कि उसका दोष नहीं, परन्तु आप यह बताइये कि मुझे धोखा देकर घायल बाघिनके पीछे जाना कौन-सी बुद्धिमानी थी। मैं निरुत्तर हो गया और साथ ही मेरा सारा क्रोध भी शान्त पड़ गया। इसके उपरान्त हम सभी सकुशल थे तथा जानवर भी मिल ही गया था तो स्वभावतः खुशीका ठिकाना न था। अतएव किसी अन्य प्रकारके राग बिराग का कोई स्थान ही न था।

हमलोगोंसे बढ़कर आनन्द तो गाँव वालोंको था। उनके सैकड़ों गाय बैल उस बाघिनके शिकार हो चुके थे। बेचारोंका कितना

नुकसान हुआ था। ऊपरसे स्वयं त्रस्त रहते थे। सुखकी नींद सो नहीं सकते थे और न दिन ही शान्ति से बीत पाता था। ऐसी अवस्थामें इनके सुखका पारावार न होना कुछ समझमें आ सकता है। इसके उपरान्त तरह-तरहके गाने तथा मृत बाघिनको तरह-तरहकी गालियाँ भी सुनने में आयीं।

फिर बाघिनको एक लम्बे बाँसमें लटका कर दस-बारह आदमियोंने उसे उठाया। शेष दो-ढाई सौ हँकवे वालोंने उसके पीछे खुशीके नारे लगाते हुए हमें मोटर तक पहुँचाया तथा पुनः कहा कि सरकार आपने इसे मारकर सौ गौदान का फल पाया है। हमलोगोंने भी प्रसन्न मनसे संभाल कर उसे मोटरमें लादा और शाम तक बंगलेमें लौट आये।

बच्चों ने बाघिन को देखकर खूब खुशियाँ मनायो और उस पर हाथ रखे हुये अपनी-अपनी तसवीरें भी उतरवायीं। इस प्रकार हमारी पहली बाघिन का शिकार कर हम अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा ईश्वर को कोटिशः धन्यवाद दिया कि इस आखेट में कोई दुर्घटना नहीं हुई। प्रत्युत हम यश एवं आशीर्वाद के ही भागी बने।

२. बनतरेकी बाघिन :

पटवतकी बाघिन मारनेके उपरान्त हम घर लौटनेकी सोच रहे थे क्योंकि अब राबर्ट्सगंजमें और अधिक दिन ठहरनेका कोई ध्येय भी न था फिर गर्मी भी बढ़ रही थी। श्रीभास्करदेवकी बढ़ती हुई प्रचण्डताका अनुमान करते हुए लौट जाना ही श्रेयस्कर समझते थे। किन्तु पश्चिमी (पछुवा) हवा बहनेके कारण रात्रिमें काफी ठण्ड पड़ती थी। यहाँतक कि बाहर सोनेमें एक हल्की दुलाई ओढ़नी पड़ती थी और मिट्टीके पात्रमें रखा हुआ पानी भी खूब ठण्डा रहता था। अतएव स्वयं हमलोगों की भी शीघ्र लौटनेकी तबियत नहीं कर रही थो। बच्चोंकोभी प्रतिदिन हाथीपर चढ़कर घूमनेमें तथा मेरे साथ मोटरपर जंगलोंकी शैर करनेमें बड़ा आनन्द आ रहा था।

इधर गाँववालोंने तथा शिकारियोंने भी आग्रह किया कि आप दो दिन और ठहर जायँ। जंगलोंकी दौड़-धूपमें उन्हें किसीने सूचना दी कि बनतरेके समीपके ही जंगलमें एक बड़ा शेर और उसी दिन आ गया है। बड़ा इसलिए कि उसका पंजा पूरे ९ अंगुलका पड़ता था। पंजा देखकर उन लोगोंको यह भी अनुमान हुआ कि बहुत सम्भव है कि यह जानवर नर हो। उसका कारण यह था कि देखनेमें पंजेका चिह्न बड़ा और गोल लगता था। मादीनोंके पंजे कुछ सकरे और लम्बोतरे होते हैं। परन्तु उनका अनुमान गलत निकलना। इस गलत अनुमानका कारण बलुई जमीन भी हो सकती है जिसके कारण पदचिह्न फैल गये हों। मुझे रोकनेका एक कारण यह भी हो सकता है कि थोड़ी-सी ही मेहनतमें और एक ही दिनके अन्दर उनको दूना इनाम मिल जायगा।

जो भी हो। एक और बड़े शेरके मिलनेकी सम्भावना सो भी शीघ्र और बंगलेके समीप ही केवल चार ही मीलकी दूरीपर सुनकर किसको लालच न होगा। अतः मैंने उनको सारा प्रबन्ध करनेकी सहर्ष अनुमति दे दी।

उन लोगोंने तुरत वहाँ दो भैंसे बांध दिये। बनतरेका जंगल बहुत बड़ा नहीं है केवल दो वर्गमीलका एक छोटा-सा टुकड़ा होगा। परन्तु है क्या कि शेरको इसमें रहनेका बहुत सुख है। इसके भीतर कोई बस्ती नहीं जिससे उनको किसी प्रकारका असमञ्जस हो। राबर्ट्सगंजसे सटे हुए ही जंगलके किनारे दो एक छोटे गांव हैं। इस जंगलमें कहीं-कहीं बहुत बड़े-बड़े वृक्ष भी हैं। नाले भी हैं, एक तालाब भी है तथा एक ओर एक छोटी-सी पहाड़ी भी है।

इसकी प्रसिद्धि यह है कि एकबार इसमें जानवर आ जानेसे बहुत थोड़ेसे आदमियोंसे ही वह घिर सकता है। एक ओर पहाड़ी है ही, दूसरी ओर केवल ठोंक लगानेकी आवश्यकता है और फिर थोड़ेसे हँकवे

वालों से ही हांका करवालें। क्योंकि फिर उसके निकलनेके लिए एक ही मार्ग रह जाता है जहाँ मचान बँधी रहती है। इसलिए जब इसमें जानवर आ जाता है तो वहांके लोग कहते हैं कि शेर पिंजड़ेमें आ गया।

अब इस समय लगभग १९५० सम्वत्से यह जंगल काट कर साफ कर दिया गया है। वहाँ अपनी गवर्नमेण्ट एक बहुत बड़ी सीमेण्ट फैक्टरी बना रही है। धीरे-धीरे पुराने शिकार गाह अथवा जंगलों की सफाई होती जा रही है। उस समय तो वह एक बहुत ही रमणीक स्थान था।

भैंसा बाँधनेके उपरान्त ही जानवरके निकलनेके मार्गपर वहीं नालेके ऊपर एक बड़े पेढको चुनकर शिकारियोंने उसपर तुरत मचान बँधवा दी कि जिसमें दूसरे दिन ऐन मोकेपर मचान बनानेका हल्ला न हो। नहीं तो शेर खिसक जाने का अन्देशा होता है।

हमलोगों ने उस दूसरे दिन पूरा विश्राम किया तथा प्रथम दिन के शेरका चर्म व चर्बी निकलवानेका प्रबन्ध करवाया।

तीसरे ही दिन प्रातः भैंसेके चरवाहेने आकर सूचना दी कि रातमें भैंसा टूटा है और शिकारियोंने दोपहरके भोजनके उपरान्त हमलोगोंको बुलाया है।

इस बातके लिए तो हम पहलेसे तैयार ही रहते थे कि सूचना मिलते ही चल पड़ें जिसमें अपने कारण व्यर्थ विलम्ब न हो। अतः अब भी वैसा ही किया। हल्के मध्याह्न-भोजनके उपरान्त तुरत मोटरपर बैठकर हम दोनों सीधे "छपके" के तालाबपर पहुँचे जो बंगलेसे तीन मीलपर रहा होगा और जहाँ एकत्र होनेका संकेत स्थान था।

वहाँ शिकारी तो कुछ लोगोंके साथ बैठे थे परन्तु हँककेवालोंकी कमी थी। इनकी संख्या कैसे बढ़ायी जाय इसपर विचार विमर्श हमारे

पहुँचनेके उपरान्त हुआ। निश्चय यह हुआ कि कुछ लोग जाकर समीपके गांवसे जितने व्यक्ति आ सकें उनको बुला लावें तथा कुछ लोग राजपथ पर बैठ जायँ तथा राह चलते जितने आदमी मिलें उन्हें इकट्ठा करते चलें। इस प्रकार जब सौकी संख्या पूरी हो जावे तो हांका आरम्भ कर दिया जावे।

हमलोग तालाबके एक ओर एक टीलेपर दरी बिछाकर आरामसे लेट गये। इस बीच हांकेवालोंका एकत्रित होना आरम्भ हो गया।

लगभग दो घण्टेके अन्दर सवा सौ आदमी बटुर गये। तब शिकारीने उनमेंसे छाँटना शुरू किया जो सबसे मजबूत और साहसी प्रतीत हुए उन्हें वह पृथक् करते गये। जब इनकी संख्या साठ पहुंच गयी तो रुककर उसने प्रत्येकको उनका कार्य भली-भाँति समझाया। "ठोंक" पर रहनेके लिए इन सबोंको पाठ पढ़ाया गया। किस-किस स्थानपर कौनसे व्यक्ति बैठेंगे सब बताया गया। जानवर देखते ही "ठोंका" न जाय, किन्तु "ठोंका" तब जाय जब जानवर उसकी ओर मुड़े। यह सब समझाया गया।

"ठोंक" की प्रक्रिया समझायी गयी और बतलाया गया कि यदि जानवरके कट जानेकी आशंका हो तो धीमें से एक छड़ीसे पेड़के तनेमें ठोंक दे। यदि उतने पर भी जानवर घूम न जाय तो और जोरसे ठोंके। फिर भी यदि वह चलता आवे तो कई बार जोर-जोरसे ठोंके भी और साथ ही मुँहसे भी आवाज करें। कभी-कभी तो ऐसा होता है कि शेर इतने पर भी नहीं मानते और बरबस उसी ओरसे दहाड़ते "ठोंक"को डराते हुए निकल जाते हैं।

उन सबोंको समझाते तथा समयका अन्दाज बताते हुए और ही यह भी कहते हुए कि हाँका जब उनके नीचेसे निकल जाय तो वे भी उतर कर साथ हो जायँ। फिर बाकी बचे हुए आदमियोंमें से केवल ५० को हांकनेके लिए कहा कि अमुक स्थानसे घण्टे भरके

बादसे वे हाँका शुरू कर दें। उन सबके साथ ही शिकारीने चार-छः अपने पुराने तथा समझे हुए आदमियोंको साथ कर दिया। तत्पश्चात् वह बाकी १०–१५ आदमियोंको साथ लिए हमलोगोंको लेते हुए मचानकी ओर चला। यह १०–१५ आदमी इसलिए साथ थे कि जब हमलोग मचान पर बैठ जायँ तब ये मचानसे थोड़ी ही दूर दाहिने बायें पेड़ोंके ऊपर बैठ जायँ और ठोंकका काम करें। कभी ऐसा भी होता है कि मचानके पास आकर भी जानवर कुछ दूरसे कट जाता है जिससे मचान पर बैठे हुए शिकारीको जानवर देख नहीं पड़ता।

हमलोग जंगलके रास्ते चले जारहे थे। मार्ग बहुत ही रमणीक था। मधुमासका महीना था ही। जंगली पुष्पोंसे सारा जंगल सुगन्धित हो रहा था। कहीं-कहीं बड़े वृक्षोंकी छाया भी मिल जाती थी जिससे थोड़ी देरके लिए श्री भास्करदेवकी प्रचण्ड किरणोंसे किंचित् विराम मिल जाता था।

जंगलकी पटरियाँ प्रायः बीहड़ मार्गोंसे ही जाती हैं। हमलोग भी ऊपर नीचे नदी नाले डांकते हुए झाड़ियोंके बीचसे होते हुए मचानके समीप पहुँचे।

मचान एक बहुत बड़े बटवृक्षमें बनी था। यों तो मुझे मचानपर प्रायः दरी अथवा कम्बल ही बिछाकर पालथी मारकर बैठ जानेका अभ्यास था। परन्तु मैंने अनुभव करके देखा कि इस प्रकार बैठ जानेमें काफी असुविधा होती है तथा अधिक देर तक तो शान्तिपूर्वक नहीं ही बैठ सकते। इसके उपरान्त गोली चलानेमें तो बहुत ही अड़चन होती है। जल्दीसे एक ओरसे दूसरी ओर राइफल घुमानेमें अति कठिनाई होती है। और जबतकसे उठकर बैठें और राइफल घुमावें तबतक तो जानवर लोप ही हो जाता है। और यदि विशेष हिले डुलें तो भी जानवरको लख लेनेकी सम्भावना रहती है। ऐसी स्थितिमें यदि एक छोटी सी नीची मचिया रहे तो बहुत आराम मिलता है।

इसके अभावमें मैं अपनी मोटरकी गद्दी साथमें उठवा लाया था। यदि इस दूसरी शेरनीके समय इस गद्दी पर न बैठे होते तो कदाचित् इससे हाथ ही धोना पड़ता। क्योंकि उलटे हाथ उतनी शीघ्रतासे राइफल घूम न पाती। इसका विवरण आगे मिलेगा।

इस समय तो हमें शीघ्र मचानपर बैठना था। मचान बड़े ही सुन्दर, मनोरम तथा यथार्थ स्थान पर बनी थी।

बायीं ओरसे एक नाला आ रहा था जो ठीक हमारी मचानके नीचेसे होता हुआ दाहिनी ओर निकल जाता था। यदि जानवर इसमें से आवे, जो बहुत सम्भव था तो मारनेका काफी अवसर मिल जाता। सन्मुख थोड़ा सा मैदान और उसके आगे एक हल्का टीला था। यदि जानवर उस टीले परसे भी आवे तो भी गोली चलानेका अच्छा मौका था। इन्हीं दो ओरसे जानवरके आनेकी सम्भावना थी। क्योंकि हाँका अधिक बांयेसे ही आनेवाला था। मचानके दाहिने तो झाड़ियाँ थीं। परन्तु सौभाग्यवश नीची थीं। इधर दाहिनी ओर एक दूसरी मचान थी जिसपर शिकारी अपने चार आदमियोंके साथ बैठा था।

मचानके लिए बड़े वृक्ष विरले ही मिलते हैं। प्रायः छोटे मोटे पेढ़ोंमें बांध दी जाती है सो भी मिर्जापुरके जंगलोंमें मोटे वृक्ष नहीं मिलते। परन्तु यह वृक्ष तो विशालकाय था और सूर्यकी किरणें भी इस मचान पर बिल्कुल नहीं आती थीं। जहाँ तक मुझे स्मरण है इतनी बड़ी मचान पर तथा इतने सुन्दर स्थानमें कभी बैठनेका अवसर मुझे नहीं मिला।

इससे आगेका अनुपम वर्णन अलंकृत भाषामें मेरी पत्नीने इस प्रकार किया है—

"मादक मधुमासका अलस मध्याह्न था। हरित परिधानपर नव विकसित बहुरंगे पुष्पाभरणोंसे विभूषित, शैलमालाओंसे आवृत्त वनस्थली मनोहर वेशभूषासे अलंकृत किसी संयुक्ता नायिकाकी भाँति मोहकता बिखेर रही थी।

सुरम्य काननकी वह निर्जन नीरव उपत्यका किसी योगीकी अखण्ड समाधिकी भाँति शान्त, अचल एवं मूक थी।

किसीको अपनेमें समेट लेनेकी आतुर आकांक्षासे आकुल प्रसारित दो भुजाओंके समान दोनों ओर दो सूखे नालोंसे युक्त ढालुई भूमिखण्ड पर स्थित एक विशाल वृक्षके तनेपर हमारी मचानका निर्माण किया गया था जो भूमितलसे प्रायः १५ फुट ऊँचा था। लगभग ४ फीट चौड़ी एवं ५ फीट लम्बी मचानके चतुर्दिक् हरित बाँससे २॥ फीट ऊँचा छज्जा सा निर्मित किया गया था जिसके ऊपर टेककर अथवा जिसके भीतर हरी पत्तियोंके बने झरोखोंमें से बन्दूक चलायी जा सके।

मचानकी पिछली ओर हरे वृक्षसे ही निसैनी निर्माणकी गयी थी, जिस पर त्वरित गतिसे आरोहण करना किसी मलखम्भ जैसे व्यायाम अभ्यासीके लिए ही सुगम था।

हमारी मचानके ऊपर प्रकृतिनिर्मित ही हरित वितान था, जो सद्यः विकसित वनमल्लिकाओं, नीबू एवं करौंदोंको नन्हें श्वेत सुरभित पुष्पवल्लरियोंसे आच्छादित था।

इनके सौरभसे श्लथ शीतल समीरण मन्दगतिसे थिरकता हुआ मन-प्राणमें एक अनिर्वचनीय आनन्दानुभूतिका सृजन कर रहा था।

कभी समीरकी किंचित् तीव्रतासे अथवा अपने ही हिलनेसे जिस समय मचान कुछ उद्वेलित हो उठती थी तो ऐसा प्रतीत होता था यह मचान नहीं वरन् हिंडोला है जो हमें मन्द मन्थरगतिसे झुलाकर प्रमुदित कर रहा है एवं मधुर निद्राके अंकमें जानेके लिए विवश तथा बाध्य कर रहा है।

सत्य तो यह है कि ऐसा मनोमुग्धकारी रमणीक तथा पवित्र स्थान हिंसक वृत्ति के लिए सर्वथा अनुपयुक्त सिद्ध हो रहा था। प्रत्युत, किसी भावुक विमुग्ध प्रणयी युगलके सुमधुर प्रणय सम्बोधनोंसे परिपूर्ण

स्नेहालापके अनुकूल वातावरणका सृजन कर रहा था अथवा किसी सहृदय कविको कविताकामिनीके आवाहनका मूक आमन्त्रण दे रहा था, जहाँ बैठकर वह प्रकृतिकी इस अद्‌भुत, नैसर्गिक, अनुपम सुषमायुक्त विभूतिको अपनी ललित-विमल-वाणी-मंजूषामें समेट कर इस सौभाग्यसे वंचित अपर सांसारिक मनुष्योंको वितरित कर उन्हें भी इसका रसास्वादन करा सके।

अत्युक्ति न होगी यदि यों कहें कि वह इससे भी उच्च, उच्चातिउच्च उस सर्वशक्तिमान् स्रष्टाके, जगन्नियन्ताके विशद गुणगानका अथवा समस्त वृत्तियोंका अवरोध कर निर्विकल्प समाधिमें स्थित होकर उस अखण्ड, अविरल उज्ज्वल प्रकाशके स्निग्ध मंजुल पुञ्जपर अपनी वृत्तियोंको स्थित कर ब्रह्मानन्दकी अनुभूति प्राप्त करनेका उपयुक्त स्थान था।'

किन्तु जिस ध्येयको लेकर जिस आखेट-पिपासाकी परितृप्तिके हेतु हम इस मोहक स्थलपर पहुँच सके थे, उसे तो पूर्ण करना ही था। अतः अन्तरममें दुरित वासनाओंकी भाँति हम उस नवनिर्मित हरित हिंडोलेपर यथास्थान छिपकर आसीन हो गये। वन्यपशुओंकी प्रकृतिसे भलीभाँति परिचित एक अनुभवी एवं वृद्ध शिकारी भी हमारे पार्श्वभागमें बैठ गया। बन्दूकें क्रमसे पल्लवपूर्ण झरोखोंमें इस प्रकार सजा दी गयी कि आवश्यकता पड़ते ही अविलम्ब उठायी और घुमायी जा सकें।

इस भाँति आयोजन सर्वाङ्गीण पूर्ण होते ही एक मनुष्यको हाँका प्रारम्भ करनेकी सूचना देने हाँकेके संचालक एक-दूसरे कुशल नेता शिकारीके पास भेज दिया गया।

कुछ ही क्षणोंमें नगाड़ोंकी तुमुल ध्वनि तथा सहस्रों कण्ठोंके सम्मिलित स्वरने हमें हाँका प्रारम्भ हो जानेकी सूचना दे दी, जिससे

समस्त वनप्रान्त गुञ्जित तथा निनादित हो उठा। हम सब प्रस्तर-प्रतिमाओंकी भाँति शान्त, निश्चल, निःशब्द किन्तु पूर्ण सजग हो गये। श्वासावरोध कर हम उन अद्भुत क्षणोंकी प्रतीक्षा करने लगे जब विकट विकराल दुर्धर्ष वनराज अथवा मूर्तिमती शक्ति वनराज्ञी हमारे समक्ष होगी।

प्रतिक्षण समीपवर्तिनी होती हुई हाँकेकी गूँजसे हमारी उत्कण्ठा उसी प्रकार विवर्द्धित होती जाती थी जिस प्रकार परिणयकी प्रथम स्वर्णिम रजनीके द्वितीय प्रहरमें आकुल-उत्कण्ठित नायककी उत्कण्ठा-वृद्धि अपनी नवोढा विमुग्धा प्रियतमाके कंकण किंकिणी एवं नूपुरकी सुमधुर संगीतमय ध्वनि श्रवण करनेसे होती है।

शरद्-शशिकी धवल ज्योत्स्नास्नात अथवा तारोंसे आच्छादित निस्तब्ध नीरव निशामें भावुक कवि जिस भाँति अपने हृदयगत निगूढ़, सूक्ष्म भावनाओंके आवाहनमें रत रहता है, उसी भाँति हम भी किसी कानन-सुन्दरीकी प्रतीक्षामें दत्तचित्त थे।

सम्पूर्ण विश्वको विस्मृत कर जिस प्रकार आराधक अपने आराध्यके चिन्तनमें लीन एवं योगी अपनी समस्त इन्द्रियोंका निरोध कर नासाग्र-पर दृष्टि स्थित कर अनहद नादपर मन केन्द्रित कर प्राणवायु ब्रह्माण्ड चढ़ाकर सर्वथा निश्चेष्ट होकर तदाकार हो जाता है उसी प्रकार उस समय हम भी समस्त बाह्य संसारको सर्वथा भूलकर अपने मनोंको एकमात्र हाँकेकी ध्वनिपर एकाग्र कर तथा दृष्टिको केवल आखेटपर ही एकाग्र किये बैठे थे।

इसी भाँति चित्रवत् बैठे लगभग ३० मिनटके उपरान्त हाँकेकी ध्वनि अत्यन्त समीप आनेपर भी कुछ दृष्टिगोचर न होनेसे हम पूर्णतः नैराश्य सिन्धुमें निमग्न होने लगे तो साधनाकी सिद्धि-सी, आशाकी किरण-सी एक सुन्दरी पूर्ण विकसित वनराज्ञीकी एक झलक सामने टीलेके दक्षिण भागकी ओर देख पड़ी। ज्ञात होता है वह त्वरित-

गतिसे आ रही थी तथा विशालकाय थी कारण उसके पिछले पग टीलेके ऊपर तथा अगले सीधे नीचे पहुंच गये और तत्क्षण वह बिद्युत् समान मेघ-श्यामल-लताकुञ्जोंमें अदृश्य हो गयी।

पतिदेवके मुखसे अनायास ही निकल पड़ा कि "शिकार हाथसे निकल गया"। पर साथ ही उन्होंने तुरत राइफल दाहिनी ओर घुमायी तथा उसी क्षण झाड़ियोंके बीच उसकी दूसरी झलक देखते ही गोली चला दी।

कुछ क्षणोंके लिए सम्पूर्ण काननमें निस्तब्धता छा गयी। यद्यपि वह हमारी दृष्टिसे ओझल थी परन्तु भाग्यवश गोली मर्मस्थलपर लग जानेसे किसी भारतीय कुमारीकी भाँति निर्विरोध मूक असहाया वह व्याघ्रकुमारी भी निश्चेष्ट, निःशब्द अपने परमपतिके आवासको सत्वर प्रयाण कर गयी।

मेरे पति भी अपनी चिरवांछित अभिलाषापूर्ण होनेसे परम आह्लादित मचानसे अवरोहण कर उसके समीप पहुँच कर उसके सौष्ठवपूर्ण अंगोंका अवलोकन कर तथा उसके सुन्दर स्वस्थ चर्मको देखकर पुलकित हो उठे। शिकारी समुदाय उनके इस अचूक लक्ष्यभेदपर तथा एक ही गोलीसे उसके प्राणान्त पर प्रशंसासे पूरित हो उठा।

अपराह्नकी उस धूमिल वेलामें वनस्थली अपनी एकमात्र बालिकाके विरहसे कराह उठी। किन्तु हमारा दल विजयोल्लाससे पूर्ण प्रमुदित था और अपने आखेटको परिजनोंके वियोगसे अचेत शिविकारूढ़ वधूका भाँति कन्धों पर लटकाये वार्तालापमें मग्न अपने शिविर पर लौटकर सम्पूर्ण दिवसकी आखेटजन्य क्लान्ति दूर करनेमें निरत हो गया। बच्चे भी आज पुनः एक शेरको साथ लाते देख प्रसन्नतासे चहक उठे।

३. जबाड़खोहकी शेरनी :

नयी राइफल परीक्षामें पूर्ण सफलता पाकर शेरके शिकारके लिए बड़े प्रबल वेगसे मन ललचने लगा। चीते आदिका आखेट कर डोंगियासे



जबाडखोह की शेरनी के साथ लेखक पत्नी सहित



जबाड़खोह की शेरनी के साथ लेखक

लौटे १० दिन भी नहीं हुए थे कि एक मित्रसे उनके जंगलमें शेर मारनेकी अनुमति ले मोटरसे मामाजी सहित सह-कुटुम्ब २४ मई सन् १९३९ को हम पुनः यात्राभिमुख हो ही गये। भारी सामान नौकरोंके साथ पहले ही ट्रेनसे भेज दिया था। अतः अपने साथ केवल बन्दूकें, जल और कुछ पकवान रख लिया।

लगभग ४ वर्ष पूर्व कतिपय मित्रोंसे 'सस्राम'के आस-पासके जंगलोंकी प्रशंसा सुनी थी। दो-एक मित्र उन जंगलोंसे प्रायः शेर मार लाते थे। प्रायः इसलिए कहा कि शेरके शिकारमें अनेकों प्रकारकी कठिनाइयों-का सामना करना पड़ता है। सर्वप्रथम तो उसके आखेटके लिए अनुज्ञा ही शीघ्र नहीं मिलती। दूसरे कुशल, अनुभवी वनकठे (जंगलके शिकारी) नहीं मिलते जो हाँके आदिका उचित प्रबन्ध कर सकें। एकबार सेरुआके जंगलमें यही अनुभवी शिकारी व चतुर हँकवेवालोंके अभावमें एक बहुत बड़ा ऊँटिया शेर अपने हाथ नहीं लग पाया। जंगलमें शेर रहने पर भी वह हाँकेके वशमें न हो पाया। कभी तो जानवर लौट पड़ता है और कभी कटकर दूसरी ओर निकल जाता है। इसी प्रकार अनेक विघ्न उपस्थित होनेसे "प्रायः" खाली लौटनेमें आता है। इस जंगलकी बिशेषता यह सुनी थी कि वहाँ बहुत छोटे-छोटे जंगलोंके टुकड़े हैं, जहाँ बहुत थोड़े लगभग २५–३० हँकवोंसे ही काम चल जाता है। इन जंगलोंमें शिकारके कटकर निकल भागनेकी सम्भावना कम रहती है। यही सब सोच-विचार कर इस बार वहीं जानेका निश्चय किया।

ग्रीष्म ऋतु, पुरातन मोटर एवं ७०–८० मीलकी यात्रा। इन सबका ध्यान रखते हुए ब्राह्ममुहूर्तमें ही हमलोग उठकर चल पड़े। लगभग तीन घण्टेमें हम "भभुआ" स्टेशन पहुँचे। वहाँसे नौकरोंको सामान सहित एक लारी पर बैठाकर भभुआ शहरके लिए रवाना किया जो स्टेशनसे सात मील है। जवाड़खोहका गाँव यहाँसे लगभग १२–१४ मील है। इस कच्चे रास्तेके लिए वहाँ इक्के मिल जाते हैं। भभुआसे तीन

ट्रकों पर सामान सहित नौकरोंको विदा किया और हमलोग भी उसी समय चल पड़े जिसमें दोपहरके पहले-पहले पहुँच जायँ।

बीच-बीचमें मार्ग बहुत बीहड़ था। एक स्थानपर तो नदी ही पार करनी पड़ी। मैंने तो समझा कि मोटर इसमें फँस जायेगी और नदी पार न कर सकेगी। परन्तु इस समय नदी बिल्कुल छिछली थी। उसमें पानी केवल ८-१० इंच था और उसका पूरा पाट भी ठोस था। अतएव उसे पार करनेमें विशेष कठिनाई न हुई। यद्यपि सब आरोहियोंको मोटरसे उतार कर पानीमें हलाकर पार करवा दिया और तब मोटरको सम्भालकर नदीमें हलाया किन्तु बिना किसी झंझटके आसानीसे पार हो गये। रास्तेमें एक शिकारी मित्रका गाँव पड़ता है। वहाँसे उनको भी मददके लिए साथ ले लिया।

हमलोग तो फिर भी जल्दी पहुँच गये। परन्तु नौकरोंके आनेमें विशेष विलम्ब हो गया। फलतः मध्याह्नके भास्करदेवकी प्रचण्ड किरणोंके कारण उनमेंसे दोको लू लग गयी, तब हमलोगोंको विशेष चिन्ता हो गयी।। परन्तु वहाँ उनलोगोंका तुरन्त उपचार किया गया। कच्चे आम वहाँ बहुत उपलब्ध थे। उनको भुनवाकर उन्हें उसका पन्ना खूब पिलवाया और साथ ही उसका गुद्दा उनके समस्त अंगोंमें उबटनकी भाँति मलवाया, जिससे दूसरे ही दिन सब पूर्ण स्वस्थ हो गये।

जवाड़खोहमें हमारे मित्रकी एक अच्छी छोटी-सी छावनी है। उसके द्वारके ही समीप एक बहुत गहरा कूप है, जिसका जल अति शीतल और सुस्वादु है। वहाँके सभी ग्रामीण पानीके लिए उसी जलको ले जाते हैं। उस भयंकर गर्मी और लूमें एक उसीका तो सहारा था। कुछ परदे व खसकी टट्टियाँ लगा दीं जिनको दिनभर तर रखनेसे हमें काफी ठंढक मिल जाती थी। हमारे कनिष्ठ कुमार साहब जिनकी अवस्था उस समय लगभग १५ ही महीने की थी, उनका यह हाल था कि उस कुएँके ठंडे पानीसे भरी हुयी बाल्टीमें बैठ जाते थे तो हजार

प्रयत्न करनेपर भी जल्दी निकलते नहीं थे। ठंडकके कारण यद्यपि उसके अधर नीले पड़ जाते थे।

जवाड़खोहमें पहुँचनेपर हमने सुना कि कुछ ही दिन पहले उन जंगलोंमें तीन शेर साथ ही घूमते थे। परन्तु उस समय कितने रह गये थे, पता नहीं। चरवाहोंका कहना था कि अभी भी उनमेंसे एक तो अवश्य है।

हमलोगोंने भैंसा बँधवानेका विचार किया। मामाजीने कहा कि इस बार भैंसा बाँधकर छोड़ न दिया जाय वरन् हमलोग भी उसके निकट ही मचान बांधकर बैठ जायँ। मामाजीकी बड़ी उत्कट इच्छा थी कि शेर जब भैंसेपर आक्रमण करे तभी गोली मारूँ। इसपर वहांके शिकारियोंसे विचार-विमर्श किया। उनको इसमें किसी प्रकारकी आपत्ति न थी। आपत्ति न हमलोगोंको ही हो सकती थी। आक्रमणके समयके उत्क्रोश तथा शेरके गर्जन इत्यादिमें बहुत सम्भव था कि व्यग्रतामें निशाना ठीक न लग पावे। दूसरी बाधा यह थी कि रातभर एक मचानपर अधिक व्यक्ति आरामसे नहीं रह सकते। अतएव यह निश्चय हुआ कि जिस प्रकार बकरी बांधकर घण्टे दो घण्टे चीतेके लिये बैठा जाता है उसी प्रकार भैंसा बाँधकर केवल दो घण्टे बैठा जाय और सन्ध्यातक यदि जानवर न आये तो छावनी लौट आया जाय।

परन्तु भैंसा कहाँ बाँधा जाय इसके लिए जंगलकी थोड़ी छानबीनकी आवश्यकता थी। शेरसे कोसों दूर भैंसा बांधनेसे कोई परिणाम न होगा। जहाँ उसके होनेकी सम्भावना हो वहीं कहीं आस-पासमें भैंसा और कुछ ही दूरीपर मचान भी बाँधना चाहिए।

इस आशयसे कुछ चतुर लोगोंको खोजके लिये भेजा गया। दूसरे दिन शिकारीने आकर सूचना दी कि समीप ही के जंगलमें पानीके निकट एक झंखाड़में ग्रीष्मकालीन दिवाकरके प्रचण्ड आतपसे बचने

हेतु एक व्याघ्र निद्रालस दिन व्यतीत करने आ गया है। इस बातका निश्चित ज्ञान होनेपर उसने उसके समीप ही मचान भी बाँध दिया।

यह समाचार सुनते ही हमलोग त्वरित वेगसे सुसज्जित होकर अपराह्नमें जंगलके उसी ओर चल पड़े।

छावनीसे लगभग १॥ मील पहुँचनेपर एक सूखी नदी मिली जिसके इसीपारके झंखाड़में शेर था। शिकारियोंने मचान नदीके उसपार एक छोटेसे वृक्षमें बाँध रखी थी। भैंसेको इसी पार किन्तु नदीके हिस्सेमें बँधवाया कि जिसमें मचानका सामना ठीक रहे। फिर हमलोग मचानकी ओर बढ़े तो देखता क्या हूँ कि मचान एक बहुत ही पतले हिलते हुए निर्बल वृक्षमें बँधी थी। वह बहुत छोटी भी थी। उसपर बैठनेवाले हम चार, मैं, मेरी पत्नी, मेरे मामाजी तथा वही वयोवृद्ध शिकारी, जिनको आते समय समीपस्थ गांवसे मैं उठा लाया था। मैंने मामाजीकी ओर देखा फिर उन शिकारियोंपर थोड़ा रुष्ट होकर किन्तु मन्द स्वरमें झिड़का कि इतनी छोटी मचानपर सबलोग कैसे बैठ सकेंगे और हिंडोले ऐसी हिलती हुई मचानपरसे निशाना कैसे लगेगा। परन्तु विवशता थी क्योंकि तीसरा पहर हो चुका था। अब नयी मचान बनवानेमें बहुत समय भी लग जाता। दूसरे जानवरके निकट यदि किसी प्रकारका कोलाहल अथवा कुल्हाड़ीका शब्द हुआ जिससे उसे यह ज्ञान हो जाय कि आदमी निकट हैं तो वह तुरन्त वहाँसे खिसक सकता था।

और कोई उपाय न देखते हुए और मनको यह ढाढ़स देते हुए कि पूर्णरूपसे निश्चय तो नहीं है कि शेर यहाँ इसीमें हैं ही और दो घण्टेके भीतर निकल ही आवेगा, हम सब (चारों लोग) मचानपर चढ़ गये। चढ़नेके उपरान्त उसकी कठिनाइयाँ विशेषरूपसे उपस्थित हुई। परमात्माकी अनुकम्पासे उस समय हममेंसे कोई भी दुर्बल नहीं था। फलतः उस संकुचित स्थानमें सब संकुलित हो गये। मैं बड़े विचारमें

पड़ गया कि जल्दीमें लक्ष्यकर सन्धानना कठिन हो जायेगा, क्योंकि राइफल घुमानेकी जगह ही न मिलती थी।

मचान बनाने वालोंको बहुत कोसा। परन्तु अब कोसनेसे कोई लाभ नहीं था। एकबार विचारा कि उतरकर लौट चलें। पर अब उतरनेमें यह आशंका थी कि कहीं शेर उठ न गया हो और आते हुए उससे मुठभेड़ हो न जाय, जिसका परिणाम बुरा होगा। अब तो धैर्य धारण करके बैठे रहनेमें ही बुद्धिमानी थी तथा दो घण्टोंके अन्दर सन्ध्या होनेके पहले जब शिकारियोंको बुलाया था, अतः तभी उतरकर वापस जाना श्रेयस्कर था।

नदीके कछारपर जो वृक्ष था मचान उसीपर बँधी थी। ढालुवाँ हिस्सा था। पीछे करारा था इसलिए मचानके पीछेका हिस्सा जमीनसे प्रायः सटा था जिससे पीछे बहुत ही अरक्षित स्थान था। परन्तु आगे नदीकी तलहटी नीची होनेसे आगेकी ओर मचान १२ फीट ऊँची थी। यदि हांकेका शिकार हो तो सन्मुख जानवर आता हो तो कोई बात नहीं। ऐसे तो किसी ओरसे भी वह लुकता छिपता अचानक आ सकता है। प्रायः जानवर पीछेसे निकल आते हैं। चारों ओर आदमी चौकन्ना नहीं रह सकता। इसलिए धोखा खानेमें आजाता है। हमलोग कभी सामने भैंसेकी ओर और कभी इधर-उधर तथा पीछेकी ओर भी देखते जाते थे। इसके उपरान्त हवाके झंकारोंसे भी मचान बयाके खोतेके समान हिलती रहती थी। हमलोग भी भयमिश्रित आनन्दके साथ बैठे-बैठे झूला-सा झूल रहे थे।

थोड़ी देरके बाद मैंने मामाजीसे कहा कि एक भूल हो गयी कि भैंसेके गलेमें घण्टी नहीं बँधवायी। ऐसे अवसरों पर घंटीका लगा रहना नितान्त आवश्यक है जिससे उसकी गर्दन थोड़ी भी हिलनेसे घण्टीका शब्द बड़ी दूरतक सुनायी देता है। शेर यदि कुछ ही दूरी पर हो तो घंटीके शब्दकी ओर आकर्षित होकर एक बार लौट आता है। कभी ऐसा भी

हुआ है कि शेर भैंसेके समीपसे निकल गया परन्तु उसको भैंसेकी तनिक भी आहट न लगी, यह दूसरी बात है कि वह विशिष्ट शेर कई कारणोंसे विशेष चतुर हो। अर्थात् पहले कभी ऐसे ही अवसरपर किसी शिकारीका लक्ष्य बन चुका हो और बाल-बाल बच चुका हो। तब तो अवश्य ही दूधका जला छाछ भी फूँक कर पियेगा। ऐसी अवस्थामें देखा गया है कि वह जानवर भैंसेकी चतुर्दिक् परिक्रमा ऐसी अवस्थामें सावधानीसे करेगा कि उसे छिपे हुए शिकारीकी आहट अथवा गन्ध लग जाय और तब वह तत्काल चुपकेसे अन्तर्ध्यान हो जाता है। सामान्यतः शेर घण्टीकी ओर आकृष्ट होते ही हैं। उस निस्तब्ध, नीरव गहन वनमें घण्टीका शब्द मीलों तक सुनायी देता है।

चीतेके शिकारमें बकरी बाँधी जाती है, परन्तु उसके गलेमें घण्टीकी आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि शिकारियोंके छिपते ही एकाकी होनेपर वह सम्पूर्ण जंगलको अपने में-में शब्दोंसे निनादित कर देती है।

इस घण्टीके अभावके कारण ही इसबार भी धोखा खाना पड़ा। बादमें ज्ञात हुआ कि शेर समीपमें ही भैंसेकी ओर घने झंखाड़में था। परन्तु उसे भैंसेकी आहट न होनेसे वह उसके समीप न आया।

दो भूलें—सन्ध्या हो चली। गाय भैंसे जंगलकी ओरसे गाँवकी ओर लौट पड़ी। लौटनेका मार्ग एक ही था जिस ओरसे हमलोग आये थे और शेर उसी मार्गके निकट झाड़ीमें था। दूसरी भूल यह हुई कि उस ओरसे जंगलमें चरवाहोंकी गायोंको ही ले जाना ही निषेध कर देना था। एक बलिष्ठ, निर्भय युवा गोपाल मत्त गयन्दकी चालसे झूमता हुआ उच्चस्वरमें तानें लेता हुआ अपनी गाय-भैंसोंके साथ उसी मार्गसे लौटा जा रहा था। इसमें सन्देह नहीं कि एक ओर तो यह दृश्य काफी सुन्दर लग रहा था। परन्तु कोई कितनी ही सुन्दर तानें लगा रहा हो, मनुष्यकी वाणी सुनते ही पशुमात्र उससे दूर हो जानेकी चेष्टा करते हैं यदि वे नरभक्षो न हों।

उधर शेर अपनी स्वल्प निद्रासे उठकर उसी मार्गसे अपने जङ्गलकी ओर जारहा था। वह अपने शौर्य बलके गर्वमें था। फलतः सामना होते ही दोनों ओरसे गर्जन-तर्जन होने लगा। परन्तु निर्भीक भैंसोंके झुण्डने पालकका साथ देते हुए एकबार जोर जोरसे हुँकारा तो शेरकी भी नाड़ी ढीली पड़ गयी तथा उनपर हमला करनेका उसको साहस न हुआ। फिर भी वह अपनी दहाड़से भय उत्पन्न करता हुआ मार्ग संकीर्ण होनेके कारण एक भैंसको चपेटकर ढकेलता हुआ भाग खड़ा हुआ।

हमलोगोंने सोचा कि नदी की सूखी तलहटीके मैदानमें यदि वह भागता हुआ भी आया तो एकबार उसपर निशाना लगानेका अवसर कदाचित् मिल जाय। परन्तु सम्भव है कि उसे मचानकी आहट पूर्व ही लग चुकी हो, क्योंकि दूरपर एकबार केवल उसकी झलक सी देख पड़ी और वह जङ्गलकी ओटमें निकल गया।

अब जानवर हमलोगोंके पीछे आ गया। हमलोग और सावधानीसे घूमकर बैठ गये कि सम्भव है कि अब पीछेसे लौटे। परन्तु एक तो घंटी न होनेसे दूसरे भैंसोंसे मुठभेड़ हो जानेके कारण वह नहीं ही आया। आधे घण्टे और प्रतीक्षाके बाद निशाका आगमन देख हमलोग मचानसे उतरकर जोरोंसे वार्तालाप करते हुए लौटे। हमलोगोंको लेनेके लिए जो शिकारी आ रहे थे मार्गमें उनसे भेंट हो गयी और सब साथ ही छावनी पर लौट आये।

इस घटनाके दूसरे ही प्रातः एक शिकारीने आकर सूचना दी कि पहली रातको जो भैंसा बेड़वा नामक स्थानपर बँधवाया था उसको शेरने हमलोगोंकी ओरसे लौटते समय मार डाला। कदाचित् भागते हुए उसके रास्तेमें पड़नेके कारण वह बनराजके क्रोधका भाजन बना। उसके पंजेके निशान बहुत दूर तक देखे गये। इससे यह प्रतीत हुआ कि जानवर कुछ दूर निकल गया है। अतः उस समय वहाँ हांका कराना निरर्थक समझ उसी स्थानपर एक दूसरा भैंसा बँधवा दिया।

चार दिनकी प्रतीक्षाके बाद शिकारी द्वारा पुनः सूचना मिली कि बेड़वापरका भैंसा टूटा है, परन्तु शेरने उसमें मुँह नहीं लगाया है। सम्भवतः प्रातःकाल ही उसने भैंसेको मारा है, परन्तु सूर्योदय हो जानेके कारण उसे खा नहीं सका है। फिर भी हमलोगोंने जंगल हँकवानेका निश्चयकर आखेटकी पूर्ण साजसज्जाके साथ प्रस्थान किया।

जवाड़खोहका जंगली पथ अत्यन्त बीहड़ तथा बहुत ही ऊँचा-नीचा है, कभी ऊपर पहाड़ीपर चढ़ना कभी नीचे नदी नाले डाँकते हुए उस नदीके खपथपर बालूमें दूरतक जाना काफी कष्टप्रद था। किन्तु कुशल यही था कि रास्ता अधिक लम्बा न था। जहाँ मचान बँधी थी वह स्थान बँगलेसे लगभग दो मील था। परन्तु इस भयसे मन सशंकित था कि बगलकी घनी झाड़ियोंसे क्रुद्ध शेर कहीं हमलोगोंपर हमला न कर बैठे।

गन्तव्य स्थानपर पहुँचकर आशा यह थी कि इसबार मचान कुछ ऊँची और सुदृढ़ बनी होगी, किन्तु यह मचान भी अत्यन्त नीची तथा अरक्षित स्थलपर थी। दूसरे उसपर चढ़नेके लिए कोई सीढ़ी भी न थी। बेड़ेपर केवल कुछ बल्लियाँ बँधी थी जिनके सहारे बड़ी कठिनाईसे चढ़ा जा सकता था।

हाँका :

यहाँका हाँका मिर्जापुरके जंगलोंसे ठीक विपरीत था।

वहाँ जंगल और जानवरके अनुसार दो सौ आदमियोंसे लेकर ५–६ सौ आदमियों तकके साथ लगभग मील भरसे हाँका प्रारम्भ करते हैं। शेर यदि मनुष्यभक्षी हुआ तो गाजे-बाजेके साथ अधिक हँकवे वालोंकी आवश्यकता होती है और अधिक दूरीसे हाँका आरम्भ करते हैं, किन्तु यहाँ तो बीस-पचीस मनुष्योंको ही लेकर जंगलके छोटे-छोटे टुकड़े ही हाँके जाते हैं।



बाएँ से लेखक की बड़ी पुत्री कु० प्रतिभा, बड़े पुत्र श्री प्रतापवर्धनदेव तथा छोटी पुत्री कु० उर्मिला

इन जंगलोंमें जानवरोंके हाँका तोड़कर निकल जानेकी विशेष सम्भावना रहती है। कारण यह है कि यहाँ नीचे ऊपरसे निकल जानेके बहुतसे मार्ग हैं। अतएव यहाँ अच्छे ठोंक वालोंकी विशेष आवश्यकता होती है, जो प्रत्येक रास्तोंके वृक्षोंपर चढ़कर बहुत सावधानीसे बैठें। और जब जानवर उधरसे कटकर निकलना चाहें तो पेड़ ठोंक दें कि वह घूमकर फिर सीधे रास्ते पर हो जाय। परन्तु वहाँके ठोंकवाले अनुभवी भी न थे और संख्यामें भी कम थे। ऐसा पीछेसे ज्ञात हुआ।

हमलोगोंको मचानपर बिठाकर हँकवेवाले जंगलके उस छोटे टुकड़े-को हाँकने चले गये जिसमें शेरके रहनेका अनुमान था। थोड़ी ही देरमें हाँका आरम्भ हो गया। दस मिनट भी नहीं बीते कि एक बारगी बहुत कोलाहल हुआ, जिससे यह प्रतीत हुआ कि शेर है अवश्य और हँकवेवालोंने उसे देख भी लिया है। तभी तो इतना शोर मचा रहे हैं। फिर तो हमलोग तैयार होकर बैठे। परन्तु फिर तुरन्त ही हल्ला शान्त पड़ गया और शेर भी सम्मुख नहीं आया। हमलोग तरह-तरहके तर्क करने लगे कि क्या कारण है। हाँका धीरे-धीरे पास चलता चला आरहा था। हमलोग स्थिर बैठे थे, क्योंकि प्रायः ऐसा देखा गया है, विशेषकर गर्मियोंमें, शेर हाँकेके साथ-साथ आते हैं। इतनेमें कुछ खड़बड़ हुआ और हमलोग समझे कि शायद शेर आ रहा है। परन्तु निकला क्या एक छोटा सा चौसिंहा हिरन। यद्यपि यह भी बहुत ही दुष्प्राप्य जानवर है तो भी शेरके हाँके पर बैठनेके कारण मैंने उसे मारना उचित न समझा। राइफलकी आवाज होते ही सभी जानवर न केवल चौकन्ने ही हो जाते हैं अपितु भाग भी खड़े होते हैं और शेर तो उस जंगलको यदि नरभक्षी न हुआ तो छोड़ ही देता है। थोड़ी देरतक यह चौसिंहा इधर-उधर घूमता रहा परन्तु हाँकेके निकट आते ही वह आगेकी ओर भाग गया।

हँकवेके आ जानेपर हमलोग मचानसे उतरे तथा उन लोगोंसे सब वृत्तान्त पूछे, जिससे पता चला कि हमलोगोंका अनुमान ठीक था। हाँकेमें शेर निकला अवश्य जब इन लोगोंने खूब जोरसे हल्ला किया था। परन्तु एक जगहकी ठोंककी निर्बलताके कारण बगलकी सूखी नदीमें कूदकर वह निकल भागा। इसप्रकार हाथमें आया शिकार निकल जानेसे हमें दुःख और क्रोध तो बहुत हुआ पर कर ही क्या सकते थे। हमने उस स्थानका निरीक्षण किया जहाँसे वह कूदकर भागा था। उस सूखी नदीके बालूमें शेरके पंजोंके निशान स्पष्ट देख पड़ते थे।

अब हमलोग आपसमें विचार विमर्श करते हुए लौटे कि किस प्रकार इस जानवरको घेरेमें लाया जाय। परन्तु किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच पाये। इन घटनाओंके कारण वह जानवर और दूर जंगलके अन्दर चला गया। वहाँके लोगोंकी सलाह हुई कि एक भैंसा कुछ दूर भीतरके जंगलमें बाँधा जाय तो कदाचित् वह पुनः हाथ लग सके। दूसरे दिन प्रातः भैंसा तो बाँधा गया परन्तु अहीरोंसे उस ओर गाय भैंस चराने जानेका निषेध नहीं किया गया। उनमेंसे एक पशु-समूहकी टोली जिसमें भैंसे अधिक थीं अपने पालकके निरीक्षणमें उसी ओर जंगलमें निकल पड़ीं।

यहाँ यह सन्देह होना स्वाभाविक हो सकता है कि जब शेर उन जंगलोंमें स्वच्छन्द, निर्विघ्न परिभ्रमण कर रहा है और एकाध बार अभिमुख भी हो चुका है तब ग्वालोंको सुरक्षाके किसी साधनके बिना अपने अपने पशुओंको चराने ले जाना कहाँ तक उचित है।

परन्तु यह कहना कि उनके पास रक्षाका साधन नहीं, नितान्त भ्रामक होगा। उनका सबसे बड़ा संरक्षक तो उनका वही भैंसोंका झुण्ड है जिनके भयसे शेर भी उनपर आक्रमण करनेका साहस नहीं करता। भैंस जातिकी यह विशेषता है कि वे शेरोंसे कभी भय नहीं

खाती। आवश्यकता पड़नेपर उलटे उनपर आक्रमण कर देठती हैं। शेर जब कभी घायल होकर जंगलकी किसी घनी झाड़ीमें छिपकर बैठ जाता है और बहुत कोलाहल करनेपर भी किसी प्रकार जब निकलता नहीं ऐसे समय भैंसोंके झुण्डकी सहायता लेनी पड़ती है। वे निर्भीकतासे हुँकारती हुई झाड़ीमें घुस जाती हैं और शेर उनके भयसे भाग खड़ा होता है और तब शिकारीको पुनः गोली चलानेका अवसर मिल जाता है। अतएव ग्वालबालोंको शेरोंका भय तबतक नहीं रहता जबतक वे इन भैंसोंके झुण्डके साथ हैं। भय तभी होता है जब शेर नरभक्षी हो। तब वह अवसर देखकर एकान्त पाते ही आक्रमण कर देता है।

दूसरे इन जंगलोंमें प्रायः चरवाहोंका शेरसे सामना हुआ करता है। परन्तु छेड़-छाड़ नहीं होती। दोनों ही अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं, जैसे जंगलके और सामान्य प्राणी हों। इसलिए वे एक दूसरेको देखनेके आदी हो जाते हैं। परिणामस्वरूप इनका भय जाता रहता है।

सन्ध्या समय चरवाहे जब छावनीपर लौटे तो उनसे ज्ञात हुआ कि शेरसे पुनः उनका सामना हुआ तथा इनके कोलाहलके कारण वह अपनी जान लेकर जगलमें भाग गया। इन लोगोंकी नादानीके कारण शेरको वशमें लाना दिन प्रतिदिन कठिन होता जा रहा था, अतः हमें किंचित् रोष आना भी स्वाभाविक ही था।

अतएव रात्रिमें यह निश्चय हुआ कि प्रातःकाल हमलोग स्वयं उस स्थानपर पहुँचे जहाँ भैंसा बँधा था और चरवाहोंका शेरसे सामना हुआ था। निश्चयके अनुसार वहाँ पहुँचनेपर देखा गया कि भैंसा जहाँका तहाँ बँधा खड़ा था और शेरका नामोंनिशान न था। चारों ओर बहुत ढूंढनेपर जामुनके कुंजमें बच्चे सहित एक संभरी आधी खायी हुई अवस्थामें मिली। अनुमानसे प्रतीत हुआ कि सम्भव है कि चर-वाहोंसे भागते हुये शेरकी इस सम्भरीसे मुठभेड़ हो गयी फलतः उसे मुँहमांगा शिकार मिल गया, जिससे जल्दीमें अपनी बुभुक्षाको थोड़ेमें

ही शान्तकर वह वहीं कहीं झाड़ीमें छिप गया हो। इस आशयसे कि कदाचित् संध्या होनेके पूर्व ही "मरी" पर वह पुनः निकल आवे, अतः पासमें हम एक मचान बनवाने लगे।

इतनेमें मध्याह्नका समय आ गया अतः उस गर्मीमें छावनी लौटनेकी इच्छा नहीं हुई। रसोइयाको भेजकर भोजन व एक घड़ा पानी वहीं मँगवा लिया तथा उसी जामुन कुञ्जमें भोजनकर दिन वहीं व्यतीत किया। जंगलके बीच चारों ओर पहाड़ोंसे घिरी होनेके कारण उस कुञ्जमें लू तो नहीं बह रही थी परन्तु गर्मी भीषण तो थी ही, यद्यपि छावनीसे तो यह स्थान कहीं अच्छा था।

तीन बजनेके उपरान्त मचान बनकर तैयार हुई और हमलोग शान्त भावसे पूरे दो घण्टे बैठे रहे। परन्तु जानवरकी कोई आहट न मिली। सन्ध्या होते देख और अधिक बिलम्ब करना उचित न होता। कारण छावनी वहाँसे लगभग दो मील दूर थी तथा जंगलमें रात्रि हो जानेसे मार्ग भी स्पष्ट नहीं देख पड़ता और पशुओंका भय भी अधिक हो जाता है। इसलिए सन्ध्या होते-होते हम छावनी लौट आये। इसके उपरान्त पूरे चार दिनतक जानवरकी कोई आहट किसीको नहीं मिली। शिकारियोंके कथनसे यह विदित हुआ कि जंगलके अन्दर १४-१५ मील पर एक "तेलहार कुण्ड" स्थान है। जानवर वहीं गया होगा। परन्तु थोड़े दिन बाद वह अवश्य लौट आयेगा। इस आशापर कई स्थानोंपर हमने भैंसे बँधवा रखे। यह जानकर कि शेर बहुत दूर जंगलके भीतर चला गया है एक भैंसा छावनीमें लगभग ५ मील दूरसे "समर्दह" नामक स्थानपर बँधवाया।

चरवाहे प्रतिदिन प्रातः सायं इन भैंसोंको दानापानी देनेके निमित्त जाते थे। परन्तु जब इन चार-पाँच दिनोंतक कोई भी समाचार नहीं मिला तो बहुत ही निराशा हुई और रोषमें मैंने अपने शिकारी मित्रको (जिसके भरोसे हम वहाँ शिकार खेलने आये थे) कुछ कटु शब्द भी

कहे। फलस्वरूप वे बिचारे स्वयं तुरन्त खोज करने निकले। कई घण्टों बाद वह लौटकर आये तथा यह समाचार सुनाया कि जानवर अपने जंगलमें पुन: लौट आया है।

उसके दूसरे ही दिन यानी जवाड़खोह पहुँचनेके पूरे दसवें दिन दूसरी जूनको हमें समाचार मिला कि "समदेह" का भैंसा टूटा। यह समाचार सुनते ही हमलोगोंके मुखोंपर प्रसन्नताकी लहर दौड़ गयी। परन्तु इसबार इस जानवरका अपने पासमें लानेके लिए पूरा प्रबन्ध किया गया। वहांके चुने हुए निर्भीक व्यक्तियोंको तथा समीपवर्ती गांवोंके भी युवा पुरुषोंको भी एकत्रित किया गया। उनको भलीभाँति पाठ पढ़ाया गया कि अमुक व्यक्ति अमुक वृक्षपर बैठेगा। फिर किसी प्रकार जानवरको अपनी ओरसे कटने न देना। पूरी शक्ति लगाकर श्रम करनेपर जब जानवर मिल जायेगा तो विशेष इनाम दिया जायेगा। इस प्रकार उन्हें समझा-बुझाकर हमने प्रस्थान किया।

हमारे सम्मुख सबसे बड़ी कठिनाई उस प्रचण्ड गर्मीमें ५ मील जानेकी थी। जैसा पहले कह आया हूँ यहाँके मार्ग बहुत ही बीहड़ हैं। वहाँकी जनताने विशेष-विशेष स्थानोंके विचित्र-विचित्र नाम रख लिये हैं। एक स्थानका नाम मुझे स्मरण है जिसे "नक-फुलवा" कहते थे। उसकी ऐसी चढ़ाई है कि थोड़ी ही दूर चढ़ते-चढ़ते श्वांस फूलने लगती है और यदि लाठीका सहारा न लिया जाय तो फिसलनेका भी भय रहता है।

सौभाग्यवश मेरे लिये वहाँ एक प्रकारकी डोली मिल गयी जिससे हमारी समस्या बहुत कुछ हल हो गयी। यद्यपि उसपर थोड़ी भी देर बैठे रहने में बहुत ही असुविधा होती थी तथापि उससे बहुत कुछ सहारा तो हो ही गया। बारी-बारीसे हम तीनों ही उसपर चढ़ लेते थे।

दिनका भोजन हमने बहुत ही हलका किया था परन्तु दोपहरकी प्रचण्ड गर्मीमें चलते-चलते हमलोगोंका बुरा हाल हो गया। एक ओर

भीषण अग्निवर्षा, दूसरी ओर विकट मार्गने हमारा सारा उत्साह फीका कर दिया। साथ रखी हुई बोतलसे पग-पगपर जलसे गला सींचना पड़ता था। कुछ दूर चलकर वृक्षकी छाँहमें कुछ क्षण विश्राम कर लेते थे। परन्तु दूर जाना था, अतएव कहीं भी बिलम्ब नहीं कर सकते थे। यथासम्भव जल्दी-जल्दी बढ़ते गये तो भी निर्दिष्ट स्थान-पर पहुँचते-पहुँचते चार बज गये। मार्गका अन्तिम भाग तो अत्यन्त दुरारोह था। उस सकरे पथिक-मार्गपर छोटे-छोटे उपले बिछे हुए थे, जिनपर पैर पड़ते ही फिसल जाना पड़ता था, तथा उसके दूसरी ओर बड़ी गहरी खाई थी। उधर फिसलनेसे हड्डी भी चकनाचूर हो जाती। पत्नीका भी हाथ पकड़े परमात्माका स्मरण करते-करते उस बोहड़ वन-पथको भी किसी प्रकार सकुशल पार कर ही गये और मचानके निकट पहुँचे।

यह मचान भी पहाड़की आधी ऊँचाईपर बँधी थी। इसका पिछला हिस्सा तो केवल ६ फीट ऊँचा था और सामनेकी ओर आठ फीट रही होगी। परन्तु इसबार चढ़नेके लिए सीढी बना दी गयी थी जिससे ऊपर चढ़नेकी सुविधा हो गयी थी। किन्तु मचान पुरानी बनी हुई थी जिससे उसके बन्धन ढीले होकर सूख गये थे। पुराने बंवरके बन्धन सब जर्जर हो गये थे। उस अवस्थामें उसपर बैठना धोखेका पूरा सामना करना था। संयोगवश मेरे जेबमें रस्सीका एक छोटा बंडल था, जिसे निकाल-कर जल्दी-जल्दी बंधवाना शुरू किया और थोड़ी नयी बंवर (सूखी लता) भी मँगवाकर यथासमय उससे भी बँधवानेका शीघ्र प्रयत्न किया। समय भी हो गया था। अतः वहाँ किसी प्रकारका हल्ला नहीं कर सकते थे। सभी कार्य मन्द स्वरमें ही तथा इशारोंसे ही हो रहा था कि इतनेमें हांका बोल दिया। दो चार ठोंकवालोंको, जिससे हम मचान ठीक करवा रहे थे और जिनको आसपास निकासीके स्थानोंके वृक्षोंपर बैठना था उन्हें शीघ्र बिदा किया और उस आधी बँधी हुई मचानपर

पहले अपनी पत्नीको तब मामाजीको पश्चात् शिकारी मित्रको चढ़ाया और अन्तमें मेरे चढ़ते-चढ़ते शेरके गर्जनका आवाज लगो।

मचानपर तो हमलोग सकुशल बैठ गये परन्तु थोड़ी-थोड़ी देरमें मचानके पुराने बन्धन एक-एक करके चट-चट टूटने लगे। हमारे शिकारी मित्र तो झटसे सटे हुए वृक्षके ठूँठपर बैठ गये। परन्तु उस समय हमलोगोंके मनोंकी क्या दशा थी उसकी कल्पनाकी जा सकती है। मचान आगेकी ओर लटकी चली जा रही थी। हम तीनों यथासंभव पीछे सीढ़ीके सहारे होनेका प्रयत्न कर रहे थे। मचानके पुराने बन्धन करीब टूट चुके थे केवल अपनी रस्सी तथा कतिपय नये बँवरोंके सहारे ही वह टिकी हुई थी। परन्तु अब ये भी टूट चले थे और मचान अधोमुख हो चली। मैंने उतरनेका प्रयत्न किया जिससे उसका बोझ हल्का हो जाय परन्तु साथियोंने मुझे रोका तथा हाथ पकड़ लिये। जल्दीसे मेरे आश्वासन देनेपर उन्होंने मेरा हाथ छोड़ दिया मैंने पुनः अनुरोध किया कि कृपाकर आपलोग इस समय मेरा हाथ न पकड़ें, नहीं तो बन्दूक चलानेमें मुझे बड़ी अड़चन होगी और मुझसे सटकर भी न बैठें। इतनेमें दूरसे जानवर आते देख पड़ गया। मुश्किल में १० मिनट हमलोग मचानपर बैठे होंगे कि लगभग ५०० गजपर जानवरकी झलक देख पड़ गयी।

उस समय जंगल बिलकुल सूखा था। सब वृक्षोंके पत्ते झड़ गये थे केवल कतिपय वृक्ष जैसे जामुन आदिमें नये पत्ते आ गये थे। इस कारण जानवर हमें दूरसे ही देख पड़ गया।

वह पगडण्डी पकड़े सोधे हमलोगोंकी ओर चला आ रहा था कभी छोटी-मोटी झाड़ियोंमें ओझल हो जाता जाता था। पगडण्डी जैसे-जैसे मुड़ती थी वैसे ही वह भी कभी दायें कभी बायें होता हुआ परन्तु पगडण्डी पकड़े हुए ही प्रायः सीधे चला आ रहा था। पगडण्डी अपनी मचानके वृक्षसे सटकर ही निकलती थी। अतएव उसके इधर-उधर

भटकनेकी सम्भावना कम थी और इसीलिए मैं भी हाथ रोके बैठा था कि जानवर अतिनिकट आ जावे जिसमें निशानेमें चूक न हो। जानवर भी इधर-उधर कट जानेकी चेष्टा नहीं रहा था। शीघ्रतासे सीधे ही चला आ रहा था। एक बार कुछ क्षणोंके लिए मचानसे लगभग १०० गजकी दूरीपर रुका। मचानका हाल देखते हुए निश्चय किया कि अभी गोली न चलायें। एक ओरसे मामाजी और पीछेसे शिकारी मित्र भी कह रहे थे कि गोली चलाइये। मेरी राइफल कन्धेपर लगी ही थी। जैसे-जैसे जानवर दाहिने-बायें घूमता हुआ चला आ रहा था वैसे-वैसे मेरी राइफल भी उसके साथ घूमती थी। परन्तु जानवर दूर था और आकारमें छोटा लगता था जैसे कोई पट्ठा (युवा) जानवर हो। (पीछेसे पता चला कि बाघिन है) उस टूटती हुई मचानसे निशाना चूक जानेका सन्देह था। अतः हाथ रोक लिया।

मिनट भरके अन्दर वह अति निकट आ ही गयी। पथरीला रास्ता था। कहीं-कहीं छोटी-मोटी चट्टानें थीं जिनको लाँघती-कूदती वह चली आ रही थी। मचानसे वह जब केवल १५-२० गज रह गयी होगी कि रास्ते की एक छोटी चट्टानको डाँकनेके लिए वह जैसे ही कूदी कि वैसे ही मैंने गोली चलायी। गोलीके धक्केसे वह पुनः एकदम पीछे उलट गयी।

हमारे शिकारी मित्रको अन्देशा हुआ कि गोली कदाचित् ठीक न बैठी हो तो दोहरानेके लिए उन्होंने बार-बार अनुरोध किया और जब उनका मन न माना तो उन्होंने स्वयं ही फायर कर दिया। परन्तु उनकी गोली एक वृक्षके तनेमें लगी। यद्यपि मामाजी भी निशाना लिए बैठे थे परन्तु अनावश्यक समझ उन्होंने भी गोली नहीं चलायी। मेरी यह गोली ठीक बैठी थी इसलिए दोहरानेकी आवश्यकता न हुई। परन्तु एक बार दोहरा लेना समुचित रहता है। कई बार मृत्युके पूर्व चेतन होकर जानवर प्रायः घातक चोट कर बैठता है और "मरती बार कटक संहारा" चरितार्थ कर देता है।

इस बातका ध्यान रखते हुए तथा मचानको लटकती देख मैं धीरेसे उतर आया। मामाजीने भी उतर कर ५–७ ढेले लेकर पुनः मचान पर चढ़कर उसपर फेंका। परन्तु जब वह बिल्कुल ही हिली-डुली नहीं तो निश्चय हो गया कि वह "पंचत्वं गता।" हमलोगोंके उतरते-उतरते मचानका अगला हिस्सा पूरा ही लटक गया।

इतनेमें हंकवेवाले भी पास आ गये और सामने शेरनीको पड़ी देख उन्होंने भी दूरसे ही ढेले फेंकना आरम्भ किया। किन्तु जब वह बिल्कुल ही हिली नहीं तब वे उसके पास आये। इधर हमलोग भी शेरनीके पास पहुँचे और उसको उलटकर गोलीका निशाना देखा। भारी गोली ठीक छातीमें लगकर करीब-करीब पार हो गयी थी केवल पीठके चमड़ेमें जाकर अटकी थी।

दस दिनके कठिन परिश्रमके उपरान्त सफलता प्राप्त हुई जिससे हमलोग बहुत प्रसन्न थे। मामाजी व शिकारी मित्रसे अपने धैर्य तथा निशानेकी प्रशंसा सुन स्वभावतः मन प्रसन्न हो उठा। पिछले कई बार जानवरोंको मचानके अति निकट आने नहीं दिया था। कई कारणोंवश पहली बाघिनको दूरसे ही मारना पड़ा था जिससे कुछ धोखा हो गया था। अतः इस बार धीरतासे काम लिया।

जानवरको उठवाकर लौटानी यात्रा प्रारम्भ की। यद्यपि सायंकाल-की बेला होनेमें विलम्ब न था परन्तु उस समय भी वायुमें असह्य उष्णता थी। दूसरे ५ मील लौटना था। जल्दी-जल्दी आनेमें हमलोंगका बुरा हाल हो गया। छावनी पहुँचनेमें जब केवल २०० गज रह गये तो हमारे पूज्य वयोवृद्ध मामाजी जिनकी अवस्था उस समय ६५ वर्षकी थी अतिश्रान्त होकर एक वृक्षके नीचे लेट गये। पूरे एक घण्टे विश्रामके बादमें उन्हें छावनी ला सका। इतनी अवस्था होनेपर भी इतनी दौड़-धूपकर लेना बहुत ही प्रशंसनीय है।

दूसरे ही दिन हमें लौटना था। अतः चमंकारोंको शीघ्र बुलवाकर बाघिनका निस्त्वचीकरण कराया गया (चमड़ा निकलवाया गया)। शेरनीका समस्त पृष्ठभाग नीला पड़ गया था, त्वचामें जहाँ गोली अटकी पड़ी थी। गाँववालोंको परिहासका अवसर मिल गया। वे लोग कहने लगे कि बाघिन बेचारी पहाड़से नीचे पीठके बलपर गिर गयी तभी तो उसकी पीठ इतनी नीली पड़ गयी है। गोली तो पीछेसे चला दी गयी होगी।

गोली निकालने पर देखा गया कि उसका आकार गेंदाके फूलके समान छत्राकार हो गया था। गेंदेके फूलकी तो नीचेकी डण्डी देख पड़ती है। परन्तु इसकी तो वह भी नहीं देख पड़ती थी। बहुत ध्यानसे देखनेपर उसका निचला भाग थोड़ा-सा देख पड़ता था। मैंने अनेकों प्रकारकी गोलियाँ चलाई हैं परन्तु जैसा इस (Magnum) मैग्नम ३७५ बोरकी ३०० ग्रेनवाली गोलीने आकार (Mushroom) किया वैसा किसी गोलीका नहीं देखा। बहुतसे सूची-पत्रोंमें कतिपय राइफलोंकी चली हुई गोलियोंके आकार विज्ञापनार्थं छपे रहते हैं, परन्तु ऐसा फूल बन जाना आजतक देखनेमें नहीं आया।

अगले दिन प्रातःकाल ही हमलोगोंने खुशी-खुशी घरकी ओर प्रस्थानकर दिया। उस खुले हुए स्थानमें दिनरात लू चलती थी। गर्मियोंमें वहाँ जानेकी सलाह कभी न दूँगा लौटते समय भी हमें भयंकर लूका सामना करना पड़ा। इसके विपरीत धूलकी आँधीसे सारा मार्ग ढक जाता था जिससे मोटर चलानेमें बड़ी कठिनाई होती थी। परन्तु पत्नीकी बुद्धिमत्ताके कारण चलती हुई मोटरमें भी हम क्षण-क्षण-पर आमका पन्ना पीते हुए सकुशल घर लौट आये।

डोंगियाकी नर-भक्षिका :

हमारे छोटे कुमार राज्यवर्द्धन देवीकी ही कृपासे किस प्रकार कालके मुखसे बचे—उस घटनाका उल्लेख भी कर देना आवश्यक समझता हूँ।

इधर कुछ दिनोंसे स्वस्थ न रहनेके कारण तथा बच्चोंके वन-भ्रमणार्थ भी मार्च, १९४७ के आरम्भमें सबसे सुगम सुखद एवं प्रिय स्थान डोंगियाके लिए मामाजी सहित सपरिवार प्रस्थान किया। फाल्गुन मासका अन्त था और होली अति निकट थी। इस बार ग्रीष्म ऋतुका आगमन और वर्षोंकी अपेक्षा कुछ जल्दी ही हुआ। अहरौरा पहुँचनेके कुछ पूर्व ही एक स्थान पर गन्नेका रस निकल रहा था जिससे हम सबने अपनी प्यास बुझायी परन्तु मेरे लिए तो वह रस विष समान हो गया। डोंगिया पहुँचनेके दूसरे ही दिनसे मुझे अतिसारका आक्रमण हो गया जिसकी बहुत चिकित्सा करने पर भी (वहाँ ठहरने तक) कोई लाभ न हुआ। फलतः उपवास करते-करतेमें अत्यधिक निर्बल हो गया।

डोंगिया पहुँचते ही समाचार मिला कि कुछ दिनोंसे जंगलमें बाघका एक जोड़ा आया हुआ है जो चूनादरीमें एक लकड़हारे पर चोट भी कर चुका है। इस सूचनासे मनमें सन्देह हुआ कि बहुत सम्भव है ये जानवर नरभक्षी हों। वहाँके तथा पड़ोसी ग्रामोंके कतिपय निवासियोंने उधरकी सड़कों पर अकेले चलना बन्दकर दिया था। आतङ्कका साम्राज्य था।

बंगलेसे चूनादरी लगभग ३ मील दूर होनेसे और बंगलेके निकट जानवारोंके कभी नहीं आनेसे हमलोग निश्चिन्त परन्तु सतर्क भी थे। बच्चों तथा नौकरोंको भी बंगलेसे दूर नहीं जाने देते थे।

तीन दिन यों ही बीत गये। शिकारके निमित्त हम कहीं दूर नहीं गये। चौथे दिन हमारा पुराना शिकारी "सुन्दर" कौल आया। उसने हमारा आना सुना तो बंगलेपर आनेके पूर्व ही जंगलोंमें घूमता-घामता जानवरका पता लगानेका प्रयत्न करता आया। उसके दरियानेसे (खोजसे) यह विदित हुआ कि बाघ चूनादरीमें नहीं है जहाँ इनके रहनेके कुछ स्थान भी हैं। साथ ही उसने यह भी सूचना दी कि उन दोनों जानवरोंमें-से केवल एक हीका पता लग रहा है और यह पशु भी स्वच्छन्द रूपसे पास हीकी कुछ दरियोंमें घूमता रहता है परन्तु उसके

रहनेके किसी भी निश्चित स्थानका पता नहीं चला। बंगलेके निकट भी कहीं-कहीं पंजे देखे गये। परन्तु उन दूरस्थ स्थानोंमें जहाँ उसका रहना अधिक था जमीन पथरीली होनेके कारण उसके पंजोंके चिह्न भी बहुत कम देख पड़े।

इधर अपनी अस्वस्थता तथा निर्बलताके कारण जानवरको दरियानेमें मैं शिकारीको सहायता भी न दे सका। फलतः यह भी अनुमान न हो पाया कि जानवर किस जंगलमें तथा किस ओर है। जंगलमें पैदल घूमनेका बल न होनेसे केवल मोटरसे ही सड़कों पर मैं प्रातः सायं-चक्कर काटता रहा। परन्तु जानवरका कुछ पता न चला।

पाँचवे तथा अन्तिम दिन मध्याह्न भोजनोपरान्त शिकारी यह कहने आया कि आज आप सबके साथ थोड़ा पैदल भी घूम लें। पास ही एक दरी है जहाँ कभी-कभी भालू और चीते निकल आते हैं। यदि कुछ दिखलायो दिया तो आसानीसे आप राइफल चला सकते हैं। मैंने उसपर आपत्तिकी कि बच्चोंको साथ ले चलनेमें धोखा भी हो सकता है। सम्भव है बाघिन हो निकल आवे। उसपर उसने उत्तर दिया कि उसका पंजा बंगलेके दक्षिण ओर यानी दूसरी ओर देखा है जिससे स्पष्ट है कि वह दूसरी ओर जंगलमें चली गयी हैं। मैंने कहा कि वह लौट भी आ सकती है। सुन्दरने मेरी बात काटते हुए प्रत्युत्तर दिया कि दो दिन बाद लौट आ सकती है परन्तु आज ही लौट आवे इसको सम्भावना कम है। इतना सुननेपर पत्नीने भी चलनेका आग्रह किया और बच्चोंकी भी साथ चलनेकी उत्सुकता देख पुनः मैं विरोध न कर सका और "मौनं सम्मतिलक्षणम्"से अनुमति दे दी।

परन्तु जबतक दरीपर पहुँचते नहीं पूरे मार्ग भर शिकारीसे मैं इसी विषय पर बहस करता रहा कि बहुत सम्भव है कि जानवर लौट आया हो। जबतक हमलोग बांधपर चलते रहे शिकारीके साथ इसी विषय पर तर्क कर रहे थे किन्तु वह अपनी बातपर दृढ़ था कि जब इसी प्रातः

वह इस जंगलको छोड़कर दूसरे जंगलमें चला गया है तो पुनः उसका उसी दिन लौट आना असम्भव सा है।

आधे बाँध जानेके बाद जहाँसे नहरके पानी निकलनेका फाटक है वहाँसे हमलोग भी बाँधसे उतरकर नदीके किनारे-किनारे चले। थोड़ी ही दूर पर एक रमणीक स्थान है जहाँ छोटा-सा झरना गिरता है तथा चट्टान और वृक्षोंकी छाया भी है, प्रायः हम लोग यहाँ भी स्नान करते तथा दिनका भोजन भी बनाते थे। भोजनान्त तीसरा पहर भी वहीं छायामें विश्राम करते थे।

शिकारी उस स्थानको छोड़कर और आगे बढ़ा। जंगल कुछ और घना तथा विस्तृत होने लगा। अब मुझे एक और सन्देह हुआ कि जब इतना बड़ा जंगल वाम, पार्श्व, पृष्ठ और सन्मुख भी है तो जानवर नदी पार केवल दक्षिण ओरसे ही निकले, निश्चयेन यह कैसे कहा जा सकता है। बहुत सम्भव है कि वह पीछेसे अथवा वाम भागसे निकल आवे। परन्तु शिकारीने इसका भी खण्डन किया कि जानवर यदि इधर हो तब भी वह इस ओर नदी लाँघने नहीं आवेगा। किन्तु पीछे ही घने जंगलमें चला जायेगा। अन्ततोगत्वा मेरी दोनों ही बातें सत्य निकलीं जो आगे विदित होगा।

बाँधसे लगभग एक मील जानेके उपरान्त किनारेके ऊपर एक सेमल वृक्षके नीचे चट्टानोंपर शिकारीने हमलोगोंको बिठाया और कहा कि इन्हीं चट्टानोंके नीचे कुछ माँदे हैं जिनमें प्रायः भालू अथवा चीते रहते हैं। कभी-कभी शेर भी एक दो दिनके लिए यहाँ अपना रहना बना लेते हैं। इस समय उनमें कोई जानवर है भी निश्चित रूपसे यह कहा नहीं जा सकता था। माँदमें-से जानवर निकलकर अपनी प्यास बुझाने पहले पानी पर ही आते हैं अथवा माँदके बाहर ही निकल-करथोड़ी देरके लिए बैठ जाते हैं तथा चारों ओर आहट लेकर निश्चिन्त होकर आगे बढ़ते और पानीपर भी जाते हैं। तदुपरान्त

अपनी इच्छानुसार चाहे उसपार या इसीपार जंगलोंमें भोजनार्थ निकल पड़ते हैं।

हमलोग चट्टानों पर लाइनसे बैठे। १५-२० फीट नीचे माँदे थी, जिनके आगे थोड़ा और नीचे पानी बहता था। उसपर पुनः पहाड़ और जंगल था। दृश्य भी अच्छा था तथा जानवरोंपर गोली चलानेकी भी सुगमता थी।

मामाजी हमारे बाँयी ओर लगभग तीन गज दूर बैठे। मेरे दाहिनी ओर निकट ही मेरे ज्येष्ठ पुत्र प्रतापवर्द्धन और पीछे सटकर मेरी पत्नी बैठीं। उनके पूछने पर कि राज्यबर्द्धन कहाँ बैठे मैंने कहा कि उसे अपनेसे सटाकर पीछेकी ओर बैठाओ। वहाँ हम बोल तो सकते नहीं थे केवल संकेत से, सो भी बहुत धीरेसे सारी बातें बतानी थीं। समय भी हो चला था। अपनी-अपनी जगहोंपर हमें शान्तिसे किन्तु सतर्क होकर शीघ्र बैठ जाना था। हमलोगोंके पीछे एक ओर बंगलेका टिडैंल तथा दूसरी ओर सुन्दर शिकारी बैठा।

मैंने समझा कि सबलोग यथास्थान बैठ गये होंगे और राज्यवर्द्धन भी अपनी माँसे सटकर उनके पीछे ही बैठा होगा। अतः मैं अपने सामनेके पत्तोंको थोड़ा हटाने लगा कि जिससे जानवर स्पष्ट दीख पड़े और गोली चलानेमें भी आसानी हो।

इस बीच स्वभाववश मैं चारों ओर देखता ही जाता था। किन्तु जब मैंने पीछेकी ओर दृष्टि डाली तो एक बार हृदयकी गति रुक गयी और मैं किंकर्तव्यविमूढ़-सा बैठा रह गया कारण यह कि मेरे कनिष्ट कुमार श्री राज्यवर्द्धनजी जिनकी अवस्था उस समय केवल ९ वर्षकी थी हमलोगोंसे लगभग ५ गज पीछे चुपचाप अकेले बैठे थे। पीछे देखनेसे ज्ञात हुआ कि उसको पासमें बैठनेकी जगह ही न थी। अत्यन्त संकुचित स्थानमें बड़ी कठिनाईसे पत्नी ही बैठी थी और उनके पीछे ही कांटेदार छोटी झाड़ी थी और फिर कुछ फटे हुए दर्रे भी थे। जबतक कि मैं

अपनेको स्थिर और शान्त करूँ तथा उसे पास बुलाऊँ तबतक आगे नीचे कुछ थड़खड़ाहटका शब्द सुनकर मैं पुनः घूम पड़ा और बड़े ध्यान-पूर्वक नीचे देखने लगा कि वहाँ कोई जानवर तो नहीं निकल पड़ा है।

उधर राज्यवर्द्धनको उसी समय अपने पृष्ठभागपर गर्म-गर्म श्वासोंका भान हुआ। उसने जो मुड़कर देखा तो झाड़ीसे सटी अपने बिल्कुल ही निकट एक बाघिनको खड़ी पाया। परन्तु शिकारपर बोलना मेरे द्वारा मना किया हुआ था, अतएव उस अवस्थामें भी उसने न तो मुखसे शब्द निकाला और न वहाँसे हटा। टिंडेल और सुन्दर दोनों ही इससे कुछ दूर थे इसकी ओर उनकी पीठ थी अतः वह उन्हे इशारा भी नहीं कर पा रहा था। इतनेमें टिंडेल जिसके सामने झाड़ी होनेसे आगे देख कम पड़ता था अतः धीरेसे राज्यवर्द्धनके आगे घिसक आया। उसके पास आते ही राजवर्द्धनको अवसर मिला। उसने झुककर उसकी कमीज पकड़कर अपनी ओर आकृष्ट किया तथा अंगुलियोंसे पीछे संकेत किया। टिंडेल एकबार तो जानवरको इतने पास देखकर घबड़ा गया परन्तु तुरन्त सम्भलकर उसने सुन्दरको पकड़ा और पीछे शेर दिखालाया।

इधर मेरे मामाजी इनलोगोंकी खड़खड़ाहट और शब्द सुनकर जो पीछे घूमे तो यह दृश्य देखकर वे भी एक प्रकार संज्ञाशून्यसे हो गये। इधर बाघिनने अपनी मस्तीमें इन लोगोंकी दृष्टि व वार्तालापकी उपेक्षा करते हुए राज्यवर्द्धनपर झँपने (कूदने) के लिए अपने अगोंको समेटा।

इतनेमें सुन्दरने मेरी पत्नीकी साड़ी पकड़कर खींची कि "सरकारको जल्दी घुमाइये"। पत्नीका हाथ पीठपर पड़ते ही मैंने तत्क्षण सम्मुख दृष्टिपात किया कि इन लोगोंने कोई जानवर अवश्य देखा है जो मुझे दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है। इतनेमें धीरेसे परन्तु तीव्र स्वरमें पत्नीने कहा कि "जल्दी पीछे देखिये"।

राइफल सहित ज्यों ही मैं घूमा तो देखता क्या हूँ कि एक विशाल-काय विकराळ बाघिन विस्फारित आग्नेय अरुण नेत्रोंसे बच्चेपर झंप

करने जा रही है। मेरे घूमते ही जैसे ही मेरी उसकी दृष्टि चार हुई उसने अपना सिर झुकाया। मेरी राइफलकी नली भी उसके सिरसे सन्धानित थी। परन्तु मेरे तथा लक्ष्यके बीचमें राज्यवर्द्धनका मस्तक था। यह देखकर राज्यने अपना सिर झुकाया किन्तु मुझे राइफल चलानेका साहस न हुआ। निदान मुझे राइफलकी नली नीची करनी पड़ी। परन्तु मेरे नेत्रोंसे अग्नि-ज्वाला निकल रही थी। कुछ लोगोंका तथा मेरे ज्येष्ठ भ्राताका भी कथन है, जो अपने समयमें एक सुयोग्य सफल शिकारी थे, कि क्रोधित होनेपर यदाकदा मेरे नेत्रोंसे एक प्रकारकी ज्वाला निकलने लगती है और हिंस्र पशु भी मेरी उस दृष्टिको देखकर भले ही वह सामान्य ही क्यों न हो मुझे अपना संहारक समझता है। जो भी कारण हो उससे मेरी दृष्टि मिलते ही उसकी आँखोंकी ज्योति मलिन-सी पड़ी तथा उसकी झाँपनेकी क्रिया भी सहसा अवरुद्ध हो गयी एवं त्वरित वेगसे पराङ्मुख हो वह आँखोंसे ओझल हो गयी। उसके परावृत्त होते ही झाड़ी आदि लाँघता हुआ मैं उसके पीछे दौड़ा। पत्नीने मेरी गतिरोधकी अपनी चेष्टा वृथा तथा विफल होते देख कोलाहल किया तथा सुन्दरको मुझे रोकनेको कहा। वह दौड़कर मेरे पांवोंसे लिपट गया। पुनः पत्नीने मेरी बाहें भी पकड़ लीं। अपनेको छुड़ानेकी मैंने बहुत चेष्टा की परन्तु उनलोगोंने मुझे किसी तरह छोड़ा ही नहीं। एक ओर राज्यवर्द्धनको अपने हृदयसे लगाये हुए वह कहती जा रहीं थीं "होशमें आइये कहां उसके पीछे दौड़े जा रहे हैं" जिसमें शिकारीके भी शब्द थे। अन्तमें मेरा रोष कम हुआ। चित्तको सम्हाला तथा स्नेहयुक्त वाणीमें मैंने कहा कि अच्छा अब आपलोग मुझे छोड़ दें। जानवर तो उल्टे पाँव ऐसा भागा कि कहीं उसका नामोनिशान भी न था। अतः अब पीछा करनेसे भी क्या लाभ।

मेरे वचन देनेपर उनलोगोंने मुझे छोड़ा और तब पत्नीने ही पानीकी कुप्पी, मामाजीकी टोपी इत्यादि सारा सामान उठाया। उस समय किसीको इन वस्तुओंका भान ही न था।

सन्ध्या होनेमें विलम्ब न था। अतः हमलोग बँगलेकी ओर लौटे। लौटते समय मार्गमें दृष्टि डालनेपर यह ज्ञात हुआ कि बाघिन कुछ दूरसे ही हमलोगोंके पीछे चली आ रही है। इस बार मैंने सबको अपने आगे किया और सबसे पीछे-पीछे मैं चला। इस प्रकार हमलोग सकुशल बँगले लौट आये और उस जगन्नियन्ता परमात्माको अनेकों धन्यवाद दिये जिसने राज्यवर्द्धनको सद्यः कालके मुखसे बचा लिया।

सुन्दर बार-बार अपनी गलतियोंको मानते हुए पछता रहा था तथा हमारी दोनों बातोंकी सत्यताकी पुष्टिकर रहा था।

उपसंहारमें इससे शिक्षा मिलती है कि दो बातोंपर विशेष ध्यान रखना चाहिए। एक तो शिकारमें तब जाना चाहिए जब अपना स्वास्थ्य ठीक हो। विशेषकर उदरका ठीक होना नितान्त आवश्यक है। दूसरे जहाँ ऐसे बड़े जानवरोंके होनेकी आशंका हो वहाँ छोटे बालक अथवा अनभिज्ञ शिकारीको कभी साथ न ले जाय।

अब मैं अपने उन नवयुवक शिकारियोंको कुछ शिक्षा देनेका प्रयत्न करता हूँ जिसे वे शिकार खेलनेके पहले सीख लें और धोखा न खावें। अनुभवी लोग क्षमा करेंगे।

सर्वप्रथम अपनी बंदूकें बहुत यत्नसे रखा करें और उनको सर्वदा खूब सफाईकी हालतमें रखें। इसीपर इनका निशाना, प्राण व कीर्ति सभी निर्भर हैं। यदि नाल थोड़ी भी मैंली रही तो निशाना कभी ठीक नहीं लगेगा। लोग उसकी सफाई करनेसे जी चुराते हैं वे सभी अच्छे शिकारी न होंगे।

दूसरे शिकारपर जानेके पहले २५-५० गोलियाँ घरपर या कहीं सुरक्षित व निर्धारित स्थानपर लक्ष्य (Targel) पर चला लेनी चाहिए जिससे कि वे हर प्रकारसे अभ्यस्त हो जावें। तथा अपनी बन्दूकसे भलीभाँति अवगत हो जावें और उसका पूरा बोध रहे। यदि बन्दूकमें

कोई दोष है तो उसको पहले ठीक करवा लें नहीं तो ठीक समयपर धोखा खानेमें आयेगा।

तीसरे बन्दूककी लबलबी (Triger) पर अंगुली कभी न रखें। चाहे बन्दूकमें गोली हो अथवा नहीं। उसपर अंगुली तब ही जानी चाहिए जब कि शिकार सामने हो और गोली तुरन्त चलानी हो। नहीं तो प्रायः धोखा हो जाता है और अनजानमें हो अपनेको ही या दूसरेको गोली लग जानेकी पूरी सम्भावना होती है। यदि शिकारके लिए बैठे हों तो वहाँ भी अकस्मात् गोली छूट जानेसे किसीको लग जानेका भय है और आवाज होनेसे सभी जानवरोंके भाग जानेका।

चौथे बन्दूककी नालका मुख कभी किसीको ओर न करें चाहे शिकारमें चलते हों अथवा घरपर बैठे हों या बन्दूक साफ करते हों। इसका ध्यान न रखनेसे बहुत ही आकस्मिक एवं दुखान्त दुर्घटनाएँ सुननेमें आयी हैं कि अमुक व्यक्तिको धोखेसे गोली लग गयी।

पाँचवें गोली चलानेसे पहले अच्छी तरह देख लें कि जिस पशुको मारना चाहते हैं वही सामने है। कभी-कभी ऐसा है कि एकदम प्रातः काल अथवा सन्ध्याकालमें जानवर साफ-साफ नहीं देख पड़ता। ऐसी अवस्थामें जानवर पहचानमें नहीं आता और है या नहीं यह भी सन्देहकी बात हो जाती है। कभी-कभी स्त्रियाँ महुआ बीननेके लिए बहुत सवेरे जंगलमें चली जाती हैं जो दूरसे अन्धेरेके कारण भालूके धोखेमें मारी जा सकती हैं अथवा जानवरोंकी माँदीने या बच्चे बड़े जानवरोंके भ्रममें मार दिये जाते हैं, जिस प्रकार श्री दशरथजीने जल भरते हुए ऋषिकुमार श्रवणको किसी मृगके भ्रममें मार दिया था। ऐसी अवस्थामें पशु चला भले ही जाय परन्तु बिना अच्छी तरह समझे व देखे कभी गोली न चलानी चाहिए।

छठे यह भी देख लेना चाहिए कि सामने मील भर तक कोई व्यक्ति अथवा मकान तो नहीं है नहीं तो प्रायः ऐसा होता है कि यदि जानवर-

को न लगी तो गोली पिन्नाती हुई बड़ी दूर निकल जाती है अतः मार्गमें जो भी मिलेगा वही उसका शिकार हो जावेगा। नदी पर तो कभी-कभी पानीमें टप्पा खाकर गोली और तेजी पकड़ लेती है और कभी सीधी न जाकर उसकी गति अतिवक्रकी हो जाती है अतएव बन्दूकके साथ बहुत सावधान रहना चाहिए।

सातवें बन्दूकमें पहलेसे कभी गोली भरी न रखें। जब शिकारपर चलाना हो तो तुरन्त चढ़ालें। प्रायः देखा गया है कि नदी नाले डाकते हुए या मचानपर चढ़ते-उतरते समय भरी बन्दूक अकस्मात् गोली छूट जाती है या हाथसे कभी बन्दूक छूटकर गिर जावे तो भी अकस्मात् गोली छूट जानेका भय है।

बन्दूकको व्यवहारमें लानेमें जितनी अधिक सतर्कतासे काम किया जाय वह थोड़ा ही है॥